ॐ

सरल संस्कृत व्याकरण

शब्द रूप, धातु रूप, पाणिनीय सूत्र रटने से मुक्त
एक मास में संस्कृत भाषा सिखाने वाली
सरल सुबोध व्याकरण प्रणाली

स्वामी शरण

पालीवाल प्रकाशन
पालीवाल भवन, 117/एच-1/02 पाण्डु नगर,
जे.के. मन्दिर के सामने, कानपुर - 208005

ॐ

पालीवाल प्रकाशन

उद्देश्य

वेद, वैदिक संस्कृति, इतिहास, योग, स्वास्थ्य, शिक्षा, नागरिक कर्तव्य तथा पर्यावरण संरक्षण सम्बन्धी शोध एवम् प्रकाशन

कृति : सरल संस्कृत व्याकरण　　लेखक : स्वामी शरण

प्रकाशक : पालीवाल प्रकाशन

सोसाइटी फार सोशियो इकोनामिक रिफार्म हेल्थ एण्ड एजूकेशन (रजि.) का उपक्रम

Society For Socioeconomic Reforms Health & Education

पालीवाल भवन, 117/एच-1/02, पाण्डु नगर,
जे.के. मन्दिर के सामने, कानपुर - 208005
सम्पर्क : 9839105629
संस्करण : युगाब्द 5112, माघ पूर्णिमा (सन् 2011 ई.)
मुद्रक : भक्ति प्रकाशन, कानपुर

© सर्वाधिकार : लेखक

ॐ

प्रस्तावना

समर्पित वेदोपासक श्री स्वामी शरण द्वारा प्रस्तुत सरल संस्कृत व्याकरण के माध्यम से समुचित अभ्यास कर एक मास में संस्कृत भाषा का प्रयोग आरम्भ किया जा सकता है। छात्र जीवन में हम सब मित्रों ने इसका लाभ उठाया भी है। उनका उद्देश्य सरलता से संस्कृत सिखाना है। संस्कृत को व्यवहार में अपनाने के बाद शास्त्रीय व्याकरण का गम्भीर अध्ययन किया जा सकता है।

इस प्रणाली में संस्कृत व्याकरण के मुख्य तत्वों को सरल सुबोध रूप में प्रस्तुत कर दिया गया है। इसमें शब्दरूप, धातुरूप तथा पाणिनीय सूत्र रटने की आवश्यकता नहीं होती है। दशकों के प्रशिक्षण अनुभव से इसमें निरन्तर सुधार भी हुआ है। इस पुस्तक में संयुक्ताक्षरों को भी स्पष्ट किया गया है जिससे उच्चारण तथा अर्थ समझने में सुविधा होगी। उपसर्ग, सर्वनाम, संख्या, अव्यय, विभक्ति, धातु तथा नित्य उपयोगी शब्दावली भी दी गयी है।

अनिकेत वेदभिक्षु स्वामी जी साधारण सामाजिक जीवन जीने वाले एकान्त स्वाध्यायी हैं। वेद तथा संस्कृत भाषा को जितने सरल रूप में उन्होंने जनसामान्य के लिए रोचक एवम् ग्राह्य बना दिया है, वह अनन्य सेवा है। देववाणी को जनवाणी बनाने की इस साधना के लिए हार्दिक शुभकामनाएँ।

डा. उमेश पालीवाल

पालीवाल भवन 117/एच-1/02, पाण्डु नगर, कानपुर - 208005

ॐ

विषय सूची

1.	संस्कृत भाषा तथा व्याकरण	6
2.	भाषा परिचय	22
3.	संयुक्त वर्ण तथा वर्तनी	28
4.	वर्ण शिक्षा	35
5.	शब्द रचना	40
6.	पद रचना	50
7.	नामिक प्रकरण : कारक	54
8.	नामिक विभक्ति	60
9.	सर्वनाम	73
10.	संख्या	86
11.	आख्यातिक : क्रिया प्रकरण	96
12.	सरल आख्यात पद : क्रिया रूप	101
13.	अष्टादश आख्यातिक विभक्ति	108
14.	आख्यातिक विवरण	123
15.	वाच्य प्रकरण	131
16.	समास प्रकरण	137
17.	सन्धि तथा प्रकृतिभाव	143
18.	प्रमुख धातुएं	151
19.	अव्यय	168
	नित्य व्यवहार शब्द	
20.	पुष्प	178
21.	विद्यालय	179

22. समय-दिशा-ऋतु 180
23. परिवार–सम्बन्धी 181
24. पात्र 183
25. संगीत 184
26. व्यापार 185
27. आभूषण 186
28. कार्य-कार्मिक-कार्यस्थल 187
29. उपयोगी वस्तु 189
30. शृंगार 191
31. युद्ध-शस्त्रास्त्र 192
32. ख़ेल 193
33. शरीर सम्बन्धी 194
34. चिकित्सा 196
35. वृक्ष-फल 198
36. भोजन 201
37. इतर खाद्य 204
38. वस्त्र - विस्तर 207
39. गृह-ग्राम-नगर 208
40. प्राणी 211
41. धातु-रत्न 213
42. विविध शब्द 214
43. हमारे प्रकाशन 215
44. आगामी प्रकाशन 216

ॐ

संस्कृत भाषा तथा व्याकरण

महत्व :- संस्कृत विश्व की प्राचीनतम, सर्वाधिक समृद्ध सशक्त तथा वैज्ञानिक भाषा है। विश्व का प्राचीनतम ज्ञान-विज्ञान तथा संस्कृति की धरोहर संस्कृत भाषा में ही सुरक्षित है। विश्व का प्राचीनतम साहित्य वेद भारतीय संस्कृति का मूल आधार तथा संस्कृत भाषा की अनुपम देन है। अतः मानवता के विकास के प्राचीनतम सोपान को सुरक्षित रखने के लिए संस्कृत भाषा का ज्ञान आवश्यक है।

वैदिक संस्कृत :- यह सर्वमान्य है कि वैदिक भाषा प्राचीनतम है। उसके व्याकरण सम्बन्धी नियमों में सरलता है, अतः वह सीखने तथा प्रयोग करने में सरल है। उसमें भाषा सौन्दर्य के लिए विविधतापूर्ण प्रयोग भी हैं।

शुद्धता :- प्राचीनतम साहित्य वेद की भाषा ही शुद्ध देववाणी है। व्यापक नियमों के अनुकूल होते हुए भी अनेक वैदिक प्रयोगों को प्रचलन से बाहर कर दिया गया। इसे उचित नहीं माना जा सकता है। उचित यही है कि उपयोगी वैदिक प्रयोगों को त्याज्य न समझें, सम्मान सहित प्रयोग किया जाये। वैदिक प्रयोगों की उपेक्षा करना संस्कृत को अशुद्ध बनाना है। वैदिक भाषा में परिवर्तन से बने रूप को शुद्ध देववाणी नहीं कहा जा सकता है।

भाषाओं की जननी :- भारोपीय या आर्यभाषा परिवार की भाषाओं का मूल वैदिक संस्कृत ही है। अतः इसे भारत से यूरोप - अमेरिका तक प्रचलित सभी प्रमुख भाषाओं का मूल रूप माना जाता है। शब्दावली तथा व्याकरण संरचना की समानता के कारण आधुनिक भाषा विज्ञान में इन सभी भाषाओं को एक भाषा परिवार की मान्यता प्राप्त है।

व्याकरण :- व्याकरण के अन्तर्गत किसी भाषा की शब्द-रचना तथा वाक्य रचना में प्रयुक्त सामान्य प्रवृत्तियों तथा नियमों को निरूपित किया जाता है। व्याकरण का एकमात्र उद्देश्य भाषा सीखना है। इसका लक्ष्य भाषा

को एकरूपता तथा वस्तुनिष्ठता प्रदान कर नियमबद्ध तथा सरल बनाना है, उसे जटिल तथा दुरूह बनाना नहीं।

भाषा विज्ञान तथा व्याकरण :- भाषा विज्ञान को व्याकरणों का व्याकरण कहा जाता है। व्याकरण में बताया जाता है कि भाषा में शब्द तथा वाक्य रचना के नियम क्या हैं। भाषा विज्ञान में यह जानने का प्रयास किया जाता है कि भाषा में शब्द तथा वाक्य रचना का वह रूप कैसे विकसित हुआ। व्याकरण यह बता देता है कि वेद में शब्द प्रयोग के नियम क्या थे और बाद में लौकिक संस्कृत में शब्दों के प्रयोग किस रूप में होने लगे। भाषा विज्ञान यह जानने का प्रयास करता है कि वेद में जो नियम थे, उनमें परिवर्तन कैसे हुआ।

सरल संस्कृत व्याकरण :- संस्कृत भाषा के तटस्थ सर्वेक्षण तथा व्याकरण के स्वतन्त्र विश्लेषण से सरल संस्कृत व्याकरण प्रणाली का विकास करने में सफलता मिली है। संस्कृत भाषा सीखने में शब्दरूप तथा धातु रूप रटना कठिन समस्या रही है। प्रस्तुत पद्धति इस समस्या का सुगम समाधान खोजने का विनम्र प्रयास है। इस प्रणाली में शब्द रूप तथा धातु रूप नहीं रटना पड़ता है तथा सूत्रों की आवश्यकता नहीं पड़ती है। इनके स्थान पर नामिक एवम् आख्यातिक विभक्ति प्रत्ययों का प्रयोग सीखना सरल है।

मूल मन्त्र :- सरल संस्कृत व्याकरण में तीन मुख्य सिद्धान्त अपनाये गये हैं, 1. मूल नियम, 2. व्यापक प्रयोग 3. विकल्प। परम्परागत व्याकरण के मूल नियमों को पूर्ण महत्व देते हुए सबसे पहले सिखाया गया है। जहां मूल नियम के स्थान पर अपवाद को अपनाने की परम्परा है, वहां उनके स्थान पर व्यापक प्रयोग वाले नियमों को अपनाया गया है। ऐसे व्यापक प्रयोग वाले नियमों को सर्वत्र अपनाने की परम्परा को वरीयता दी गयी है तथा अपवादों को विकल्प के रूप में मान्यता प्रदान की गयी है।

इसका अर्थ है कि मूल नियम तथा व्यापक प्रयोग वाले सार्व नियमों के प्रयोग को महत्व प्रदान किया गया है तथा अपवादों को विकल्प के रूप में बाद में सिखाने की नीति अपनायी गयी है।

सुगमता :- संस्कृत भाषा में लिखना, पढ़ना, बोलना सीखने के लिए

आवश्यक व्याकरण अति सुगम है। सरल संस्कृत व्याकरण प्रशिक्षण विधि से मात्र एक मास में अभ्यास कर लोक व्यवहार में संस्कृत भाषा का प्रयोग कर सकते हैं। भाषा को अपना बना लेने पर कठिनता का भय समाप्त हो जाता है। वास्तव में संस्कृत भाषा कठिन है नहीं। केवल व्याकरण प्रशिक्षण पद्धति में सुधार की आवश्यकता है। हमारे प्रयासों का उद्देश्य संस्कृत सिखाने में सरलता तथा सुगमता लाना ही है।

त्रुटि निवारण :- सरल संस्कृत व्याकरण प्रशिक्षण से सहज स्वाभाविक संस्कृत बोल सकते हैं, परन्तु प्रारम्भ में व्याकरण सम्बन्धी त्रुटियाँ या अशुद्धियाँ होना स्वाभाविक हैं। अभ्यास तथा स्वाध्याय से क्रमशः सुधार होता रहेगा तथा दोष कम होते जाएँगे।

परिचित शब्दावली :- आधुनिक भारतीय भाषाओं में अधिकांशतः संज्ञा, विशेषण शब्द तत्सम रूप में अर्थात् संस्कृत के समान यथावत् प्रयोग होते हैं। कुछ संज्ञा, विशेषण तथा क्रियापद तद्भव रूप में प्रयोग होते हैं अर्थात् संस्कृत शब्द कुछ परिवर्तित रूप में प्रचलित हैं। उच्चस्तरीय साहित्य में तत्सम शब्द अधिक प्रयोग होते हैं तथा अल्पशिक्षित लोग तद्भव रूपों का प्रयोग अधिक करते हैं। कुछ सर्वनाम, अव्यय तथा क्रियाएँ ही आधुनिक भाषाओं में नवीन हैं। अतः संस्कृत अपनाने में शब्दावली सीखना कोई कठिन समस्या नहीं है। इस पद्धति से व्याकरण सीखने के साथ ही आवश्यक संस्कृत शब्दों का ज्ञान तथा प्रयोग का पर्याप्त अभ्यास किया जा सकता है।

लिपि : संस्कृत भाषा को मुख्य रूप से देवनागरी लिपि में लिखा जाता है। अन्य भारतीय लिपियों में भी इसे लिखने की सुविधा है। सभी भारतीय लिपियाँ ब्राह्मी लिपि से उत्पन्न हैं तथा ध्वनिविज्ञान के अनुकूल हैं। इसीलिए भाषा विज्ञान में भारतीय लिपियों को विश्व में सर्वोत्तम माना जाता है।

जनभाषा तथा सम्पर्क भाषा :- संस्कृत मधुर तथा मनोहारी भाषा है, अतः इसे पढ़ने की इच्छा बहुत लोगों में होती है। यदि सरल संस्कृत व्याकरण के माध्यम से प्रशिक्षण का व्यापक प्रचार-प्रसार हो तो किसी भी भारतीय के लिए संस्कृत सबसे सरल दूसरी भाषा हो सकती है। इस पद्धति को अपनायें तो

संस्कृत पुनः जनभाषा तथा सम्पर्क भाषा के रूप में अपना स्थान प्राप्त कर सकती है। इस तरह भारत की भाषा समस्या का समाधान संस्कृत के रूप में प्राप्त हो सकता है।

मौलिकता : व्याकरण में कभी कुछ मौलिक नहीं होता है, केवल भाषा के प्रयोगों का अनुकरण मात्र होता है। इस सरल संस्कृत व्याकरण में यही मौलिकता है कि इसमें वेद तथा वैदिक भाषा को पूर्ण सम्मान दिया गया है एवम् व्याकरण के व्यापक सुबोध सुगम मूल नियमों को महत्वपूर्ण माना गया है। शब्दरूप, धातुरूप तथा पाणिनीय सूत्र रटने के स्थान पर मूल नियमों का प्रयोग सीखने पर बल दिया गया है। वेद को महत्व देने के कारण यह वैदिक है तथा मूल नियमों पर बल देने के कारण यह मौलिक है। इसलिए इसे वैदिक मौलिक सरल संस्कृत व्याकरण भी कहा गया है।

वस्तु-निष्ठता :- व्याकरण का प्रमुख उद्देश्य वह वस्तुनिष्ठता है जिससे किसी बोले अथवा लिखे गये शब्दों को कोई व्यक्ति सुनकर या पढ़कर उसके भाव को ठीक उसी रूप में स्पष्टतः ग्रहण कर सके। अर्थात् व्याकरण सम्मत भाषा में प्रत्येक वाक्य का निश्चित, वस्तुनिष्ठ तथा स्पष्ट अर्थ प्राप्त होता है। वस्तुनिष्ठता तथा स्पष्टता के अभाव में व्याकरण को त्रुटिपूर्ण समझना चाहिये। वस्तुनिष्ठता तथा स्पष्टता से यहां आशय व्याकरण सम्बन्धी नियमों से है। साहित्य में श्लेष तथा यमक अलंकार के सौन्दर्य का अपना महत्व है। वह भाषा की शक्ति है, उसे वस्तुनिष्ठता का अभाव नहीं, भाषा का गुण माना जाना चाहिये।

व्यापकता :- व्याकरण के मूल नियमों पर आधारित इस पद्धति से किसी भी भाषा के शब्दों के रूप संस्कृत में बनाये जा सकते हैं। सभी विभक्ति प्रत्यय परम्परागत व्याकरण के अनुसार हैं। अतः वे शास्त्र-सम्मत हैं और उन्हें स्वीकार करने में कोई बाधा नहीं है। नामिक विभक्ति प्रत्यय लगाकर कारक - वचन के अनुसार संज्ञा, सर्वनाम, विशेषण अर्थात् नाम शब्दों के रूप तथा आख्यातिक प्रत्यय लगाकर धातुओं से क्रियाओं के रूप काल, पुरुष, वचन के अनुसार सरलता से बनाये जा सकते हैं। इस विधि से संस्कृत में क्रियाओं का

प्रयोग सीखना तथा उनके विविध रूप समझना सरल है।

उपयोगी प्राचीन प्रयोग :- सरल संस्कृत व्याकरण में वेद, उपनिषद्, रामायण, महाभारत, काव्य, नाटक, कथा साहित्य आदि में मिलने वाले उपयोगी सरल प्रयोगों को अपनाकर लाभ उठाया गया है। व्याकरण शास्त्र तथा साहित्य में अनेक ऐसे प्रयोग मिलते हैं जिनको अपनाने से संस्कृत सीखने में बहुत सरलता हो सकती है।

नवीनता : सरल संस्कृत व्याकरण में 'पद प्रयोग' तो काशकृत्स्न तथा पाणिनि आदि प्राचीन व्याकरणाचार्यों की मान्यताओं के अनुरूप ही है, उनका प्रस्तुतीकरण ही नवीन है। इसमें प्राचीन व्याकरणाचार्यों के नियमों को सरल सुबोध रूप में प्रस्तुत किया गया है। व्यापक नियमों को पहले तथा जटिलता उत्पन्न करने वाले अपवादों को क्रमशः बाद में सिखाने की नीति अपनायी गयी है। मूल, सार्व तथा वैकल्पिक नामिक विभक्ति प्रत्यय, सहायक क्रिया, विशिष्ट क्रिया, आख्यात वर्गीकरण, उभयपदी धातु मान्यता, द्विधा धातु विधान, मूल लकार तथा वैकल्पिक लकार आदि मौलिक अवधारणाएँ हैं जो व्याकरण को सरल तथा सुबोध बनाने के लिए प्रस्तुत की गयी हैं।

नियम-बद्धता :- भाषा का स्वरूप जन सामान्य के व्यवहार से स्वाभाविक रूप से विकसित होता है। व्याकरण में भाषा में प्रचलित स्वाभाविक नियमों को खोजकर स्पष्टतः प्रस्तुत किया जाता है। स्वाभाविक विकास के कारण नियमों के विपरीत कुछ अपवाद भी प्रचलन में आ जाते हैं। व्याकरण में अपवादों के स्थान पर नियमों का प्रयोग करने पर बल दिया जाता है। इससे भाषा सीखने में सरलता होती है तथा भाषा में वैज्ञानिकता, स्पष्टता तथा वस्तुनिष्ठता आती है। **अपवादों के स्थान पर नियमों का प्रयोग ही व्याकरण का मुख्य सिद्धान्त है।** अतः सर्वप्रथम व्यापक नियमों का ज्ञान तथा उनके प्रयोग का व्यापक अभ्यास करा देना चाहिये। तत्पश्चात् महत्वपूर्ण तथा अत्यधिक प्रयोग होने वाले अपवादों की जानकारी क्रमशः देनी चाहिये।

तार्किकता या वैज्ञानिकता :- संस्कृत को पूर्ण वैज्ञानिक तथा तार्किक भाषा माना जाता है। इसका अर्थ है कि सभी नियम सकारण तथा तर्क सम्मत

होने चाहिये। परन्तु शब्दों और धातुओं के रूप व व्याकरण सूत्र रटना तथा कारण जाने बिना स्वीकार कर लेने को तर्क सम्मत तथा वैज्ञानिक व्याकरण कैसे माना जा सकता है? यह तो अंग्रेजी भाषा में शब्दों की वर्तनी जैसी ही अविवेकपूर्ण स्थिति है।

वास्तव में शब्द-रूप, धातु-रूप तथा व्याकरण सूत्रों के पीछे तर्क सम्मत कारण हैं, उन्हें व्याकरण प्रशिक्षण में प्रमुख स्थान दिया जाना चाहिये। यदि कोई सूत्र या प्रयोग तर्क सम्मत न हो तो उसे नियम नहीं, अपितु नियम का उल्लंघन माना जाना चाहिए। वह अपवाद तथा विकल्प के रूप में स्वीकार्य हो सकता है, नियम के रूप में मान्य नहीं।

विभाषा या विकल्प की मान्यता :- संस्कृत व्याकरण के प्रमुख आचार्य व्याकरण प्रयोगों में विभाषा अर्थात् विकल्प स्वीकार करते हैं। उचित यही है कि व्यापक नियमों को सर्वत्र स्वीकार किया जाये तथा अपवादों को विभाषा अर्थात् विकल्प के रूप में ही मान्यता दी जाये। इस प्रकार नियम के अनुसार बने पद तथा वर्तनी को महत्वपूर्ण मानते हैं तथा उसका प्रयोग उचित माना जाता है। इसके साथ ही प्रचलित हो गये रूप को भी विकल्प के रूप में स्वीकार्य कर लिया जाता है। दोनो रूपों को स्वीकार कर लेने से भाषा की शुद्धता तथा व्यावहारिकता बनी रहती है।

अपवाद :- नियमों का उल्लंघन कर अपवादों को अपनाने पर बल देना व्याकरण की मूल भावना के सर्वथा विरुद्ध है। इससे व्याकरण जटिल और अवैज्ञानिक हो जाता है तथा भाषा अव्यावहारिक। अपवादों को विकल्प के रूप में मान्यता देना किसी सीमा तक स्वीकार्य हो सकता है।

महत्वपूर्ण अपवाद तथा नियमन :- कुछ अपवाद इतने व्यापक रूप में प्रयोग होते हैं कि उनका महत्व नियमों के ही समान हो जाता है। ऐसे अपवादों को उपयोगिता के आधार पर नियम की मान्यता देना अर्थात् नियम के रूप में स्वीकार कर लेना नियमन सिद्धान्त कहा जाता है। नियमन सिद्धान्त से भाषा अधिक स्पष्ट तथा वस्तुनिष्ठ हो जाती है।

धातुज शब्द :- संस्कृत में सर्वनाम तथा अव्यय के अतिरिक्त सभी शब्द

धातुओं से ही बनते हैं। कुछ अव्यय भी धातुज हैं। इस प्रकार संज्ञा, विशेषण तथा क्रियाएँ धातुज हैं। उनके मूल अर्थ धातुपाठ से ही जाने जा सकते हैं। वैदिक शब्दों के अर्थ धातुज ही होते हैं, अतः वेदमन्त्रों के अर्थ धातु के अर्थ के आधार पर ही जाने जाते हैं। इस प्रकार वेदमन्त्रों के अर्थ सरलता से समझे जा सकते हैं।

वाक्य रचना :- संस्कृत वाक्य रचना सरल है क्योंकि किसी भी शब्द को सामान्यतः वाक्य में कहीं भी प्रयोग किया जा सकता है। शब्दों में विभक्ति प्रत्यय जुड़े रहने के कारण उनका अर्थ निश्चित रहता है तथा वाक्य में स्थान निश्चित करने की आवश्यकता नहीं होती है।

सन्धि :- संस्कृत को कठिन बनाने में सन्धियों के अधिक प्रयोग का बहुत योगदान है। संस्कृत को व्यावहारिक और व्यापक भाषा बनाने के लिए सर्वाधिक महत्वपूर्ण है सन्धियों के अनावश्यक प्रयोग से बचना। श्रीमत् शरत् चन्द्र को पत्र में श्रीमच्छरच्चन्द्र के रूप में लिखने और पत्रवाहक द्वारा श्री मच्छर चन्द्र पढ़ने की बात सन्धि के उदाहरण के रूप में बहुत प्रचारित है। ऐसी सन्धियों से बचा जाना ही उचित है।

लम्बी-लम्बी सन्धियों को तोड़कर अर्थ निकालना कठिन होता है। कभी-कभी सन्धिपदों का कई तरह से विग्रह किया जा सकता है और एक सन्धिपद के कई अर्थ निकल आते हैं। वाक्य रचना में सन्धियों का प्रयोग नहीं होना चाहिये। आवश्यकता पड़ने पर नये शब्दों के निर्माण में तो सन्धि उपयोगी है, अन्यथा नहीं।

लोक व्यवहार तथा वार्तालाप में सन्धियों का प्रयोग करना तो पूरी तरह अव्यवहारिक है। सन्धि–प्रक्रिया को समझने के लिए भी हमने सरल व्यावहारिक नियम बताने का प्रयास किया है जो सन्धि-विग्रह कर अर्थ निकालने में उपयोगी होंगे।

समास :- समास का प्रयोग सरलता के लिए करना चाहिये, जटिलता उत्पन्न करने के लिए नहीं। सचिव-निवास कहने से सचिवस्य निवास अर्थात् सचिव का निवास अर्थ निकाल आता है। इसमें सरलता भी है और सौन्दर्य

भी। लेकिन अनेक शब्दों की दीर्घ समास-रचना बोझिल हो जाती है। उससे बचना चाहिये।

मूल व्याकरण :- सभी भाषाओं में वर्णमाला, शब्द भेद, लिंग, वचन, पुरुष, कारक, लकार आदि समान रूप से होते हैं तथा इनकी परिभाषाएँ भी समान होती हैं। यही मूल व्याकरण है। मूल व्याकरण सभी भाषाओं में समान होती है, अतः एक भाषा में सीखी गयी मूल व्याकरण किसी अन्य भाषा में भी उपयोगी होती है। हिन्दी में सीखी गयी मूल व्याकरण संस्कृत सीखने में भी पूरी तरह उपयोगी होगी। अन्य प्रकरण विशेष प्रयोगों के अभ्यास के लिए हैं। भाषाओं की अपनी लिपियाँ तथा शब्द होते हैं तथा मूल व्याकरण के प्रमुख तत्वों लिंग, वचन, कारक, पुरुष, काल के अनुसार कुछ शब्दांश अर्थात् उपसर्ग, प्रत्यय आदि लगते हैं जिनका प्रयोग सीखना ही मुख्य व्याकरण है। जैसे कर्म कारक में हिन्दी में को तथा संस्कृत में म् प्रत्यय लगता है।

पदरचना शैली : किसी का पता लिखने में सामान्यतः व्यक्ति का नाम, ग्राम या नगर तथा जनपद का नाम होता है। उन नामों को मूल रूप में ही लिखना चाहिये, विभक्ति लगाना आवश्यक नहीं है। कर्ता एकवचन विभक्ति विसर्ग का लोप बहुधा होता है तो आधुनिक आवश्यकता के अनुसार पता लिखने में भी स्वीकार कर लेना उचित है। संस्कृत को संचार माध्यमों, संगणकों (कम्प्यूटर) व बोलचाल की भाषा के रूप में विकसित करने के लिए भी पदरचना शैली में इस प्रकार सरल परिवर्तन स्वीकार करने होंगे। इससे संस्कृत भाषा की मूल प्रकृति का उल्लंघन नहीं होगा।

आधुनिक शब्द :- यदि संस्कृत को केवल पुस्तकालय में सीमित नहीं कर देना है तो सभी प्रकार के शब्दों का प्रयोग करने की व्यवस्था व्याकरण में अनिवार्य है। नेहरू, माओ, सिरिमाओ भण्डारनायके, ओबामा, जयसूर्या जैसे शब्दों के पद प्रयोग के रूप परम्परागत सारणियों, रूपावलियों के सहारे नहीं चलाये जा सकते। लो.स., रा.स. जैसे शब्दों के संक्षिप्त रूपों के साथ भी यही समस्या होगी। ऐसे शब्दों को समाचार पत्रों, आकाशवाणी व दूरदर्शन पर मूल रूप में प्रयोग करना ही होगा। संस्कृत में नये-नये आधुनिक शब्दों का प्रयोग

स्वीकार करना पड़ेगा। व्याकरण में यह क्षमता होनी चाहिये, तभी संस्कृत को सशक्त व्यावहारिक भाषा के रूप में अपनाया जा सकेगा।

जटिल रूपावली से मुक्ति :- संस्कृत को व्यावहारिक भाषा के रूप में प्रयोग करने के लिए आवश्यक है कि व्याकरण सिखाने में शब्द रूप सारिणी की सीमा से बाहर निकला जाए। **वास्तव में मूल व्याकरण में इन सारणियों का कोई स्थान है ही नहीं।** सरलता लाने के लिए बनायी गयी शब्दरूपावली व धातुरूपावली से जटिलता ही बढ़ी है।

पुल्लिंग व नपुंसक लिंग में दस-दस तथा स्त्रीलिंग में बारह शब्द रूप प्रमुख माने गये हैं। इस तरह कम से कम 32 शब्दों के चौबीस-चौबीस रूप रटना आवश्यक है। इसके बाद भी सर्वनाम तथा संस्कृत से इतर भाषाओं के शब्दों के रूप बनाना सम्भव नहीं हो सकेगा। उनके लिए समस्या बनी ही रहेगी। क्रियाओं के रूप और भी अधिक हैं। अतः रूपावली रटने के स्थान पर विभक्ति प्रत्ययों का प्रयोग सीखना ही उचित है।

व्यापक विभक्ति प्रत्यय : आधुनिक ज्ञान-विज्ञान की भाषा बनाने तथा सभी प्रकार के शब्दों का संस्कृत में प्रयोग करने के लिए व्यापक विभक्ति प्रत्ययों का निर्धारण व प्रयोग आवश्यक है। सौभाग्य से बहुत अधिक विविधता के बावजूद सभी विभक्तियों में कुछ विभक्ति–प्रत्यय ऐसे हैं जो किसी भी शब्द के साथ प्रयोग किये जा सकते हैं। उनको हमने सार्व नामिक विभक्ति प्रत्यय कहा है। अच्छा हो कि प्रारम्भिक कक्षाओं में छात्रों को ऐसे व्यापक प्रयोग वाले सार्व विभक्ति चिह्न ही सिखाये जायें। इससे छात्रों को संस्कृत सीखना सरल लगेगा तथा उसे सहजता से अपना सकेंगे। उच्चतर कक्षाओं में विविधतापूर्ण जटिल रूपों का सूक्ष्म ज्ञान कराया जाये तो कठिनता नहीं होगी।

क्रियापदों के सरल रूप :– व्याकरण में क्रियारूपों को आख्यातिक भी कहते हैं। आख्यातिक विभक्तियों में कुछ जटिल प्रयोग प्राचीन साहित्य में मिलते हैं परन्तु वे वैकल्पिक हैं। उनका प्रयोग करना आवश्यक नहीं है तथा समझना कठिन नहीं है। सभी धातुओं के क्रियारूपों की कोई सारिणी उपलब्ध नहीं है। धातुपाठ तथा धातुकोष पुस्तकों में मात्र वर्तमान काल अन्य पुरुष

एकवचन के रूप ही यदा-कदा दे दिये जाते हैं। छात्रों के लिए प्रकाशित पुस्तकों में कुछ ही धातुओं के रूप मिलते हैं। शुद्ध रूप बनाने के लिए व्याकरण सूत्रों को ही आधार माना जाता है। कौन सा रूप शुद्ध माना जाये, इसे लेकर व्याकरणाचार्यों में मतभेद भी बने रहते हैं। अतः सामान्य प्रयोग में सभी धातुओं के रूप एकसमान तरीके से बनाना ही उचित विकल्प है।

धातुरूप परम्परा :- क्रियारूप बनाने की दृष्टि से ग्यारह लकार मुख्य हैं। उनमें सतत लकार व पूर्ण लकार शामिल नहीं हैं। क्रियाओं में आत्मनेपद व परस्मैपद नाम के दो पद होते हैं। प्रत्येक लकार में एक पद में धातु के न्यूनतम नौ (9) रूप बनते हैं। इस प्रकार दो पदों में अट्ठारह (18) रूप बनेंगे। कुछ लकारों तथा धातुओं में वैकल्पिक रूप भी होते हैं। इस प्रकार प्रत्येक धातु के दो सौ से भी अधिक रूप रटने पड़ेंगे। क्रियारूप बनाने की दृष्टि से सभी धातुओं को ग्यारह गणों में बाँटा गया है। परन्तु ग्यारह धातुओं से काम चलेगा नहीं। सैकड़ों धातुओं के रूप रट कर भी नहीं कहा जा सकता कि सभी धातुओं के रूप परम्परा के अनुसार बना ही लेंगे। अतः सभी धातुओं के रूपों में एकरूपता रखना ही उचित समाधान है।

मौलिक लकार :- सरल संस्कृत व्याकरण में तीनों कालों में क्रियाओं को व्यक्त करने के लिए अनिवार्य आख्यातिक विभक्ति केवल तीन **सामान्य, विधि, क्रियातिपत्ति** हैं। इनसे तीनों कालों सहित सभी प्रकार के वाक्य बन सकते हैं। सरल संस्कृत व्याकरण में विशेषतः प्राथमिक स्तर तथा जनसामान्य के दैनिक जीवन में प्रयोग के लिए केवल इन तीन प्रकार की मौलिक आख्यातिक विभक्तियों का प्रयोग जानना पर्याप्त है। परम्परागत व्याकरण में इनको लट्, लोट्, लृङ् लकार कहते हैं।

वैकल्पिक लकार :- परम्परागत रूप से विभिन्न क्रियारूपों को व्यक्त करने के लिए ग्यारह लकारों का प्रयोग होता रहा है। इनमें मौलिक लकारों के अतिरिक्त सभी लकार वैकल्पिक कहे जा सकते हैं। प्राचीन संस्कृत के अनेक लकार व्यावहारिक सरल संस्कृत में आवश्यक नहीं रह गये हैं। इन लकारों का प्रयोग काव्य सौन्दर्य के लिए उपयोगी हो सकता है, परन्तु दैनिक

प्रयोग में अनिवार्य नहीं है। वेद, उपनिषद् पुराण आदि प्राचीन साहित्य में प्रयोग होने के कारण उच्चस्तर पर छात्रों को इनका ज्ञान कराया जा सकता है।

आठ लकारों लेट्, लिट्, ऌट्, लुट्, लङ्, विधिलिङ्, आशीर्लिङ्, लुङ् को हम वैकल्पिक लकार कहते हैं। इनका प्रयोग किये विना भी संस्कृत भाषा का प्रयोग किया जा सकता है।

इनमें **लेट्** लकार का प्रयोग विधिलिङ् के अर्थ में केवल वेद में हुआ है। परवर्ती साहित्य में इसका प्रयोग नहीं मिलता है। **लिट्** लकार को परोक्ष भूतकाल माना गया है तथा इसका प्रयोग प्राचीन घटनाओं तथा काल्पनिक कथाओं में होता रहा है। **लङ्** लकार को अनद्यतन भूतकाल माना गया है, अर्थात् जो आज से पहले का हो। सामान्यतः इसका प्रयोग सभी प्रकार के भूतकाल में किया जाता है। लङ् लकार को वैकल्पिक इसलिए माना है क्यों कि इसके स्थान पर लट् लकार के साथ स्म का प्रयोग किया जा सकता है। **लुङ्** लकार को अद्यतन भूत कहा जाता है। अर्थात् जो क्रिया आज ही हुई हो, उसमें प्रयोग होना चाहिये। इसके स्थान पर सामान्यतः लङ् लकार का ही प्रयोग करते हैं। अतः हम इसके स्थान पर लट् के साथ स्म का प्रयोग कर सकते हैं।

लुट् लकार को अनद्यतन भविष्यत् काल मानते हैं, अर्थात् क्रिया आज के बाद होनी हो तो इसका प्रयोग होना चाहिये। परन्तु भविष्यत् काल में सर्वत्र लृट् लकार का प्रयोग भी उचित माना गया है। **लृट्** लकार को वैकल्पिक इसलिए माना है क्योंकि सरल संस्कृत व्याकरण में लृट् लकार भविष्यत् काल का प्रयोग हमने लट् लकार प्रत्यय से पूर्व इष्य् लगाकर किया है जो लृट् लकार बनाने की सरल विधि है। **विधि लिङ्** तथा **आशीर्लिङ्** वैकल्पिक इसलिए माने गये हैं क्योंकि इनके स्थान पर लोट् लकार का प्रयोग मान्य है।

सरल धातु गण विधान :- धातुओं को काशकृत्स्न ने नौ गणों में विभाजित किया था। उनके कई शताब्दियों के बाद पाणिनि ने धातुओं को ग्यारह गणों में विभाजित किया। प्रत्येक गण के अपने विकरण प्रत्यय हैं जो धातु तथा विभक्ति के मध्य जुड़ते हैं।

ध्यान देने योग्य बात यह है कि परम्परागत धातुपाठों में अधिकांश धातुएँ भ्वादि गण में पठित हैं अर्थात् उनके रूप भू-भव् धातु के अनुसार चलते हैं। अनेक धातुएँ अन्य गणों में पठित हैं परन्तु व्यावहारिक दृष्टि से उनके रूप भी भ्वादि गण के समान होते हैं। इस प्रकार कुछ ही धातुएँ हैं जिनके रूप भ्वादि गण के अनुसार चलाने में परम्परा की दृष्टि से कठिनाई हो सकती है।

पाणिनि के धातु पाठ में कुल 1970 धातुओं में 1035 धातुएँ भ्वादि गण में हैं। काशकृत्स्न के धातुपाठ में भ्वादि गणीय धातुएँ लगभग 800 अधिक हैं। सामान्यतः भ्वादि गण को ही मूल तथा अन्य को अपवाद माना जाता है। दैनिक व्यवहार के लिए भ्वादि गणीय तथा उनके अनुसार प्रयोग होने वाली अन्य धातुएँ ही पर्याप्त हैं। प्राथमिक स्तर पर तथा दैनिक जीवन में यदि सभी धातुओं को भ्वादि गणीय मानकर प्रयोग करें तो भी स्वीकार्य है।

उभयपदी धातु विधान :- वेद में सभी धातुएँ उभयपदी हैं। इसका अर्थ है कि सभी धातुएँ या क्रियायें दोनों पदों आत्मनेपदी तथा परस्मैपदी में प्रयोग होती हैं। काशकृत्स्न ने अनेक धातुओं को उभयपदी माना है। पाणिनि ने उनमें कई धातुओं को एकपदी अर्थात् आत्मनेपदी या परस्मैपदी माना है। उचित यही है कि सभी धातुओं को वेद के समान उभयपदी माना जाये। लोक व्यवहार में परस्मैपदी रूप प्रयोग करें।

सहायक क्रिया :- सहायक क्रिया की स्पष्ट अवधारणा स्वीकार कर लेने से अनेक प्रकार के वाक्य बनाने में सरलता हो जाती है। संस्कृत में अस् धातु के रूप मूलतः सहायक क्रियाएँ ही हैं। भविष्यत् काल में भू धातु से ही भविष्यति आदि सहायक क्रियाएँ बनती हैं। भू धातु से वर्तमान तथा भूतकाल की भी सहायक क्रियायें भवति, भवति स्म, अभवत् आदि बनती हैं।

विशिष्ट या मूल क्रिया :- कोई भी क्रिया या तो होती है अथवा उसे कोई करता है। वर्षा होती है और सिंचाई की जाती है। अतः मूलतः क्रियाएँ दो ही हैं करना और होना। सरल संस्कृत व्याकरण में कृ तथा भू धातुओं को मूल क्रिया मानते हैं। इन दो क्रियाओं के प्रयोग से सभी क्रियाओं को व्यक्त कर सकते हैं। पढ़ता है या पढ़ाई करता है तथा सूर्य निकलता है या उदय होता

है कहने पर अर्थ एक ही निकलता है। इसे संस्कृत में कह सकते हैं कि पठति अथवा पठनम् करोति तथा सूर्यः उदयति अथवा सूर्योदयः भवति। इस प्रकार जिन धातुओं के रूप बनाने में कठिनाई हो, उनके संज्ञा रूप का प्रयोग कर मूल क्रियाओं से वाक्य बना सकते हैं।

करोति के स्थान पर करति का प्रयोग शुद्ध तथा स्वीकार्य है। वेद तथा पाणिनि के अनुसार करति, करतः करन्ति आदि रूप बनते हैं।

सरल क्रियारूप पद्धति :- क्रियारूप बनाने के लिए मूल धातु से आख्यातिक विभक्ति प्रत्यय जुड़ते हैं। उनका प्रयोग काल के अनुसार सिखा दिया जाता है। जैसे स्वभाव वर्तमान काल में हिन्दी क्रियाओं में ता है, ती है, ते हैं, ता हूँ, ते हो आदि जुड़ते हैं। इसी प्रकार संस्कृत धातुओं में अति, अतः, अन्ति आदि प्रत्यय लगते हैं।

व्यावहारिक आख्यातिक (क्रियारूप) विधान :- विशेष बात यह है कि सामान्यतः एक काल के सभी उपभेदों को एक ही आख्यातिक या क्रिया रूप से व्यक्त कर सकते हैं अर्थात् संस्कृत में काल के उपभेदों सतत (रहा, रही, रहे), पूर्ण (चुका, चुकी, चुके), स्वभाव (ता है, ती है, ते हैं) को केवल एक ही आख्यातिक रूप से व्यक्त करते हैं। पठति का अर्थ पढ़ता है, पढ़ रहा है दोनों है। पढ़ चुका को भूत काल मानते हैं क्योंकि पढ़ने का कार्य पूर्व में हो चुका है तभी कहते हैं कि पढ़ चुका है।

सतत तथा पूर्ण क्रिया अवस्थाएं :- ऐसा भी नहीं है कि सतत तथा पूर्ण क्रिया अवस्थाओं के प्रयोग संस्कृत में सम्भव ही नहीं हैं। जहाँ क्रिया के सतत (निरन्तर या लगातार) होने या पूर्ण हो जाने पर विशेष बल देना ही हो, वहाँ पठन् या पठमानः अस्ति (पढ़ रहा है) तथा पठितवान् अस्ति या पठितः अस्ति (पढ़ चुका है या पढ़ लिया है) जैसे वाक्य बनते हैं। सरलता यह है कि प्रारम्भ में एक लकार के प्रयोग से तीनों कालों में वाक्य प्रयोग कर सकते हैं तथा आगामी स्तर पर विशिष्ट प्रयोग के रूप में सतत तथा पूर्ण लकार के प्रयोग भी सीख सकते हैं।

सरल काल परिवर्तन विधि :- हम केवल वर्तमान काल (लट् लकार) के

प्रत्यय से भूत, वर्तमान तथा भविष्यत् काल की क्रियाओं के रूप बना सकते हैं। इस तरह प्राथमिक स्तर पर वर्तमान काल के क्रियारूप में सरल परिवर्तन कर भूत काल व भविष्यत् काल भी बनाना सीख सकते हैं।

अष्टादश आख्यातिक क्रिया रूप :- सरल संस्कृत व्याकरण में तीन कालों में 18 प्रकार की वाक्य रचना के लिए आख्यातिक या क्रिया रूप प्रस्तुत किये गये हैं। इनमें परम्परागत लकारों में **लट्, लृट्, लोट्, लङ्, लृङ्, विधिलिङ्, आशीर्लिङ् का प्रयोग हुआ है। लिट्, लुट्, लेट्, लुङ् का प्रयोग नहीं किया गया है।**

ध्यातव्य है कि जिस तरह लेट् का प्रयोग वेद में हुआ है तथा शास्त्रीय लौकिक संस्कृत में परित्याग कर दिया गया, उसी प्रकार सरल संस्कृत व्याकरण में चार लकारों लिट्, लुट्, लेट, लुङ् का प्रयोग नहीं किया गया है।

विविध क्रियारूप :- प्रेरणार्थक क्रिया, पूर्व क्रिया, सहक्रिया आदि के लिए सतत व पूर्ण क्रियारूपों की भाँति प्रत्यय विधान हैं।

नवीन प्रयोग :- सरल संस्कृत व्याकरण में तीनो कालों में सतत लकार, पूर्ण लकार, विधिलिङ् का भूतकाल नवीन प्रयोग प्रतीत हो सकते हैं, परन्तु ये प्रयोग भी प्राचीन व्याकरण में मान्य नियमों के अनुसार तथा आधुनिक आवश्यकता के अनुकूल हैं।

स्वीकार्यता :- शास्त्रीय शब्दों में कहें तो शतृ, शानच्, क्त, क्तवतु कृदन्त प्रत्ययों के प्रयोग परम्परागत ही हैं। सहायक क्रिया के रूप में अस्, भू धातुओं के लट्, लङ्, लृट् रूप प्रयोग हुए हैं। विधिलिङ् के साथ स्म का प्रयोग कर उसका भूतकाल बनाया गया है। बहुधा हम कहते हैं कि ऐसा करना चाहिये था, वहाँ जाना चाहिये था आदि। इस प्रकार के वाक्यों को विधिलिङ् के साथ स्म का प्रयोग कर ही व्यक्त करना सम्भव है। स्म का प्रयोग लट् के समान विधिलिङ् के साथ भी स्वाभाविक है।

जटिलता का कारण : संस्कृत व्याकरण जटिल और दुरूह होने का कारण अति प्राचीन ढंग से पढ़ाया जाना है। संस्कृत भाषा की लिपि तक बदल गयी। अब ब्राह्मी लिपि का नाम तक अधिकांश लोगों को पता नहीं, जो

संस्कृत भाषा की प्राचीन लिपि थी। उससे पूर्व की सिन्धु लिपि या सारस्वत लिपि को अभी स्पष्टतः पढ़ा तक नहीं जा सका है। लेकिन व्याकरण सिखाने की पद्धति वही बनी हुई है जो पाँच हजार वर्षों से भी पहले प्रचलित थी। इस पद्धति में जटिल सूत्र, संस्कृत में उनकी वृत्ति या व्याख्या तथा प्रत्येक शब्द के अलग-अलग रूप रटना सबसे महत्वपूर्ण माना जाता है। अब यह प्रणाली नीरस, उबाऊ और छात्रों पर बोझ ही है। यदि क्रियाओं तथा अन्य शब्दों के रूप न रटने पड़ें तथा जटिल सूत्रों से पीछा छूट जाये तो संस्कृत लोकप्रिय विषय हो सकता है।

लौकिक संस्कृत व्याकरण :- प्राचीन व्याकरणाचार्यों ने संस्कृत का व्यापक अध्ययन किया और अपने समय की लोक भाषा में प्रचलित सूक्ष्मतम परिवर्तनों पर भी ध्यान दिया। उसमें परिवर्तन के कारणों पर ध्यान नहीं दिया गया है। सूक्ष्म परिवर्तनों को तो व्याकरण के रूप में पढ़ाया जा रहा है लेकिन कारण को समझे विना। उसे लौकिक संस्कृत व्याकरण कहा जाता है। इसीलिए लौकिक संस्कृत जटिल पुस्तकीय भाषा बनकर रह गयी है।

पंचपाठी शास्त्रीय संस्कृत व्याकरण : परम्परागत पंचपाठी संस्कृत व्याकरण के सूत्रपाठ, धातुपाठ, गणपाठ, उणादिपाठ, लिंगानुशासन का शास्त्रीय महत्व है। इन ग्रन्थों का वर्तमान आवश्यकता के अनुसार 'प्रवचन' अर्थात् सम्पादन-भाष्य तथा प्रस्तुतीकरण किया जाना चाहिये। प्राचीन व्याकरणाचार्यों इन्द्र, चन्द्र, काशकृत्स्न, पाणिनि आदि ने इसी तरह अपने समय की आवश्यकता के अनुसार 'प्रवचन' किया था। इसीलिए ये ग्रन्थ 'प्रोक्त' कहलाते हैं, 'कृत' नहीं। अर्थात् पाणिनि आदि ने इन पाँच ग्रन्थों की स्वतन्त्र नये ग्रन्थ के रूप में रचना नहीं की, अपितु परम्परा से प्राप्त इन ग्रन्थों का 'प्रवचन' अर्थात् सम्पादन किया था।

शास्त्रीय संस्कृत व्याकरण परम्परा :- पाणिनि से पूर्व इन्द्र, चन्द्र, काशकृत्स्न, आपिशल तथा शाकटायन प्रमुख व्याकरणाचार्य हुए हैं जिन्होंने पंचपाठी व्याकरण ग्रन्थों का प्रवचन किया है। अपने पूर्ववर्ती व्याकरणाचार्यों के मतों का उल्लेख पाणिनि ने स्वयम् किया है। प्राचीन आचार्यों क्षीरस्वामी,

कैयट, वोपदेव, सायण आदि ने भी इनका उल्लेख किया है। प्राचीन व्याकरणाचार्य काशकृत्स्न का धातुपाठ उनके बाद हुए आचार्य पाणिनि की अपेक्षा अधिक व्यापक है। उनके तथा चन्द्र व्याकरण के कुछ नियम पाणिनि की अपेक्षा अधिक तर्क सम्मत तथा सुगम प्रतीत होते हैं। काशकृत्स्न के व्याकरण सूत्र तथा धातुपाठ प्रकाशित भी हैं। हमने अपने धातुकोश में काशकृत्स्न तथा पाणिनि के धातुपाठों की धातुओं सहित यथासम्भव अधिकतम धातुओं का समावेश किया है।

संशोधन मान्यता :- व्याकरण के प्राचीन आचार्यों में परस्पर मतभेद भी स्वीकार्य रहे हैं। पाणिनि ने अपने से प्राचीन अन्य आचार्यों के मतों का सम्मानपूर्वक उल्लेख किया है। पाणिनि के अनेक प्रयोगों में संशोधन वररुचि कात्यायन ने किया है तथा पाणिनि तथा कात्यायन के अनेक प्रयोगों पर पतंजलि ने अपना पृथक् मत प्रस्तुत किया है।

महत्वपूर्ण बात यह है कि संस्कृत व्याकरण की शास्त्रीय परम्परा में आचार्यत्रयी के रूप में विख्यात पाणिनि, कात्यायन तथा पतंजलि में क्रमशः बाद के आचार्य के मत को अधिक स्वीकार्य माना जाता है। यह उचित भी है क्योंकि बाद का आचार्य अपने पूर्व के आचार्य के मत का अध्ययन कर सकता है। उसके पास विचार करने का अवसर तथा सामग्री उपलब्ध होती है जिसका लाभ उठाकर वह अधिक उपयोगी मत प्रस्तुत कर सकता है। इस प्रकार संशोधन-परिष्कार करते हुए अपने समय के अनुकूल प्रस्तुतीकरण व्याकरण परम्परा में स्वीकार्य है।

ॐ

भाषा परिचय

भाषा

परिचय :- भावों-विचारों को व्यक्त करने वाले सार्थक ध्वनि समूह को भाषा कहते हैं।

बोध :- संस्कृत आदि विभिन्न भाषाओं में कुछ निश्चित ध्वनियाँ हैं जिनके अर्थ निश्चित हैं। इसी से हम विचारों तथा भावनाओं को व्यक्त कर पाते हैं।

भेद

भाषा के दो रूप होते हैं :

1. मौखिक या वाचिक भाषा :- भाषा का मौलिक रूप वाचिक ही होता है। भाषा शब्द का अर्थ ही है बोलना।

2. लिखित भाषा :- बोली गयी भाषा को सुरक्षित रखने के लिए लिखित रूप अपनाया जाता है। इसके लिए बोली गयी ध्वनियों को व्यक्त करने के लिए लिखित चिह्न निर्धारित कर लिये जाते हैं। इसे लिपि कहते हैं। इससे भाषा को स्थायी रूप प्राप्त हो जाता है।

भाषा के अंग

भाषा के पाँच अंग होते हैं :-

1. अक्षर 2. वर्ण 3. शब्द 4. पद 5. वाक्य

1. अक्षर

परिचय :- भाषा में प्रयोग होने वाली सबसे छोटी अविभाज्य ध्वनि को अक्षर कहते हैं।

उदाहरण :- अ, इ, उ, क्, च् आदि।

अक्षर भेद

स्वर

परिचय :- जिन अक्षरों का उच्चारण विना किसी अन्य अक्षर की सहायता के स्वतन्त्र रूप से हो सकता है, उनको स्वर कहते हैं। इसका अर्थ है कि सभी स्वरों का उच्चारण स्वतन्त्र रूप से हो सकता है।

उदाहरण :- अ, ई, ए आदि।

व्यंजन

परिचय :- इनका उच्चारण स्वर की सहायता से किया जाता है। स्वर के विना किसी व्यंजन का उच्चारण करना सम्भव नहीं है। इसका अर्थ है कि उच्चारण के लिए व्यंजन से पूर्व या बाद में किसी स्वर का होना अनिवार्य है।

उदाहरण :- क = क् + अ। कि = क् + इ।

2. वर्ण

परिचय :- एक स्वर तथा उसके साथ बोले जाने वाले एक या अधिक व्यंजन को मिलाकर वर्ण बनता है। एक वर्ण में स्वर एक ही होता है तथा व्यंजन एक या अधिक भी हो सकते हैं। बिना व्यंजन का केवल स्वर भी वर्ण होता है।

उदाहरण :- क, आ, म्र, स्व आदि।

विशेष :- 1. प्रत्येक स्वर एक अक्षर है तथा वर्ण भी।

2. सामान्यतः अक्षर तथा वर्ण समान समझे जाते हैं।

3. म्र वर्ण में तीन अक्षर (म् + र् + अ) हैं। म्र को म्र के रूप में लिखना उचित है। इससे उच्चारण तथा अक्षर स्पष्ट हो जाते हैं।

3. शब्द

परिचय :- भाषा में प्रयोग होने वाली सबसे छोटी सार्थक इकाई या सबसे छोटा सार्थक ध्वनिसमूह शब्द होता है।

विशेष :- 1. शब्द में एक या अधिक वर्ण हो सकते हैं। च एक वर्ण है तथा शब्द भी।

2. सामान्यतः शब्द में एक से पाँच तक वर्ण होते हैं।

4. पद

परिचय :- शब्द में विभक्ति जोड़ने से पद बनता है अर्थात् पद में शब्द के साथ व्याकरण के अनुसार नामिक या आख्यातिक (क्रिया) विभक्ति जुड़ी रहती हैं।

उदाहरण :- बालक शब्द है तथा उसमें कर्ता कारक या प्रथमा एक वचन की नामिक विभक्ति लगाने पर बनने वाला उसका रूप बालकः या 'बालक ने' पद है।

5. वाक्य

परिचय :- एक या अनेक पद मिलाकर वाक्य बनता है। संस्कृत व्याकरण के अनुसार वाक्य में पद का ही प्रयोग होता है शब्द का नहीं तथा क्रिया का होना अनिवार्य है।

विशेष :- 1. संस्कृत में केवल एक ही पद का अर्थात् एक क्रियापद वाला वाक्य भी हो सकता है।

2. इस तरह के वाक्यों में कर्ता के रूप में प्रयोग हुए सर्वनाम पद का लोप होता है।

उदाहरण :- पठामि। मैं पढ़ता हूँ।

बोध :-–इस वाक्य में अहम् (सर्वनाम कर्ता) का लोप है। पूरा वाक्य अहम् पठामि होना चाहिए, परन्तु केवल पठामि कहने से अर्थ स्पष्ट हो जाता है।

मूल ध्वनि

परिचय :- शब्द के उच्चारण के समय जो छोटी से छोटी 'अविभाज्य' ध्वनि निकलती है, उसको हम 'मूल ध्वनि' कहते हैं।

विशेष :- 1. सामान्यतः मूल ध्वनि को ही अक्षर कहते हैं। इन्हीं मूल

ध्वनियों के संयोग से शब्द बनते हैं।

2. किसी ध्वनि के उच्चारण में लगने वाले समय को 'मात्रा' कहते हैं। मूल लघु स्वर की 'एक' मात्रा, दीर्घ स्वर की 'दो' मात्रा तथा 'प्लुत' स्वर की तीन मात्रा होती हैं। स्वर रहित व्यंजन की शून्य मात्रा होती है। सामान्यतः इससे पूर्व का स्वर दीर्घ हो जाता है।

लिपि

परिचय :- प्रत्येक मूल ध्वनि के लिए पृथक्-पृथक् चिह्न निर्धारित कर दिये जाते हैं। इन्हीं चिह्नों के समूह से हम शब्द को लिखित रूप में व्यक्त करते हैं। इसी को लिपि कहते हैं।

वर्णमाला

परिचय :- लिपि में निर्धारित सम्पूर्ण मूल ध्वनियों के चिह्नों के समूह को वर्णमाला कहते हैं।

भारतीय वर्णमाला : विशेषताएं

1. भारतीय लिपियों की वर्णमाला में विश्व की सम्पूर्ण मूल ध्वनियों के लिए निश्चित तथा स्वतन्त्र चिह्न हैं।
2. एक ध्वनि के लिए एक ही तथा प्रत्येक ध्वनि के लिए पृथक् स्वतन्त्र चिह्न प्रत्येक भारतीय लिपि में पाये जाते हैं।
3. वर्णों को ध्वनिविज्ञान के अनुसार वर्गीकृत भी किया गया है।
4. ये विशेषताएं किसी अभारतीय लिपि में नहीं है। इसीलिए भारतीय लिपि को पूर्ण वैज्ञानिक लिपि कहा जाता है।
5. सभी भारतीय लिपियों की वर्णमाला समान है। उनमें अक्षरों के लिए निर्धारित चिह्न की आकृतियाँ ही अलग-अलग हैं।

ॐ

देवनागरी वर्णमाला

स्वर

ह्रस्व (ह्रस्व) या लघु मूल स्वर :- अ, इ, ऋ, ऌ, उ

दीर्घ मूल स्वर :- आ, ई, ॠ, ॡ, ऊ

दीर्घ संयुक्त स्वर :- ए, ऐ, ओ, औ

व्यंजन

स्पृष्ट :-
1. 'क' वर्ग - क, ख, ग, घ, ङ (कण्ठ्य)
2. 'च' वर्ग - च, छ, ज, झ, ञ (तालव्य)
3. 'ट' वर्ग - ट, ठ, ड, ढ, ण (मूर्धन्य)
4. 'त' वर्ग - त, थ, द, ध, न (दन्त्य)
5. 'प' वर्ग - प, फ, ब, भ, म (ओष्ठ्य)

ईषत् स्पृष्ट :- य, र, ल, व (अन्तस्थ)

ईषत् विवृत :- श, ष, स, ह (ऊष्म)

अनु स्वर :- अनुस्वार (ं), विसर्ग (:)

अन्य :- ड़, ढ़, ळ (सरल संस्कृत में प्रयोग नहीं)

संयुक्त व्यंजन (प्रचलित) :- क्त, क्ष, ज्ञ, त्र, द्ध, द्य, द्व, श्र

संयुक्त व्यंजन :- (पूर्व में अनेक संयुक्ताक्षर प्रचलित रहे हैं)

क्त = क् + त (क्त),	क्ष = क् + ष (क्ष),	ज्ञ = ज् + ञ (ज्ञ),
ठ्य = ठ् + य (ठ्य),	ठ्व = ठ् + व (ठ्व),	त्र = त् + र (त्र),
द्ग = द् + ग (द्ग),	द्भ = द् + भ (द्भ),	द्म = द् + म (द्म),
द्य = द् + य (द्य),	श्र = श् + र (श्र),	स्र = स् + र (स्र),
ह्न = ह् + न (ह्न),	ह्म = ह् + म (ह्म),	ह्य = ह् + य (ह्य),
ह्र = ह् + र (ह्र),	ह्ल = ह् + ल (ह्ल),	ह्व = ह् + व (ह्व)।

ॐ

ध्यातव्य

1. अनुस्वार व विसर्ग स्वर के बाद ही आते हैं।

2. अनुस्वार (ं) का प्रयोग **ङ्, ञ्, ण्, न्, म्** के स्थान पर उसके बाद उसी उच्चारण स्थान का अक्षर होने पर विकल्प रूप में प्रचलित है।**अनुस्वार के स्थान पर ङ्, ञ्, ण्, न्, म् का यथास्थान प्रयोग उचित है।**

3. व्यंजन में स्वर जुड़ा होता है। जैसे - क् + अ = क।

4. संयुक्त स्वर ए, ओ का ह्रस्व (लघु) उच्चारण भी होता है।

5. किसी व्यंजन को अस्वर या आधा लिखने के लिए उसके नीचे अस्वर चिह्न (हलन्त) लगा देते हैं या उसे आधा लिखते हैं अथवा सस्वर व्यंजन को उसके नीचे जोड़ कर लिखते हैं। **भक्त, भक्त, भक्त अथवा शक्ति, शक्ति, शक्ति या मक्का, मक्का, मक्का के रूप में एक शब्द को तीन तरह से लिख सकते हैं। तीनों का उच्चारण तथा अर्थ समान है।**

6. संयुक्त व्यंजनों की संख्या असीमित है। प्रचलन के कारण त्त, क्ष, ज्ञ, त्र, द्ध, द्य, द्व, श्र को इसी तरह लिख सकते हैं। द के नीचे ध, य, व जोड़ने का प्रचलन धीरे-धीरे समाप्त हो रहा है। अतः द्ध, द्य, द्व के स्थान पर द्‌ध, द्‌य, द्‌व लिखना उचित है। आधा र को ऊपर रेफ के रूप में एवम् आधे अक्षर के बाद आने पर पूरा र को नीचे तिर्यक् रेखा के रूप में लिखते हैं।

7. र पर उ, ऊ की मात्रा नीचे लगाना (रु, रू) उचित है, परन्तु प्रचलन के कारण रु, रू के रूप में भी लिख सकते हैं।

8. कोई मात्रा आधे अक्षर पर नहीं लगनी चाहिए। **इ की मात्रा से पूर्व आधा अक्षर लिखना अव्यावहारिक है, अतः अस्वर चिह्न (हलन्त) लगाकर लिखें।** प्रचलन के कारण इ की मात्रा के बाद आधा अक्षर, फिर इ से पूर्व उच्चारित होने वाला पूरा अक्षर लिख सकते हैं।

ॐ

संयुक्त वर्ण तथा वर्तनी

संयुक्त वर्ण :- एक स्वर के साथ बोले जाने वाले कई व्यंजनों को मिलाकर संयुक्त वर्ण बनता है। प्राचीन काल में एक संयुक्त वर्ण के सभी व्यंजनों को मिलाकर एक चिह्न से व्यक्त करते थे। धीरे-धीरे संयुक्त वर्ण कम होते गये तथा अब गिने-चुने ही शेष हैं। धीरे-धीरे वे भी समाप्त हो रहे हैं।

आधुनिक समय में सामान्यतः सभी व्यंजन पृथक् लिखे जाते हैं। अभी त्त, क्ष, ज्ञ, त्र, द्ध, द्य, द्व, श्र संयुक्त वर्ण के रूप में लिखे जा रहे हैं, परन्तु अब त्त की अपेक्षा क्त रूप अधिक प्रचलित है जो उपयोगी भी है। द्ध, द्य, द्व को द्‌ध, द्‌य, द्‌व के रूप में लिखने का प्रचलन बढ़ रहा है जो उचित है। अस्वर या आधा र को शिरोरेखा के ऊपर रेफ के रूप में तथा अस्वर या आधे व्यंजन के बाद आने वाले सस्वर या पूरे र को उसके नीचे तिर्यक् रेखा के रूप में लिखने का प्रचलन है, परन्तु आधा र को अस्वर चिह्न (हलन्त) के साथ र् के रूप में भी लिखा जा रहा है। स्पष्टता के लिए आधा अक्षर के बाद पूरा र भी लिखा जाता है।

प्राचीन परम्परा :- भारतीय लिपि में प्राचीनकाल में संयुक्त वर्णों की संख्या बहुत अधिक थी। पुरातत्व की दृष्टि से प्राचीनतम सैन्धव या सारस्वत सभ्यता की सिन्धु घाटी की मोहरों की लिपि में भी वर्तमान देवनागरी लिपि के समान 33 व्यञ्जन ही थे। उसमें संयुक्त वर्णों की संख्या 462 थी। राष्ट्रीय संस्कृत संस्थान के पूर्व उपनिदेशक डॉ. मधुसूदन मिश्र ने सिन्धु लिपि को पढ़ने में सफलता का दावा किया है।

उच्चारण क्रम :- नागरी लिपि को बायें से दायें पढ़ा जाता है। उसमें संयुक्त वर्ण को सामान्यतः ऊपर से नीचे पढ़ा जाता है। इस प्रकार शिरोरेखा से ऊपर लगने वाले रेफ का उच्चारण सबसे पहले होगा, उसके बाद उसके नीचे के वर्ण क्रमशः ऊपर से नीचे के क्रम से पढ़े जाते हैं। सबसे नीचे का

वर्ण स्वर युक्त होता है तथा ऊपर के वर्ण अस्वर (आधे या हलन्त) होते हैं। जैसे कर्म में रेफ को अस्वर या आधा या हलन्त र पढ़ेंगे तथा क्रम में क को अस्वर या आधा और र को सस्वर या पूरा र पढ़ेंगे। मात्रायें व्यंजन के बाद, ऊपर, नीचे या पहले भी लग सकती हैं, परन्तु बाद में ही पढ़ी जाती हैं। अनुस्वार तथा विसर्ग को भी मात्रा की तरह बाद में ही पढ़ते हैं।

जटिलता :- प्राचीन परम्परा के अनुसार संयुक्त वर्ण के कई व्यञ्जन मिलाकर एक ही चिह्न से व्यक्त किये जाते रहे हैं। इस प्रकार संयुक्त वर्ण लिखने से लिपि जटिल हो जाती है तथा अनन्त चिह्न सीखने पड़ते हैं। जैसे क्त = क् + त, क्ष = क् + ष, द्म= द् + म। श्र = श् + र, द्य = द् + य्, ज्ञ = ज् + ञ, त्र = त् + र, ट्य = ट् + य, द्व्य = द् + व् + य आदि।

परम्परागत प्रकाशनों में प्रयोग होने वाले जटिल संयुक्ताक्षर आधुनिक छात्रों के लिए समस्या ही हैं। उनको ऐसे संयुक्त वर्ण अपरिचित ही लगते हैं। क्ष, ज्ञ, द्य के उच्चारण अनेक लोग अशुद्ध करते हैं क्योंकि इनके सही रूप क्ष = क् + ष, ज्ञ = ज् + ञ तथा द्य = द् + य की सही जानकारी नहीं है। इसकी जानकारी होना तो आवश्यक है ही, उससे भी महत्वपूर्ण है सभी अक्षर अलग-अलग स्पष्ट लिखना। इससे उच्चारण के विषय में कोई भ्रम नहीं रह जायेगा।

उपयोगी सुधार :- आधुनिक छात्र अधिकांशतः संयुक्ताक्षरों के स्थान पर अलग-अलग अक्षर ही प्रयोग करते हैं और क्त को क्त तथा द्म को द्‌म ही लिखते हैं। जैसे भक्त, रक्त, सशक्त, पद्‌म, छद्‌म आदि। **श्रीमद्भगवद्गीता** जैसे शब्द पढ़ पाना उनके लिए कठिन समस्या ही है। उनके लिए **श्रीमद्‌भगवद्‌गीता** लिखना ही उपयुक्त है। इसी तरह **श्रीमद्राम** लिखने पर उसमें राम शब्द कहां है, यह छात्र नहीं समझ पाते हैं। वे श्रीमद्‌राम के रूप में लिखने पर ही समझ सकते हैं।

अभी भी द के नीचे ध, य, व जोड़कर लिखने की परम्परा बनी हुई है, परन्तु कुछ पुस्तकों तथा पत्रिकाओं में विद्या को विद्‌या, बुद्ध को बुद्‌ध, विद्वान् को विद्‌वान् के रूप में लिखा जाने लगा है। इसी तरह अस्वर या आधा र को

ऊपर रेफ तथा पूरा र को नीचे तिर्यक रेखा के रूप में लिखा जा रहा है। कर्म को कर्‌म तथा क्रम को क्‌रम के रूप में भी लिख सकते हैं। व्याकरण के अनुसार ये रूप शुद्ध हैं। इस तरह के प्रयोग पूर्णतः उचित हैं, शुद्ध (शुद्‌ध) उच्चारण तथा अर्थ समझने में सरलता की दृष्टि (दृष्‌टि) से सराहनीय हैं तथा लिपि को अधिक सुगम तथा वैज्ञानिक बनाने में सहायक हैं।

अस्वर या आधा अक्षर :- किसी व्यंजन को अस्वर या आधा लिखने के लिए उसके नीचे अस्वर चिह्न लगा देते हैं, अथवा उसे आधा लिखते हैं या सस्वर व्यंजन को उसके नीचे जोड़ कर लिखते हैं।

भक्‌त, भक्त, भक्त अथवा शक्‌ति, शक्ति, शक्ति या मक्‌का, मक्का, मक्का के रूप में एक शब्द को तीन तरह से लिख सकते हैं। तीनों का उच्चारण तथा अर्थ समान है। पत्र-पत्रिकाओं तथा पुस्तकों में तीनों में कोई भी रूप मिल सकता है। परम्परावादी प्रकाशनों में वर्णों को जोड़कर लिखते हैं तथा आधुनिक प्रकाशनों में अधिकतर आधा अक्षर या अस्वर चिह्न (हलन्त) लगाकर लिखा जाता है। इस प्रकार सभी व्यंजन पृथक् लिखने से शुद्ध उच्चारण करना सरल होता है।

पंचम वर्ण तथा अनुस्वार :- सभी वर्गों के पंचम स्पर्श व्यंजन नासिक्य कहे जाते हैं। इनके अस्वर रूप को नियमतः अन्य व्यंजनों के समान अस्वर चिह्न लगाकर या आधा लिखा जाना चाहिए। परन्तु इनके स्थान पर अनुस्वार का प्रयोग किया जाने लगा है। इससे यह समझना कठिन है कि अनुस्वार को किस व्यंजन के स्थान पर प्रयोग किया गया है और उसे क्या पढ़ा जाये। सम्बन्ध को संबंध के रूप में लिख देने से यह समझना कठिन हो सकता है कि कौन सा अनुस्वार म् के स्थान पर है और कौन सा न् के स्थान पर। अतः व्याकरण के अनुसार सम्बन्ध के रूप में लिखना ही उचित है।

अनुस्वार का प्रयोग किसी व्यंजन से पूर्व उसी उच्चारण स्थान का पंचम वर्ण होने पर विकल्प रूप में प्रचलित है अर्थात् सर्वत्र नहीं। विचार करें कि अन्य को अंय या अम्ल को अंल अथवा अन्वय को अंवय के रूप में लिखा जाये तो कैसे पढ़ा जा सकेगा। अतः यथासम्भव ङ्, ञ्, ण्, न्, म् को

स्पष्ट लिखें, इनके स्थान पर अनुस्वार का प्रयोग न करें। ङ्, ञ् का प्रचलन न होने से इनके स्थान पर अनुस्वार का प्रयोग कर सकते हैं। यह व्यावहारिक आवश्यकता है। प्रचलन में आ जाये तो ङ्, ञ् का प्रयोग करना ही उचित है।

अस्वर चिह्न (हलन्त) तथा विसर्ग :- शब्दों की वर्तनी में अस्वर चिह्न (हलन्त) तथा विसर्ग का ध्यान रखना चाहिए। हिन्दी की अधिकतर पत्र-पत्रिकाओं में इसका ध्यान नहीं रखा जाता है। संस्कृत में ये बहुत महत्वपूर्ण होते हैं। अतः इनका उचित प्रयोग अवश्य करें। हलन्त तथा विसर्ग प्रचलित भी हैं, अतः इनका प्रयोग करना पूर्णतः व्यावहारिक है।

र अक्षर के विभिन्न रूप : र अक्षर को लिखने के विभिन्न तरीकों से भी समस्या होती है। यदि र अक्षर अस्वर हो तो इसे सस्वर व्यंजन के ऊपर रेफ के रूप में लिखा जाता है और यदि र से पूर्व कोई अस्वर व्यंजन हो तो र को अस्वर या आधे अक्षर के नीचे तिर्यक रेखा के रूप में जोड़ देते हैं।

किसी अक्षर के नीचे जोड़ देने से सामान्यतः ऐसा प्रतीत होता है कि र अक्षर आधा है और उसके ऊपर लिखा गया अक्षर पूरा या सस्वर है जबकि वह अक्षर आधा या अस्वर होता है तथा र सस्वर या पूरा। प्र में प् अक्षर आधा या अस्वर है तथा र अक्षर सस्वर या पूरा। इस दृष्टि से प्र को प्र या प्र के रूप में लिखा जाना अधिक उचित होगा। इसी प्रकार कर्म को कर्‌म के रूप में लिखा जाना चाहिए जिससे वर्तनी तथा उच्चारण शुद्ध तथा स्पष्ट हो सके। परन्तु प्रचलन के कारण कर्म तथा क्रम जैसे रूपों को अपनाया गया है।

र में उ, ऊ की मात्रा :– जब र में उ तथा ऊ की मात्रा लगती है तो उसका रूप बदल जाता है। सामान्यतः देखा गया है कि र के साथ उ तथा ऊ की मात्रा लगाने में रु तथा रू का अन्तर लोग समझ नहीं पाते तथा अशुद्ध प्रयोग करते हैं। अतः आधुनिक लेखन में र में भी उ, ऊ की मात्रा अन्य अक्षरों की ही तरह उसके नीचे (रु, रू के रूप में) लगायी जा रही है जो पूरी तरह उचित है। प्रचलन के कारण रु, रू के प्रयोग स्वीकार किये गये हैं।

इ की मात्रा :- सभी स्वरों की मात्रा व्यंजन के बाद या ऊपर या नीचे लगती है, परन्तु इ की मात्रा उसके पहले लगायी जाने लगी है। स्वर इ का

उच्चारण व्यंजन के बाद होता है, अतः उसकी मात्रा भी बाद में ही लगनी चाहिए। इसमें समस्या तब आती है जब संयुक्त वर्ण में इ की मात्रा लगानी होती है। भक्ति में संयुक्त वर्ण क्त से पहले इ की मात्रा लगाना तो उचित है, परन्तु अब सामान्यतः क्त के स्थान पर क्त ही लिखा जाता है। भक्ति के रूप में लिखने पर इ की मात्रा वास्तव में अस्वर या आधे अक्षर क् पर लगी होती है जो अनुचित है। स्वर की मात्रा सदैव सस्वर या पूरे अक्षर पर ही लग सकती है, अस्वर या आधे अक्षर पर नहीं।

इसका उचित समाधान तो यही है कि इ की मात्रा का स्वरूप बदला जाये और व्यंजन से पहले लगने वाली खड़ी रेखा हटा दी जाये। इस प्रकार इ की मात्रा अक्षर के ऊपर केवल अधोमुखी अर्धचन्द्र या अर्धवृत्त के रूप में लगायी जायेगी। परन्तु इसके प्रचलन या स्वीकार्यता के लिए बड़े स्तर पर व्यापक प्रयास करने होंगे।

व्याकरण की दृष्टि से उचित यही है कि इ की मात्रा वाले अक्षर से पहले यदि अस्वर या आधा अक्षर आता है तो उसे आधा न लिखकर अस्वर या हलन्त चिह्न लगाकर लिखा जाये जैसे भक्‌ति, शक्‌ति, शान्‌ति, कान्‌ति आदि। परन्तु प्रचलन के कारण भक्ति, शान्ति जैसे प्रयोगों को भी विकल्प रूप में स्वीकार्य माना गया है।

यी-ई, ये-ए के प्रयोग :- हिन्दी शब्दों की वर्तनी में यी के स्थान पर ई तथा ये के स्थान पर ए लिखने का बहुत प्रचलन है। इसका परिणाम यह हुआ कि कुछ लोग संस्कृत के तत्सम शब्दों में भी यि, यी के स्थान पर इ, ई लिखने लगे जो पूर्णतः अनुचित है। दायित्व को दाइत्व तो नहीं ही लिखा जा सकता है। संस्कृत में व्यंजन प्रयोग की बहुलता है तथा अपवाद छोड़ कर दो स्वर एक साथ नहीं आते हैं। इसका अर्थ है कि स्वर का स्वतन्त्र प्रयोग शब्द के आदि में ही हो सकता है, मध्य या अन्त में स्वर का प्रयोग व्यंजन के साथ मात्रा के रूप में होता है, स्वतन्त्र स्वर के रूप में नहीं।

हिन्दी शब्दों में ध्यान रखना चाहिए कि यदि मूल शब्द में य है तो उसके बहुवचन, स्त्रीलिंग तथा भूतकाल आदि रूपों में भी य रहेगा, जैसे नया से

नयी-नये, गया से गयी,-गये आदि। जिन शब्दों के मूल रूप में आ है, उसके ऐसे रूपों में ई, ए रहेगा जैसे हुआ-हुई-हुए आदि। जहां पर इस तरह निर्णय करने में असुविधा हो वहां ध्यान रखें कि संस्कृत ही मूल भाषा है, अतः संस्कृत के अनुसार व्यंजन प्रयोग को वरीयता दें तथा दो स्वरों के निकट प्रयोग से यथासम्भव बचें।

संयुक्ताक्षर : व्यावहारिक प्रयोग

1. शुद्धता की दृष्टि से तो सभी अक्षर स्पष्ट लिखे जाने चाहिये, परन्तु व्यावहारिकता की दृष्टि से क्त, क्ष, ज्ञ, त्र, द्ध, द्य, द्व, श्र को इसी रूप में लिख सकते हैं। द्ध, द्य, द्व को द्‌ध, द्‌य, द्‌व के रूप में लिखने का प्रचलन बढ़ रहा है जो अपनाने योग्य है। अब अधिकांश संयुक्ताक्षर अप्रचलित हो गये हैं। ट्य (ट् + य), द्व्य (द् + व् + य) आदि को पृथक् ही लिखें। भक्त को भक्त, पद्म को पद्म, अकाट्य को अकाट्य न लिखें। इसी तरह उद्देश्य, पट्टी, मिट्टी, मक्का के स्थान पर उद्‌देश्य, पट्‌टी, मिट्‌टी, मक्का लिखना उचित है। ह के नीचे कोई भी अक्षर जोड़ना अव्यवहारिक है, अतः अस्वर या आधा ह को ह् या ह्‍ के रूप में लिखकर उसके बाद का अक्षर लिखें।

2. अस्वर या आधा र को शिरोरेखा के ऊपर रेफ के रूप में तथा अस्वर या आधे व्यंजन के बाद आने वाले सस्वर या पूरे र को उसके नीचे तिर्यक् रेखा के रूप में लिखने का प्रचलन है, अतः इसे इसी प्रकार से लिख सकते हैं। आधा र को अस्वर चिह्न के साथ र् के रूप में भी लिखा जा रहा है। यदि आधा र शब्द का पहला अक्षर हो तो रेफ के स्थान पर र् ही लिखना होगा जैसे र्‌यूमर। स्पष्टता के लिए आधा अक्षर के बाद पूरा र भी लिखा जाता है। अस्वर या आधा र के पश्चात् या पूर्व कोई अन्य आधा अक्षर हो तो रेफ के स्थान पर र् लिखना ही उचित है।

3. सामान्यतः आधा अक्षर को बाद के पूरे अक्षर के साथ मिलाकर संयुक्ताक्षर माना जाता है, अतः आधा र को रेफ के रूप में पूरे अक्षर के ऊपर ही लिखते हैं। इसी नियम से इ की मात्रा आधे अक्षर से पूर्व लगाते हैं।

4. जिन अक्षरों के आधे रूप प्रचलित हैं, उनके अस्वर रूपों को आधे अक्षर के रूप में तथा अन्य अक्षरों को अस्वर या हलन्त चिह्न लगाकर लिखें।

5. ऋ स्वर है, अतः आ, इ, उ, ए, ओ आदि के समान इसकी मात्रा भी ह सहित सभी व्यंजनों के नीचे ही लगेगी। कुमार के समान कृति तथा हृदय भी लिखा जायेगा।

6. आधा या अस्वर श होने पर तथा श में ऋ की मात्रा लगने पर श् के स्थान पर प्राचीन रूप में बहुधा लिख दिया जाता है जो अब अव्यावहारिक है। अतः विश्व के स्थान पर विश्व तथा शृंखला, शृंग आदि लिखना उचित है।

7. र पर उ, ऊ की मात्रा नीचे लगाना (रु, रू) उचित है, परन्तु प्रचलन के कारण रु, रू के रूप में भी लिख सकते हैं।

8. प्रचलन के कारण संयुक्ताक्षर के रूप में इ की मात्रा के बाद आधा अक्षर, फिर पूरा अक्षर लिख सकते हैं। इ की मात्रा वाले व्यंजन से पहले एक से अधिक आधे अक्षर हों तो उनको अस्वर चिह्न (हलन्त) लगाकर इ की मात्रा से पहले लिखें। पट्‌टिका के रूप में लिखना उचित है।

9. पंचम अक्षरों ङ्, ञ्, ण्, न्, म् के पश्चात् उसी उच्चारण स्थान का व्यंजन होने पर ही अनुस्वार का प्रयोग विकल्प रूप में प्रचलित है अर्थात् सर्वत्र नहीं। ङ्, ञ् के स्थान पर उसके पश्चात् उसी उच्चारण स्थान का व्यंजन होने पर अनुस्वार का प्रयोग किया जा सकता है क्योंकि ङ् तथा ञ् लोक व्यवहार में प्रचलित नहीं हैं। इसी प्रकार य, र, ल, व, श, ष, स, ह से पूर्व उसी उच्चारण स्थान का ङ्, ञ्, ण्, न्, म् होने पर उसके स्थान पर अनुस्वार का प्रयोग करना प्रचलित है।

10. प्लुत स्वर के लिए 3 का अंक लिखते हैं, जैसे ओ3म्। व्यावहारिक दृष्टि से प्लुत अब अप्रचलित है। इससे अर्थ पर प्रभाव नहीं पड़ता है।

11. प्लुत के समान ही उदात्त, अनुदात्त, स्वरित भी अब प्रचलित नहीं हैं, अतः इनका प्रयोग करना अव्यवहारिक है।

ॐ

वर्ण शिक्षा

परिचय :- वर्ण शिक्षा के अन्तर्गत वर्णमाला तथा वर्णों के शुद्ध उच्चारण का ज्ञान कराया जाता है। प्राचीन भाषाशास्त्र में इसे स्वतन्त्र तथा महत्वपूर्ण विषय माना जाता रहा है।

अंग :- इसके पाँच अंग हैं।

1. अक्षर, 2. स्थान, 3. प्रयत्न, 4. यत्न, 5. प्राण

1. अक्षर तथा वर्णमाला

परिचय :- वैदिक वर्णमाला सर्वाधिक व्यापक, स्वयम् में पूर्ण, वैज्ञानिक तथा पूर्णतः तर्क सम्मत है। ध्वनि विज्ञान के अनुसार इसका वर्गीकरण किया गया है।

विभाग

परिचय :- स्वतन्त्र रूप से या सहायता से उच्चारण होने की क्षमता के अनुसार वर्णमाला के दो मुख्य भाग किये गये हैं।

1. स्वर

2. व्यंजन

स्वर

परिचय :- किसी अन्य अक्षर की सहायता लिये विना स्वतन्त्र रूप से स्वयम् उच्चारण हो सकने वाली ध्वनियों को व्याकरण में स्वर कहते हैं।

स्वर भेद

1. स्वरों को मूल तथा संयुक्त स्वरों में विभाजित किया गया है।

2. उच्चारण में लगने वाले समय या मात्रा के आधार पर स्वरों के तीन

रूप ह्रस्व या लघु, दीर्घ तथा प्लुत होते हैं।

3. उच्चारण के प्रकार के अनुसार स्वरों के दो भेद सामान्य या अननुनासिक तथा अनुनासिक होते हैं।

4. वेदमन्त्रों में बलाघात के आधार पर स्वरों के तीन भेद उदात्त, अनुदात्त तथा स्वरित भी होते हैं।

ध्यातव्य :- अब प्लुत, उदात्त, अनुदात्त तथा स्वरित नामक भेद व्यवहार में प्रचलित नहीं हैं।

व्यंजन

परिचय :- स्वर की सहायता से उच्चारण होने वाली ध्वनि को व्याकरण में व्यंजन कहते हैं।

विशेष :- 1. वैदिक वर्णमाला में व्यंजन 33 हैं।

2. इनमें 25 स्पर्श व्यंजन पाँच वर्गों में रखे गये हैं। प्रत्येक वर्ग में पाँच अक्षर हैं तथा उनका उच्चारण स्थान समान हैं।

3. इनके उच्चारण में जिह्वा मुख में किसी विशेष स्थान को स्पर्श करती है, अतः इनको स्पर्श व्यंजन कहा गया है।

4. य, र, ल, व को अन्तस्थ व्यंजन कहते हैं। इनकी स्थिति स्वर तथा व्यंजनों के मध्यवर्ती है। सन्धि होने पर स्वर इन अन्तस्थ व्यंजनों में परिवर्तित हो जाते हैं।

5. श, ष, स, ह को ऊष्म व्यंजन कहते हैं।

2. उच्चारण स्थान

परिचय :- प्रत्येक मूल ध्वनि या अक्षर का उच्चारण मुख के भीतर किसी विशेष स्थान से होता है। उसी को उस अक्षर का 'स्थान' कहते हैं।

ध्यातव्य :- अक्षरों का 'उच्चारण स्थान' ज्ञात होने पर हम उनका शुद्ध उच्चारण कर सकते हैं।

स्थान विभाग

ये उच्चारण स्थान पाँच हैं :-

1. कण्ठ, 2. तालु, 3. मूर्धा, 4. दन्त, 5. ओष्ठ।

1. कण्ठ :- स्वर अ, क वर्ग (क, ख, ग, घ, ङ), ह तथा विसर्ग (:) का उच्चारण स्थान कण्ठ है।

2. तालु :- स्वर इ, च वर्ग (च, छ, ज, झ, ञ), य तथा श का उच्चारण स्थान तालु है।

3. मूर्धा :- स्वर ऋ, ट वर्ग (ट, ठ, ड, ढ, ण) र तथा ष का उच्चारण स्थान मूर्धा है।

4. दन्त :- स्वर ऌ, त वर्ग (त, थ, द, ध, न), ल तथा स का उच्चारण स्थान दन्त है।

5. ओष्ठ :- स्वर उ, प वर्ग (प, फ, ब, भ, म) तथा व का उच्चारण स्थान ओष्ठ है।

विशेष 1 :- संयुक्त स्वर ए (अ + इ) तथा ऐ (अ + ए) का उच्चारण स्थान कण्ठ-तालु एवम् ओ (अ + उ) तथा औ (अ + ओ) का उच्चारण स्थान कण्ठ-ओष्ठ है।

विशेष 2 :- अनुनासिक या नासिक्य वर्ण का उच्चारण स्थान अपने वर्ग स्थान के साथ नासिका भी है।

विशेष 3 :- अनुस्वार का उच्चारण स्थान नासिका माना गया है।

विशेष 4 :- अनुस्वार का प्रयोग नासिक्य अक्षर के स्थान पर होता है, अतः उसका स्थान भी उस अक्षर के अनुसार ही होता है। जैसे प वर्ग का उच्चारण स्थान ओष्ठ है, परन्तु म् नासिक्य वर्ण है, अतः म् का उच्चारण स्थान ओष्ठ-नासिका होता है। म् के स्थान पर प्रयोग होने पर अनुस्वार का स्थान भी ओष्ठ-नासिका ही होगा।

इसी प्रकार सभी नासिक्य वर्णों ङ्, ञ्, ण्, न्, म् का उच्चारण स्थान नासिका तथा उस वर्ग का स्थान संयुक्त रूप से होता है।

3. प्रयत्न

परिचय :- अक्षर का उच्चारण करने के लिए जो प्रयास करना पड़ता है, उसे प्रयत्न कहते हैं।

भेद

प्रयत्न पाँच प्रकार के होते हैं :

1. विवृत
2. स्पृष्ट
3. ईषत् स्पृष्ट
4. ईषत् विवृत
5. संवृत

1. विवृत :- विवृत का अर्थ है खुला हुआ। स्वरों का उच्चारण करते समय मुख खुला रहता है तथा जिह्वा का स्पर्श किसी स्थान से नहीं होता है, इसीलिए स्वरों का प्रयत्न 'विवृत' कहलाता है।

विशेष :- ऋ स्वर है तथा इसका उच्चारण स्थान मूर्धा है। अतः ऋ का उच्चारण करते समय मुख खुला रहेगा, जिह्वा (जीभ) मूर्धा की ओर अर्थात् ऊपर मुड़ेगी परन्तु स्पर्श नहीं करेगी। इसका ध्यान रखेंगे तो ऋ का शुद्ध उच्चारण कर सकते हैं।

2. स्पृष्ट :- जिन अक्षरों का उच्चारण करते समय जिह्वा उनके उच्चारण स्थान को स्पर्श करती है, उनका प्रयत्न स्पृष्ट कहा जाता है। सभी पाँच वर्गों के 25 व्यंजनों का उच्चारण प्रयत्न स्पृष्ट है। इसीलिए उनको स्पर्श व्यंजन या स्पृष्ट व्यंजन भी कहते हैं।

3. ईषत् स्पृष्ट :- अन्तस्थ वर्णों य, र, ल, व का उच्चारण करते समय जिह्वा अपने उच्चारण स्थान को बहुत थोड़ा स्पर्श करती है। अतः उनका प्रयत्न ईषत् स्पृष्ट कहा जाता है। (ईषत् का अर्थ है कुछ या थोड़ा।)

4. ईषत् विवृत :- ऊष्म वर्णों श, ष, स, ह का उच्चारण करते समय मुख

थोड़ा खुलता है। अतः इनका प्रयत्न ईषत् विवृत है।

5. संवृत :- संवृत का अर्थ है बन्द। प वर्ग के उच्चारण में ओष्ठों के मिलने से मुख बन्द हो जाता है, अतः संवृत प्रयत्न कह सकते हैं।

4. यत्न

परिचय :- यत्न को बाह्य प्रयत्न भी कहा गया है। हम इसे उच्चारण विधि के अनुसार अक्षरों का वर्गीकरण भी कह सकते हैं।

1. स्वर :- स्वर वर्णों के तीन यत्न उदात्त, अनुदात्त, स्वरित हैं। उदात्त उच्चारण में उच्च बलाघात, अनुदात्त में निम्न बलाघात तथा स्वरित में मध्यम बलाघात होता है। वेदमन्त्रों के पाठ में इनका प्रयोग होता रहा है, परन्तु अब दुर्लभ है।

2. मृदु व्यंजन या घोष वर्ण :- य, र, ल, व, ह तथा पाँचों वर्गों के तीसरे, चौथे तथा पाँचवें वर्ण मदु या घोष कहलाते हैं।

3. कठोर व्यंजन या अघोष वर्ण :- श, ष, स तथा पाँचों वर्गों के प्रथम तथा द्वितीय वर्ण कठोर या अघोष कहलाते हैं।

5. प्राण

परिचय :- अक्षरों या वर्णों के उच्चारण में प्राणवायु के प्रयोग की मात्रा को व्याकरण में अक्षर का प्राण कहा गया है।

विभाग :- प्राण के अनुसार अक्षरों के दो विभाग किये गये हैं :

1. अल्प प्राण :- पाँच वर्गों के प्रथम, तृतीय, पंचम वर्ण तथा अन्तस्थ य, र, ल, व अल्प प्राण कहलाते हैं।

2. महाप्राण :- पाँचों वर्गों के द्वितीय तथा चतुर्थ वर्ण, ह तथा ऊष्म, श, ष, स को महाप्राण कहते हैं। इनमें अति सूक्ष्म ह की ध्वनि मिली होती है।

ॐ

शब्द रचना

शब्द

परिचय :- भाषा में प्रयोग होने वाली सूक्ष्मतम ध्वनियों या अक्षरों के संयोग से शब्द बनते हैं। शब्द भाषा की सबसे छोटी इकाई है।

विभाग

शब्द दो प्रकार के होते हैं : **1. सार्थक 2. निरर्थक**

1. सार्थक शब्द :- जिस शब्द का कोई अर्थ होता है, उसे सार्थक शब्द कहते हैं।

2. निरर्थक शब्द :- जिनका कोई अर्थ नहीं होता है, उन्हें निरर्थक शब्द कहते हैं।

विशेष :- व्याकरण में केवल सार्थक शब्दों पर ही विचार होता है।

शब्द भेद

संस्कृत व्याकरण की दृष्टि से **शब्द के पाँच भेद** होते हैं।

1. नाम 2. धातु 3. अव्यय 4. उपसर्ग 5. प्रत्यय

1. नाम

परिचय :- नाम शब्द से किसी व्यक्ति, वस्तु, स्थान, भाव आदि का बोध होता है।

विशेष :- भाषा में सबसे अधिक नाम शब्द ही प्रयोग होते हैं।

नाम शब्द विभाग

नाम शब्दों के पाँच उपभेद होते हैं :

1. संज्ञा, 2. विशेषण, 3. सर्वनाम, 4. संख्या, 5. क्रम

1. संज्ञा

परिचय :- ये शब्द किसी व्यक्ति, वस्तु, स्थान, भाव, विचार आदि का नाम या परिचय बताते हैं।

उदाहरण :- दिनेश, बालक, छात्र, विद्यालय आदि।

2. विशेषण

परिचय :- इन शब्दों से संज्ञा या सर्वनाम की विशेषता व्यक्त होती है।

उदाहरण :- सुन्दर, बड़ा, छोटा, महान् आदि।

3. सर्वनाम

परिचय :- सर्वनाम शब्द संज्ञा शब्दों के स्थान पर प्रयोग हो कर उसका बोध संकेत से करा देते हैं।

उदाहरण :- यह, वह, यहाँ, वहाँ, कौन आदि।

4. संख्या

परिचय :- इन शब्दों से किसी संख्या का ज्ञान होता है।

उदाहरण :- पांच बालक, सात छात्राएं आदि।

विशेष :- अधिकतर संख्या शब्द अव्यय के रूप में प्रयोग होते हैं परन्तु प्राचीन साहित्य में बहुधा लिंग के अनुसार इनमें परिवर्तन भी मिलता है। सामान्यतः छोटी संख्याओं में अपवाद के रूप में ऐसे प्रयोग मिलते हैं। बड़ी संख्याओं में ये भेद कम होते हैं।

ध्यातव्य :- सरल संस्कृत व्याकरण में अव्यय के रूप में संख्या का प्रयोग करने का विकल्प सर्वत्र स्वीकार्य है।

5. क्रमवाची

परिचय :- इन शब्दों से अनुक्रम का बोध होता है।

उदाहरण :- प्रथम, द्वितीय, तृतीय, चतुर्थ, पंचम, षष्ठ आदि।

विशेष :- ये शब्द संख्या शब्दों से ही प्रत्यय लगाकर बनते हैं तथा लिंग-वचन से प्रभावित भी होते हैं।

2. धातु

परिचय :- संस्कृत में नाम तथा क्रिया पदों के मूल में कुछ शब्दांश होते हैं जो धातु कहे जाते हैं।

उदाहरण :- पठ्, गम्, लिख् आदि।

विशेष

1. संस्कृत व्याकरण में धातुओं का महत्व सबसे अधिक है।
2. शब्दों का अर्थ समझने के लिए धातु का ज्ञान अनिवार्य है।
3. संस्कृत भाषा में लगभग तीन हजार धातुएं हैं। पाणिनीय धातुपाठ में 1970 धातुएं हैं।
4. संस्कृत भाषा में क्रियाओं के साथ ही संज्ञा तथा विशेषण शब्द भी धातु से ही बनते हैं।
5. धातु में कृत्, तद्धित, उणादि प्रत्यय लगाने से संज्ञा व विशेषण शब्द बनते हैं।
6. धातु में आख्यातिक विभक्ति प्रत्यय लगाने से क्रिया पद बनते हैं।

3. अव्यय

परिचय :- अव्यय शब्दों में व्याकरण के अनुसार कोई परिवर्तन नहीं होता है। अतः अव्यय शब्द स्वयम् ही पद भी होते हैं। इनका केवल शब्दार्थ ही सीखना होता है, व्याकरण नहीं।

उदाहरण :- सदा, एव, विना, तथा, यथा आदि।

विशेष

1. कुछ अव्यय क्रियाविशेषण होते हैं।

उदाहरण :- नाना, पृथक्, विना, वृथा आदि।

2. कुछ अव्यय सर्वनामों से बनते हैं।

उदाहरण :- इदानीम्, सदा, यथा, तथा आदि।

3. कुछ अव्यय संख्यावाची शब्दों से बनते हैं,

उदाहरण :- एकधा, द्विधा, द्विः, त्रिः आदि।

4. कुछ अव्यय संज्ञाओं में तद्धित प्रत्यय लगाकर बनते हैं।

उदाहरण :- पुत्रवत्, अग्निसात् आदि।

5. कुछ संज्ञाओं के द्वितीया एकवचन रूप प्रायः अव्यय के रूप में प्रयोग होते हैं।

उदाहरण :- सत्यम्, सुखम् आदि।

4. उपसर्ग

परिचय :- ये शब्दांश होते हैं और धातु, प्रातिपदिक या पद से पूर्व लगकर उनको विशेष अर्थ देते हैं। वास्तव में इनका अपना कोई निश्चित अर्थ नहीं होता है परन्तु इनके प्रयोग से शब्दों तथा धातुओं के अर्थ में महत्वपूर्ण परिवर्तन हो जाते हैं।

उदाहरण :- स्वयम् उपसर्ग शब्द में सर्ग शब्द से पहले उप जुड़ा हुआ है जो एक उपसर्ग है।

प्रमुख उपसर्ग :- 1. अ, 2. अन्, 3. अति, 4. अधि, 5. अनु, 6. अप, 7. अपि, 8. अभि, 9. अव, 10. आ, 11. उत्, 12. उप, 13. कु, 14. तु, 15. दुः, 16. नि, 17. निः, 18. पर, 19. परा, 20. परि, 21. प्र, 22. प्रति, 23. वि, 24.सम्, 25. सु आदि।

विशेष

1 :- वेद में उपसर्गों का प्रयोग स्वतन्त्र अव्यय शब्दों के रूप में ही अधिकतर हुआ है।

2 :- ये प्रायः धातु से बने क्रियापदों या नाम शब्दों से पूर्व जुड़े होते हैं।

3 :- उपसर्गों की संख्या सीमित ही है।

ध्यातव्य :- उपसर्गों के अर्थ सुविधा के लिए समझे जा सकते हैं, परन्तु इतना स्पष्ट समझ लेना चाहिए कि इनके अर्थ में लचीलापन होता है। अर्थ भावगम्य होते हैं, मूल भाव से बहुत दूर नहीं जाते हैं, परन्तु उपसर्गों के अर्थ धातु या नाम शब्दों की भांति निश्चित नहीं बताये जा सकते हैं।

उपसर्गों के सामान्य अर्थ एवम् प्रयोग

1. अ :- नहीं।

विशेष 1 :- शब्द से पूर्व लगने पर अ निषेधात्मक अर्थ बताता है।

विशेष 2 :- क्रिया या आख्यात पदों से पूर्व लगने पर अ उपसर्ग नहीं, अपितु विभक्ति का अर्थ देता है। प्रायः भूतकाल के क्रियारूपों से पूर्व अ का प्रयोग इस प्रकार होता है।

2. अन् :- नहीं। उपसर्ग के रूप में अ के समान अर्थ। शब्द के आदि में स्वर होने पर अ के स्थान पर अन् का प्रयोग होता है।

3. अति :- अत्यधिक, अतिशय।

(सीमा का उल्लंघन करने के अर्थ में भी प्रयोग होता है।)

4. अधि :- ऊपर, अधिक, पूर्णतः, पा लेना।

5. अनु :- पीछे।

6. अप :- निम्नता, बुराई, दूर।

7. अपि :- निकट

8. अभि :- ओर, विशेष, प्रमुख

9. अव :- नीचे, दूर, प्राप्त

10. आ :- तक

11. उत् :- ऊपर, उच्च,

12. उप :- निकट

13. कु :- बुरा, अनुचित

14. दुः :- बुरा, कठिन

15. नि :- निश्चित, नीचे

16. निः (निर्, निस्, निश्, निष्) :- विना, बाहर, निश्चित

17. पर :- परे, पश्चात्, बाद में

18. परा :- पीछे, विपरीत

19. परि :- सभी ओर

20. प्र :- अधिक

21. प्रति :- ओर, विपरीत, विलोम

22. वि :- विशेष, विना, अलग

23. सम् :- सम्यक्, भलीभांति, अच्छी तरह

24. सु :- अच्छा

5. प्रत्यय

परिचय :- प्रत्यय या परसर्ग शब्दों के बाद जुड़ते हैं। इससे उनको निश्चित अर्थ प्राप्त होता है।

विशेष :- इनकी संख्या बहुत अधिक है। संस्कृत व्याकरण में प्रत्ययों का प्रयोग सीखना ही सबसे अधिक महत्वपूर्ण है।

प्रत्यय - विभाग

प्रत्ययों को पाँच भागों में विभाजित किया जा सकता है :-

1. कृत प्रत्यय
2. तद्धित या उणादि प्रत्यय
3. नामिक विभक्ति (सुप्) प्रत्यय
4. आख्यातिक विभक्ति (तिङ्) प्रत्यय
5. लिंग प्रत्यय

1. कृत प्रत्यय :- धातु के बाद जुड़कर उसे नाम अर्थात् संज्ञा या विशेषण बनाते हैं।

2. तद्धित या उणादि प्रत्यय :- संज्ञा तथा विशेषण शब्दों के बाद जुड़कर उसे नया विशेष अर्थ देते हैं।

3. नामिक विभक्ति (सुप्) प्रत्यय :- नाम शब्दों से जुड़कर वाक्य में उसका कारक व वचन निश्चित करते हैं।

4. आख्यातिक विभक्ति (तिङ्) प्रत्यय :- धातु के बाद जुड़कर उसे क्रियापद बनाते हैं और उसका लकार, वचन, पुरुष तय कर देते हैं।

5. लिंग प्रत्यय :- किसी शब्द के बाद जुड़कर उसका लिंग निर्धारित करते हैं।

शब्द विकार

परिचय :- विकार शब्द का अर्थ है विशेष कार्य। शब्दों का वाक्यों में प्रयोग करते समय उनको स्पष्ट तथा विशेष अर्थ देने के लिए उनमें कुछ विशेष प्रत्यय जुड़ते हैं। इस परिवर्तन को विकार कहते हैं।

शब्द विकार विभाग

शब्द विकार के तीन विभाग हैं : 1**. लिंग 2. वचन 3. पुरुष**

लिंग

परिचय :- लिंग से किसी के स्त्री, पुरुष या दोनो में कोई न होने का बोध होता है।

लिंग विभाग

संस्कृत व्याकरण में लिंग तीन प्रकार के होते हैं :

1. पुल्लिंग, 2. स्त्रीलिंग, 3. उभय लिंग

1. पुल्लिंग :- जिन 'नाम' शब्दों से पुरुष जाति का बोध होता है, वे पुल्लिंग में होते हैं।

उदाहरण :- बालक, नर, पुरुष।

2. स्त्रीलिंग :- जिन 'नाम' शब्दों से नारी जाति का बोध होता है, वे स्त्रीलिंग में होते हैं।

उदाहरण :- बालिका, नारी, स्त्री।

3. उभय लिंग :- जो शब्द स्पष्टतः पुल्लिंग अथवा स्त्रीलिंग में नहीं आते हैं, वे 'उभय लिंग' में होते हैं।

उदाहरण :- पुस्तक, मार्ग, नगर इत्यादि।

वचन

परिचय :- वचन से व्यक्ति, वस्तु, स्थान आदि की संख्या न्यून या अधिक होने का बोध होता है।

वचन विभाग

संस्कृत व्याकरण में वचन तीन प्रकार के होते हैं :

1. एक वचन, 2. द्विवचन, 3. बहुवचन

1. एकवचन :- एक वचन शब्दों से 'एक से कम' तथा 'एक' संख्या का बोध होता है।

उदाहरण :- 'अर्ध नगर', एक पुस्तक इत्यादि।

2. द्विवचन :- द्विवचन शब्दों से दो संख्या का बोध होता है।

उदाहरण :- बालकौ (दो बालक)

3. बहुवचन :- बहुवचन शब्दों से दो से अधिक संख्या का बोध होता है।

उदाहरण :- बालकाः, नराः, पुत्राः इत्यादि।

पुरुष

परिचय :- व्याकरण में संवाद या वार्तालाप में सम्मिलित होने वाले पक्षों बात कहने वाले, सुनने वाले तथा जिसके विषय में बात की जा रही होती है, उसका बोध पुरुष से होता है।

पुरुष विभाग

व्याकरण में पुरुष तीन प्रकार के होते हैं -

1. अन्य पुरुष, 2. मध्यम पुरुष, 3.उत्तम पुरुष।

विशेष :- 1. अन्य पुरुष कर्ता के साथ अन्य पुरुष का क्रियारूप, मध्यम पुरुष कर्ता के साथ मध्यम पुरुष का क्रियारूप तथा उत्तम पुरुष कर्ता के साथ उत्तम पुरुष का ही क्रिया-रूप आता है।

3. हिन्दी में अन्य पुरुष को प्रथम पुरुष तथा अंग्रेजी में तृतीय पुरुष कहते हैं। मध्यम पुरुष को मध्यम पुरुष या द्वितीय पुरुष ही कहा जाता है। उत्तम पुरुष को अंग्रेजी में प्रथम पुरुष कहते हैं।

1. अन्य पुरुष

परिचय :- जिस व्यक्ति, वस्तु आदि के विषय में बात की जाती है, उसे अन्य पुरुष कहते हैं। कहने वाले तथा सुनने वाले के अतिरिक्त अन्य सभी इसमें सम्मिलित हैं।

उदाहरण :- वह, वे, यह, राम, मोहन, रमेश आदि।

विशेष :- संस्कृत में आप शब्द के रूप भवान्, भवन्तौ, भवन्तः अन्य पुरुष में माने जाते हैं। इनके साथ अन्य पुरुष की क्रिया लगती है।

2. मध्यम पुरुष

परिचय :- कोई व्यक्ति जिससे बात कर रहा होता है, उसे मध्यम पुरुष कहते हैं।

उदाहरण :- तुम (युष्मद् के सभी रूप केवल)

3. उत्तम पुरुष

परिचय :- बात कहने वाले को उत्तम पुरुष कहते हैं।

उदाहरण :- मैं, हम (अस्मद् के सभी रूप केवल)

लिंग, वचन, पुरुष के सरल प्रयोग

1. लिंग

संस्कृत व्याकरण में तीनों लिंगों में क्रियाएँ समान होती हैं। नियमतः सभी पुरुषवाची शब्द पुल्लिंग, स्त्रीवाची शब्द स्त्रीलिंग तथा निर्जीव एवम् उभयलिंगवाची शब्द उभयलिंग या नपुंसक लिंग माने जाने चाहिये। व्यक्ति की भावना के अनुसार नदी तथा भूमि माता के रूप में स्त्रीलिंग तथा इसी प्रकार मानवीकरण करने से वृक्ष आदि पुल्लिंग हो जाते हैं। स्थान उभयलिंग है परन्तु भारत माता या धरती माता स्त्रीलिंग हैं। इसी प्रकार नदी, सूर्य, सरोवर आदि का भी मानवीकरण हो जाता है। पुस्तक सामान्य रूप से उभयलिंग है परन्तु ग्रन्थ को सम्मान देकर हम पुल्लिंग मान लेते हैं। उचित यही है कि निर्जीव पदार्थों को सामान्यतः उभयलिंग माना जाए तथा यदि कोई भावनावश किसी वस्तु का मानवीकरण करना चाहे तो उसे छूट दी जाए। सर्वाधिक रोचक है पत्नी शब्द के पर्यायवाची दार पुल्लिंग, कलत्र नपुंसक लिंग, भार्या व पत्नी स्त्रीलिंग। चाहें तो इसे भावना के अनुसार किया गया लिंगभेद मान सकते हैं। वास्तव में अकारान्त दार शब्द के रूप राम के समान तथा भार्या व पत्नी शब्द के रूप अन्य आकारान्त व ईकारान्त शब्दों के अनुसार चलते हैं। इनमें लिंगभेद मानना उचित नहीं है। इसे अपवाद के रूप में स्वीकार किया जाये तो यह

मनोरंजक उदाहरण हो सकता है। अतः लिंग प्रकरण को लचीला माना गया है। वैसे इस विषय में भी पुस्तकें हैं तथा जटिल नियम भी बनें हैं।

2. वचन

वचन का प्रयोग नामिक तथा आख्यातिक दोनों प्रकार की विभक्तियों में होता है। तीनों वचनों के प्रत्यय निश्चित हैं जिनको लगा देने से उस वचन का रूप बन जाता है। ये प्रत्यय कारक तथा आख्यात या क्रियापद के अनुसार प्रयोग होते हैं।

विशेष :- द्विवचन का प्रयोग किये विना भी संस्कृत बोल सकते हैं। किसी शब्द में युग्म, युगल, द्वय आदि द्वित्ववाची शब्दों को जोड़कर उससे दो का अर्थ निकल सकता है परन्तु उस शब्द का प्रयोग एक वचन में ही किया जाता है। जैसे - पुस्तकयुग्म, बालक युगल आदि शब्द एक वचन में प्रयोग होते हैं।

ध्यातव्य :- नामिक विभक्तियाँ अर्थात् शब्दरूप द्विवचन में बहुत सरल हैं। प्रथमा-द्वितीया एक समान, तृतीया, चतुर्थी, पंचमी एक समान तथा षष्ठी-सप्तमी में एक समान नामिक विभक्तियाँ होती हैं।

इस प्रकार द्विवचन में केवल तीन विभक्तियाँ हैं, 1. कर्ता, कर्म, सम्बोधन, 2. करण, सम्प्रदान, अपादान, 3. सम्बन्ध, अधिकरण।

3. पुरुष

व्याकरण में तीन पुरुष होते हैं, 1. अन्य पुरुष, 2. मध्यम पुरुष, 3. उत्तम पुरुष। कहने वाला उत्तम पुरुष, सुनने वाला या जिससे कहा जाए, वह मध्यम पुरुष तथा शेष सभी अन्य पुरुष में माने जाते हैं। संस्कृत में केवल त्वम् (तुम) शब्द ही मध्यम पुरुष माना जाता है जबकि भवान् (आप) शब्द अन्य पुरुष में है। अतः तुम के स्थान पर आप शब्द का प्रयोग करके मध्यम पुरुष से बचा जा सकता है। आप (भवान्) शब्द के प्रयोग में शिष्टता भी है तथा व्याकरण की दृष्टि से सरलता भी।

विशेष : संस्कृत क्रियाओं से पुरुष व वचन स्पष्ट हो जाता है। अतः वाक्यों में पुरुषवाची सर्वनाम शब्दों का लोप भी मिलता है। पठामि से ही अहम् पठामि का अर्थ स्पष्ट हो जाता है और बहुधा अहम् पठामि के स्थान पर पठामि ही लिखा या बोला जाता है।

ॐ

पद रचना

परिचय :- प्रातिपदिक शब्द या धातु में नामिक या आख्यातिक विभक्ति लगाने से वह पद बन जाता है। सामान्यतः संस्कृत वाक्यों में पदों का ही प्रयोग होता है, शब्दों का नहीं।

महत्व :- धातुओं तथा प्रातिपदिक या नाम शब्दों को पद बनाने के लिए उनमें जो परिवर्तन होता है, वही व्याकरण का मुख्य तत्व है। इनका ज्ञान होने से ही सस्कृत भाषा को समझना तथा प्रयोग करना सम्भव हो पाता है।

रचना :- पद बनाने के लिए नाम शब्दों अर्थात् संज्ञा, विशेषण, सर्वनाम में नामिक (कारक) व वचन के अनुसार परिवर्तन होते हैं। इन परिवर्तनों के लिए जुड़ने वाली विभक्तियों को नामिक कहते हैं। धातुओं से क्रियापद या आख्यात बनाने के लिए जुड़ने वाली विभक्तियों को आख्यातिक कहते हैं। क्रियाओं में परिवर्तन पुरुष, वचन, काल के अनुसार होते हैं।

शब्दरूप :- पद बनाने के लिए होने वाले इन परिवर्तनों को स्पष्ट करने के लिए ही शब्द रूप तथा धातु रूप सारणियां बनीं हैं। ये रूप बनते व्याकरण के नियमों से ही हैं। कोई शब्दरूप या धातुरूप शुद्ध है या नहीं, इसका निर्णय व्याकरण के नियमों से ही हो सकता है, अतः ये नियम ही महत्वपूर्ण हैं। इन रूपों को रटने की अपेक्षा व्याकरण के नियमों को समझना सरल है।

सरल प्रयोग :- व्याकरण सूत्रों में बताये गये नियमों को सरल रूप में प्रस्तुत कर दिया जाये तो सूत्र, उनकी वृत्तियाँ (संस्कृत में की गयी व्याख्या) अथवा शब्द रूप - धातु रूप रटने की आवश्यकता न पड़े। सरल संस्कृत व्याकरण पद्धति में अपवादों सम्बन्धी जो नियम जटिल तथा दुरूह प्रतीत होते हैं, उनके स्थान पर व्याकरण शास्त्र में बताये गये सरल विकल्पों का ज्ञान पहले कराया गया है।

पदभेद : नाम, क्रिया, अव्यय

संस्कृत व्याकरण में विभक्तियों की दृष्टि से पद तीन प्रकार के होते हैं — नाम, आख्यात या क्रिया तथा अव्यय।

1. नाम : संज्ञा, सर्वनाम, विशेषण

परिचय :- जिन शब्दों से किसी व्यक्ति, वस्तु, स्थान, भाव तथा विचार आदि का परिचय प्राप्त होता है, उस शब्द को 'नाम' कहते हैं।

उदाहरण :- सः सुन्दरः बालकः अस्ति।

वह सुन्दर बालक है।

बोध :- इस वाक्य में 'वह', 'सुन्दर' तथा 'बालक' - ये तीनों ही शब्द एक ही 'व्यक्ति' (किसी बालक) का परिचय प्रदान कर रहे हैं। अतः ये तीनों ही शब्द (सः, सुन्दरः, बालकः) 'नाम' शब्द-भेद के अन्तर्गत हैं।

विशेष

1. संस्कृत व्याकरणशास्त्र में संज्ञा, सर्वनाम तथा विशेषण को एक ही शब्द-भेद 'नाम' के अन्तर्गत रखा गया है।

2. हिन्दी आदि नयी भाषाओं में 'नाम' के तीन उपभेद (1) संज्ञा, (2) सर्वनाम तथा (3) विशेषण माने जाते हैं।

3. सर्वनाम तथा विशेषण शब्दों का लिंग, वचन, कारक वही होता है जो उनके मूल 'संज्ञा' शब्द का होता है।

4. उपर्युक्त उदाहरण के वाक्य में 'बालक' संज्ञा, 'वह' सर्वनाम तथा 'सुन्दर' विशेषण है।

5. संस्कृत व्याकरण में नाम शब्दों के तीनो उपभेदों (1) संज्ञा (2) सर्वनाम (3) विशेषण शब्दों को पद बनाने के लिए उनके रूपों में परिवर्तन नामिक विभक्तियों को लगाने से होता है।

नाम पद रचना

परिचय :- नाम शब्दों में नामिक विभक्तियाँ जुड़ने पर नाम पद बनते हैं।

उदाहरण :- बालक + इ = बालके।

बोध :- बालक शब्द में 'इ' नामिक विभक्ति प्रत्यय (सप्तमी एकवचन) जुड़ने से बालके पद बन गया।

विशेष

कुछ स्थानों पर विभक्ति प्रत्यय का लोप हो जाता है, अतः उसका प्रयोग नहीं होता है। इसका अर्थ है कि शब्द का मूल रूप ही पद भी माना जाता है। कर्ता तथा सम्बोधन एक वचन में सामान्यतः तथा कहीं-कहीं कर्म एक वचन में भी ऐसा होता है।

2. आख्यात : क्रियायें

परिचय :- जिन शब्दों से कार्य करना या होना व्यक्त हो, वे क्रिया या आख्यात पद होते हैं।

उदाहरण :- पठति, लिखति, गच्छति आदि

विशेष :- हिन्दी क्रियाओं में 'ना' जुड़ा होता है जैसे पढ़ना, लिखना, खेलना, आना, जाना आदि।

आख्यात पद रचना

परिचय :- धातु में आख्यातिक विभक्ति प्रत्यय जुड़ने से आख्यात या क्रिया पद बनते हैं।

उदाहरण :- पठ् + अति = पठति, लिख् + अति = लिखति, खेल् + अति = खेलति।

बोध :- अति वर्तमान काल अन्य पुरुष एक वचन का आख्यातिक विभक्ति प्रत्यय है।

विशेष

1. संस्कृत क्रियाएँ तीनों लिंगों पुल्लिंग, स्त्रीलिंग, उभयलिंग में एक समान होती हैं।

उदाहरण :- बालकः खेलति, बालिका खेलति, मित्रम् खेलति।

विशेष 2. सहायक क्रियायें भी आख्यात पद हैं। परम्परागत शब्दावली में इनको अस् तथा भू धातुओं के तिङ् रूप कहा जाता है।

विशेष 3. सामान्यतः संस्कृत वाक्यों में आख्यात पद होना अनिवार्य माना जाता है।

विशेष 4. सहायक क्रियाओं के वर्तमान काल अन्य पुरुष का लोप भी मिलता है अर्थात् सहायक क्रियाओं के विना भी वाक्य मिलते हैं।

3. अव्यय : अविकारी शब्द

जिन शब्दों में लिंग वचन, कारक, पुरुष, काल आदि के अनुसार कोई परिवर्तन नहीं होता है, वे अव्यय या निपात कहे जाते हैं। वाक्य में इनका प्रयोग सरल है। इनमें कोई विभक्ति प्रत्यय नहीं लगाना पड़ता है।

उदाहरण :- यथा, तथा, नक्तम्, एवम्, च, पुनः, प्रातः आदि।

विशेष :- अनेक अव्यय पद नाम शब्दों के स्थान पर भी प्रयोग होते हैं।

अव्यय पद रचना

अव्यय शब्द अपने मूल रूप में ही पद भी होते हैं। उनमें नामिक या आख्यातिक जैसे किसी विभक्ति प्रत्यय को जोड़ने की आवश्यकता नहीं होती है। अतः अव्यय का प्रयोग सरल होता है। रात्रि या निशा शब्द में नामिक विभक्ति प्रत्यय लगाने होंगे, परन्तु इसी अर्थ में नक्तम् शब्द अव्यय है, इसमें कोई विभक्ति प्रत्यय नहीं जुड़ेगा।

ॐ

नामिक प्रकरण : कारक

परिचय :- नामिक विभक्तियों से नाम शब्दों का परस्पर तथा क्रिया से सम्बन्ध व्यक्त होता है।

ध्यातव्य :- यह व्याकरण का बहुत महत्वपूर्ण प्रकरण है।

नामिक भेद

नामिक विभक्तियां आठ हैं :

1. कर्ता, प्रथमा विभक्ति
2. कर्म, द्वितीया विभक्ति
3. करण, तृतीया विभक्ति
4. सम्प्रदान, चतुर्थी विभक्ति
5. अपादान, पंचमी विभक्ति
6. सम्बन्ध, षष्ठी विभक्ति
7. अधिकरण, सप्तमी विभक्ति
8. सम्बोधन

विशेष :- 1. हिन्दी में इनको कारक कहते हैं।

2. सम्बोधन में भी कर्ता या प्रथमा विभक्ति का ही प्रयोग होता है। एक वचन में कहीं-कहीं कुछ परिवर्तन होता है।

1. कर्ता

परिचय :- क्रिया का सम्पादन करने वाले को कर्ता कहते हैं।

विभक्ति चिह्न :- विसर्ग (ः), औ, अः, न्, नि।

उदाहरण :- सः नगरम् गच्छति।

वह नगर को जाता है।

बोध :- इस वाक्य में 'जाना' क्रिया का सम्पादन सः (वह) कर रहा है। अतः 'सः' शब्द कर्ता है।

2. कर्म

परिचय :- क्रिया का निकटतम लक्ष्य कर्म होता है।

विभक्ति चिह्न :- 'अम्', औ, अः, अन्, नि।

उदाहरण :- लिपिकः **कार्यालयम्** गच्छति।

लिपिक **कार्यालय को** जाता है।

बोध :- इस वाक्य में 'जाना' क्रिया का निकटतम लक्ष्य कार्यालय है। अतः 'कार्यालय' में कर्म कारक या नामिक विभक्ति है।

3. करण

परिचय :- क्रिया के सम्पादन के समय सर्वाधिक समीप में स्थित निकटतम सहायक को करण कहते हैं।

विभक्ति चिह्न :- तः, द्वारा, आ, भ्याम्, भिः।

उदाहरण :- देवः **रथेन (रथद्वारा)** गच्छति।

देव **रथद्वारा** जाता है।

बोध :- इस वाक्य में क्रिया 'जाना' में निकटतम सहायक **रथ** है। अतः **रथेन** या **रथद्वारा** पद में करण कारक या नामिक विभक्ति है।

4. सम्प्रदान

परिचय :- क्रिया का हेतु, लक्ष्य अथवा कारण ही सम्प्रदान है।

विभक्ति चिह्न :- कृते, अर्थम्, हेतु, ए, भ्याम्, भ्यः।

उदाहरण :- कृष्णः **अर्जुनहेतुः (अर्जुनाय, अर्जुनकृते, अजुनार्थम्)** रथसंचालनम् करोति स्म।

कृष्ण ने **अर्जुन के लिए** रथसंचालन किया।

बोध :- इस वाक्य में रथसंचालन का हेतु **अर्जुन** है। अतः **'अर्जुन हेतुः'** पद सम्प्रदान कारक या नामिक विभक्ति में है।

5. अपादान

परिचय :- जिससे कोई व्यक्ति या वस्तु आदि अलग हो या दूर जाये, वह अपादान होता है।

विभक्ति चिह्न :- तः, अः, भ्याम्, भ्यः।

उदाहरण :- तरुतः पर्णानि पतन्ति।

वृक्ष से पत्ते गिरते हैं।

बोध :- इस वाक्य में पत्ता **वृक्ष (तरु)** से गिरता है। अतः **तरु** में अपादान कारक या नामिक विभक्ति है।

6. सम्बन्ध

परिचय :- यह 'नाम' शब्दों का परस्पर सम्बन्ध व्यक्त करता है।

विभक्ति चिह्न :- अः, स्य, ओः, आम्, नाम्, साम्।

उदाहरण :- श्यामस्य पुस्तकम् अस्ति।

श्याम की पुस्तक है।

बोध :- इस वाक्य में पुस्तक **'श्याम'** से सम्बन्धित है। अतः **श्याम** में सम्बन्ध नामिक विभक्ति है।

7. अधिकरण

परिचय :- क्रिया का आधार अधिकरण होता है।

विभक्ति चिह्न :- त्र, इ, ओः, सु।

उदाहरण :- महादेवः **कश्मीरेषु** (कश्मीरे) शासति, शास्ति, शासनम् करोति, करति वा।

महादेव **कश्मीर में** शासन करता है।

बोध :- इस वाक्य में शासन करने का कार्य **कश्मीर** (आधार) में हो रहा है। अतः **कश्मीर** में अधिकरण नामिक विभक्ति है।

विशेष :- परम्परा के अनुसार कश्मीर आदि प्रदेशों के नाम बहुधा बहुवचन में प्रयोग होते हैं।

8. सम्बोधन

परिचय :- किसी को क्रिया की सूचना देने, सम्बोधित करने या पुकारने के लिए सम्बोधन का प्रयोग होता है।

विभक्ति चिह्नः- 1. कर्ता के समान ही होते हैं।

2. बहुधा एक वचन में विभक्ति चिह्न का लोप होता है।

3. शब्द के बाद सम्बोधन चिह्न (!) लगाते हैं।

विशेष :- शब्द से पूर्व हे, रे, अरे, भो आदि हो सकते हैं।

उदाहरण :- रमेश! अत्र आगच्छ। (रमेश यहाँ आओ।)

बोध :- रमेश को पुकारा जा रहा है। अतः रमेश में सम्बोधन है।

विशेष :- सामान्यतः सम्बन्ध तथा सम्बोधन को कारक नहीं माना जाता है क्योंकि वह क्रिया का कारण नहीं बनता है।

उदाहरण :– हे मित्र! रमेश का भाई बाजार गया है।

बोध :- इस वाक्य में जाना क्रिया को करने वाला भाई है, रमेश नहीं। अतः रमेश का सम्बन्ध केवल कर्ता से है, क्रिया से नहीं। अतः सम्बन्ध को कारक नहीं कहते हैं। यहाँ मित्र को सम्बोधित कर क्रिया की जानकारी दी गयी है, परन्तु उसने क्रिया में भाग नहीं लिया है, अतः वह भी कारक नहीं है।

ध्यातव्य :- इस प्रकार संस्कृत व्याकरण में नामिक आठ होते हैं तथा कारक छह। व्यावहारिक प्रयोग की दृष्टि से नामिक तथा कारक में कोई अन्तर नहीं होता है।

उदाहरण वाक्य

हिन्दी उदाहरण :- हे देव! हरि ने पुष्प को हाथ से मित्र के लिए वृक्ष से राम के बाग में चुना।

संस्कृत वाक्य :- हे देव! हरिः पुष्पम् हस्तेन (हस्तद्वारा) मित्रार्थम् (मित्रकृते) वृक्षतः (वृक्षात्) रामस्य उद्याने (रामस्य उद्यानत्र, रामोद्याने, रामोद्यानत्र, राम-वाटिकात्र) चिनोति स्म।

हिन्दी उदाहरण :- हे रवि! दिनेश के भाई सन्तोष ने फूल को हाथ से मित्र के लिए पेड़ से बाग में चुना।

संस्कृत वाक्य : हे रवि! दिनेशस्य बन्धुः सन्तोषः पुष्पम् हस्तेन मित्राय वृक्षात् उपवने अचिनोत्।

बोध :- इस वाक्य में सन्तोष (कर्ता) ने चुना (क्रिया) को सम्पन्न किया है। क्रिया से पुष्प (कर्म) वृक्ष (अपादान) से अलग हुआ है। इस क्रिया को हाथ (करण) की सहायता से किया गया है। यह क्रिया मित्र (सम्प्रदान) के लिए हुई है तथा बाग (अधिकरण) के क्षेत्र में हुई है।

सन्तोष ने चुना, पुष्प को चुना, हाथ से चुना, (हाथ द्वारा चुना), मित्र के लिए चुना, वृक्ष से चुना, बाग में चुना, सभी शब्द क्रिया से सम्बन्धित है।

रवि को सम्बोधित कर इस क्रिया की जानकारी दी गयी है। क्रिया का सम्बन्ध दिनेश से नहीं, केवल उसके भाई सन्तोष से है। अतः रवि तथा दिनेश को कारक नहीं माना गया है।

नामिक परिचय : एक दृष्टि में

1. **कर्ता** क्रिया का सम्पादन करने वाले को कहते हैं।
2. **कर्म** पर क्रिया का फल घटित होता है।
3. **करण** की सहायता से क्रिया होती है।
4. **सम्प्रदान** के लिए क्रिया की जाती है।
5. **अपादान** से क्रिया के कारण कुछ अलग होता है।
6. **सम्बन्ध** से नाम शब्दों का परस्पर सम्बन्ध व्यक्त होता है।
7. **अधिकरण** के अधिकार क्षेत्र के अन्तर्गत क्रिया होती है।
8. **सम्बोधन** को क्रिया के लिए कहा जाता है अथवा सूचना दी जाती है।

अष्ट नामिक वाक्य

हे सम्बोधन !

कर्ता ने

कर्म को

करण द्वारा

सम्प्रदान के लिए

अपादान से

सम्बन्ध के

अधिकरण में

किया।

ध्यातव्य :- इस प्रतीक वाक्य से सभी आठ नामिक प्रयोग समझे जा सकते हैं।

व्यावहारिक प्रयोग

व्यावहारिक दृष्टि से कर्म को सामान्य कारक भी कहा जा सकता है। क्रिया का प्रभाव कर्म पर पड़ता है। वाक्य में एक से अधिक कर्म भी हो सकते हैं। स्पष्टतः परिभाषा या लक्षणों के अनुसार जो शब्द किसी अन्य नामिक विभक्ति में न रखा जा सके, उसे कर्म मान सकते हैं।

क्रिया को करने वाला कर्ता, सहायता करने वाला करण, जिसके लिए किया जाये, वह सम्प्रदान, जिससे कुछ अलग हो वह अपादान, नाम शब्दों का परस्पर सम्बन्ध हो तो सम्बन्ध, जिसके क्षेत्र में क्रिया हो वह अधिकरण, जिससे कुछ कहा या बताया जाये अर्थात् सम्बोधित करें, वह सम्बोधन तथा शेष सभी कर्म होते हैं।

ॐ

नामिक विभक्ति

परिचय :- कर्ता, कर्म, करण, सम्प्रदान, अपादान, सम्बन्ध, अधिकरण, सम्बोधन में लगने वाली सभी आठ विभक्तियों को नामिक विभक्ति कहते हैं। शब्दों का परस्पर तथा क्रिया से सम्बन्ध नामिक विभक्ति से स्पष्ट होता है। ये विभक्तियाँ तीनों वचनों में पृथक् होती हैं, अतः किसी शब्द का द्विवचन या बहुवचन बनाने की कोई आवश्यकता नहीं होती है।

रूप रचना

शब्द रूप बनाने के लिए उनमें नामिक विभक्तियाँ जोड़ी जाती हैं। प्रत्येक विभक्ति में तीनों वचनों के अनुसार तीन प्रत्यय होते हैं। नाम शब्दों के साथ इन नामिक विभक्तियों को जोड़कर सभी रूप बना सकते हैं।

नामिक पहचान

नामिकों के प्रयोग के लिए नामिक विभक्तियों तथा कारकों की जानकारी होना आवश्यक है। सामान्यतः हिन्दी चिह्नों से भी इनकी पहचान हो सकती है, फिर भी परिभाषा व लक्षण जानना अनिवार्य है।

हिन्दी चिह्न :- किसी शब्द के कारक को निर्धारित करने के लिए प्रत्येक शब्द के साथ कुछ विशेष शब्दांश जुड़े रहते हैं। हिन्दी में इनको कारक चिह्न कहते हैं।

हिन्दी कारक चिह्न इस प्रकार हैं :-

कर्ता ने, कर्म को, करण से, द्वारा, के साथ, सम्प्रदान के लिए, हेतु, अपादान से (अलग होना भाव में), सम्बन्ध पुल्लिंग एक वचन में 'का', स्त्रीलिंग एक वचन में की तथा बहुवचन में 'के', अधिकरण में, पर तथा सम्बोधन में सम्बोधन चिह्न (!) लगता है। सम्बोधन शब्दों से पूर्व हे, रे, अरे, भोः का प्रयोग भी हो सकता है।

संस्कृत नामिक विभक्ति प्रत्यय

परिचय :- सभी नामिक विभक्तियों के तीनों वचनों में प्रत्यय प्राचीन व्याकरण में ही स्पष्ट हैं। उनको शब्दों के बाद जोड़ देने से शब्द रूप बन जाते हैं। शब्द के अन्त में व्यंजन होने पर ये विभक्तियाँ यथावत् जुड़ती हैं। इनमें व्यंजनादि नामिक विभक्तियाँ व्यंजनान्त तथा स्वरान्त सभी शब्दों में एकसमान रूप से प्रयोग होती हैं। स्वरान्त शब्दों में स्वरादि विभक्तियाँ लगाने पर कुछ परिवर्तन होते हैं। परिवर्तनों का आधार सन्धि के नियम तथा अपवाद हैं।

अपवाद :- अपवादों को समझने में कठिनाई होती है। प्रारम्भ में संस्कृत सीखने में इन अपवादों को सिखाने की आवश्यकता नहीं है। प्राचीन साहित्य में उनका प्रयोग हुआ है, अतः प्रचलन की दृष्टि से बाद में उन्हें भी सीख लेना उपयोगी है। अपवादों को व्याकरण में महत्व नहीं देना चाहिये।

सरल विकल्प :- एक वचन में कुछ नामिक विभक्तियों के प्रत्ययों में बहुलता तथा जटिलता मिलती है। परन्तु संस्कृत व्याकरण में इनके सरल विकल्प भी हैं। ये उपयोगी विकल्प सार्व नामिक विभक्तियाँ हैं। इनका प्रयोग सभी स्वरान्त तथा व्यंजनान्त शब्दों में समान रूप से कर सकते हैं। ये प्रयोग साहित्य में बहुलता से मिलते हैं तथा व्याकरणाचार्य भी उचित मानते हैं।

विशेष : कभी-कभी लेखक नामिक विभक्ति या कारक प्रयोग में अपवाद स्वरूप छूट भी ले लेते हैं। भाषा प्रयोग में अपवाद होना स्वाभाविक है। परन्तु अपवाद या छूट का अर्थ मनमाना प्रयोग नहीं है। बादल चमकते हैं या बादलों में बिजली चमकती है या बादलों में बिजली की चमक होती है आदि वाक्यों के अर्थ समान हैं। लेखक के कहने की तरीके के अनुसार नामिक या कारक प्रयोगों में विभक्तियाँ बदलती हैं, परन्तु सभी प्रयोग शुद्ध हैं। इसी तरह उसने पढ़ा है या वह पढ़ा है कहा जाये तो स्वीकार्य हो सकता है परन्तु इसके स्थान पर उसको पढ़ा जैसा प्रयोग करने की छूट किसी को नहीं मिल सकती है क्योंकि इससे अर्थ बदल जाता है। भाषा प्रयोग पर अधिकार रखने वाले साहित्यकार के प्रयोग स्वभावतः उचित ही होते हैं।

नामिक विभक्ति भेद

परिचय :- प्रयोग विधि के अनुसार संस्कृत व्याकरण में नामिक विभक्तियाँ तीन प्रकार की होती हैं, **मूल, सार्व तथा वैकल्पिक**।

विशेष :- मूल तथा सार्व विभक्तियों से सभी शब्दों के रूप सामान्यतः बन जाते हैं। अतः सरल संस्कृत व्याकरण में वैकल्पिक नामिक विभक्तियों का ज्ञान आवश्यक नहीं है।

1. मूल नामिक विभक्ति

परिचय :- ये व्यंजनान्त शब्दों में मूल रूप से जुड़ती हैं जबकि स्वरान्त शब्दों में स्वरादि विभक्तियां लगने पर उनमें यदा-कदा परिवर्तन भी हो जाते हैं। अधिकांशतः इस तरह के परिवर्तन एकवचन में होते हैं परन्तु बहुवचन व द्विवचन में भी हो सकते हैं।

मूल नामिक विभक्ति प्रत्यय

विभक्ति	**नामिक**	**एकवचन**	**द्विवचन**	**बहुवचन**
प्रथमा	कर्ता	**: (विसर्ग)**	**औ,**	**अः**
	सम्बोधन	**चिह्न (!),**	**औ**	**अः**
द्वितीया	कर्म	**अम्**	**औ**	**अः**
तृतीया	करण	**आ**	**भ्याम्**	**भिः**
चतुर्थी	सम्प्रदान	**ए**	**भ्याम्**	**भ्यः**
पञ्चमी	अपादान	**अः**	**भ्याम्**	**भ्यः**
षष्ठी	सम्बन्ध	**अः**	**ओः**	**आम्**
सप्तमी	अधिकरण	**इ**	**ओः**	**सु**

मूल नामिक विभक्ति प्रयोग

नियम 1 :- परम्परागत व्याकरण के अनुसार ये मूल नामिक विभक्तियाँ हैं। अतः इनका ज्ञान सभी को होना ही चाहिये। नियमतः ये विभक्तियाँ जोड़कर सभी शब्दों के रूप बन जाने चाहिये। परन्तु इनके अपवाद भी हैं। कुछ अपवाद आवश्यक तथा महत्वपूर्ण भी हैं।

नियम 2 :- जिन शब्दों के अन्त में व्यंजन होते हैं, उन (व्यंजनान्त) शब्दों में इन विभक्तियों को लगाकर सभी शब्दरूप बन जाते हैं। विसर्ग स्वर के बाद ही लगता है, अतः व्यंजनान्त शब्दों के प्रथमा एक वचन में उसका लोप हो जाता है अर्थात् शब्द का मूल रूप ही कर्ता एक वचन का रूप होता है।

उदाहरण :- जगत्, सुगण्, सरित् आदि।

नियम 3 :- व्यंजन के बाद स्वर आने पर व्यंजन में उस स्वर की मात्रा लग जाती है। जैसे सुगुण् + औ = सुगुणौ, सरित् + अः = सरितः, जगत् + आ = जगता आदि। इस प्रकार सभी व्यंजनान्त शब्दों के रूप मूल विभक्तियों को जोड़कर बना सकते हैं।

नियम 4 :- भ्याम्, भ्यः आदि व्यंजनादि विभक्तियाँ जुड़ने पर कुछ शब्दों के अन्तिम व्यंजन में परिवर्तन भी हो सकते हैं।

जैसे जगत् + भ्याम् = जगद्भ्याम्।

विशेष :- ये परिवर्तन उच्चारण में सरलता के लिए स्वभावतः हो जाते हैं। उदाहरण के लिए सन्धि होने पर जगत् + पति = जगत्पति होता है परन्तु जगत् + गुरु = जगत्गुरु के स्थान पर जगद्गुरु उच्चारण प्रचलित है। अतः सन्धि नियमों में त् के स्थान पर द् बोलने को स्वीकार कर लिया गया है। इसी प्रकार विभक्ति जुड़ने पर भी व्यंजन में परिवर्तन स्वीकार कर लेते हैं। इन परिवर्तनों को उच्चतर कक्षाओं में सिखाया जाना चाहिए। प्राथमिक स्तर पर शब्द का शुद्ध रूप सीखना तथा प्रयोग करना उपयोगी तथा उचित है।

नियम 5 :- सभी व्यंजनान्त पुल्लिंग तथा स्त्रीलिंग शब्दों के रूप इन विभक्तियों को जोड़कर बन सकते हैं। केवल नपुंसक लिंग शब्दों के कर्ता व कर्म में कुछ अन्तर होता है, शेष तृतीया से सप्तमी तक तीनों वचनों में मूल विभक्तियाँ पुल्लिंग तथा स्त्रीलिंग के समान ही यथावत् लगती हैं।

नियम 6 :- स्पष्ट है कि संस्कृत में शब्दों में लिंगभेद सामान्यतः नहीं होता है। जिन्हें नपुंसक लिंग या उभय लिंग कहा जाता है, उन्हें वास्तव में कुछ विशेष प्रकार के शब्द माना जाना चाहिये जिनमें कर्ता व कर्म की विभक्तियाँ

एक समान होती हैं तथा द्विवचन में औ के स्थान पर ई, बहुवचन में अः के स्थान पर इ हो जाता है। इसे विकल्प या अपवाद कह सकते हैं।

नियम 7 :- विभक्तियों में परिवर्तन पुल्लिंग तथा स्त्रीलिंग माने जाने वाले कुछ शब्दों में भी हो सकता है जो अपवाद ही माने जा सकते हैं। नपुंसक लिंग प्रथमा, द्वितीया तथा अकारान्त के बहुवचन तृतीया, षष्ठी में होने वाले परिवर्तन अपवाद हैं।

नियम 8 :- कर्म बहुवचन में शब्द के अन्त में अ, इ, ऋ, उ होने पर ये स्वर दीर्घ हो जाते हैं तथा न् विभक्ति प्रत्यय लगता है।

नियम 9 :- करण एक वचन में शब्द के अन्त में इ, ऋ, उ होने पर ना विभक्ति प्रत्यय लगता है।

नियम 10 :- सम्प्रदान एक वचन में शब्द के अन्त में अ होने पर आय विभक्ति प्रत्यय लगता है।

नियम 11 :- अपादान और सम्बन्ध एक वचन में शब्द के अन्त में इ, ऋ, उ होने पर गुण होकर विसर्ग लगता है।

(अन्तिम स्वर से पूर्व अ जुड़ता है तथा सन्धि होकर ए, ओ हो जाता है। इसे परम्परागत व्याकरण में गुण होना कहते हैं।)

नियम 12 :- अधिकरण एक वचन में शब्द के अन्त में इ, उ होने पर औ तथा आ होने पर याम् विभक्ति प्रत्यय लगता है।

नियम 13 :- ऋ, र्, ष् के बाद न् के स्थान पर ण हो जाता है।

नियम 14 :- यदि न् से पूर्व तथा ऋ, र्, ष् के बाद कोई स्वर, कवर्ग, पवर्ग, य, र, व, ह अक्षर आ जाये तो भी न् के स्थान पर ण् हो जाता है।

नियम 15 :- प्रथमा (कर्ता व सम्बोधन) विभक्ति में विसर्ग का बहुधा लोप हो जाता है।

नियम 16 :- सम्बोधन एकवचन में शब्द के अन्तिम स्वर में परिवर्तन हो सकता है।

2. सार्व नामिक विभक्तियाँ

परिचय :- ये विभक्तियाँ सभी शब्दों में प्रयोग हो सकती हैं। इनके एक वचन के विभक्ति प्रत्यय सभी शब्दों के साथ एक वचन में जोड़ सकते हैं। मूल नामिक विभक्तियों के अतिरिक्त यहां दी गयीं विभक्तियां ऐसे प्रत्यय तथा अव्यय आदि हैं जो विभक्ति का कार्य करते हैं।

सार्व नामिक विभक्तियाँ

		एक वचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	**कर्त्ता**	विसर्ग (:)	औ	अः
	सम्बोधन	चिह्न (!),	औ	अः
द्वितीया	**कर्म**	अम्	औ	अः
तृतीया	**करण**	द्वारा, तः	भ्याम्	भिः
चतुर्थी	**सम्प्रदान**	कृते, हेतुः, अर्थम्	भ्याम्	भ्यः
पञ्चमी	**अपादान**	तः	भ्याम्	भ्यः
षष्ठी	**सम्बन्ध**	समास (-)	ओः	आम्
सप्तमी	**अधिकरण**	त्र	ओः	सु

सार्व नामिक विभक्ति प्रयोग

नियम 1 :- ये सार्व नामिक विभक्ति चिह्न सामान्यतः सभी शब्दों में प्रयोग होते हैं।

नियम 2 :- कर्ता व कर्म के द्विवचन तथा बहुवचन में कुछ महत्वपूर्ण परिवर्तन होते हैं। उन्हें अभ्यास से सीखना उपयोगी है।

नियम 3 :- व्याकरण में तः का प्रयोग अपादान पंचमी विभक्ति तथा त्र का प्रयोग अधिकरण सप्तमी विभक्ति में करने का विशेष नियम निर्देश है, इसके साथ ही अन्य विभक्तियों में भी तः तथा त्र का प्रयोग होने की बात भी कही गयी है।

नियम 4 :- करण तथा अपादान कारकों में तः का प्रयोग प्रायः होता है, हिन्दी चिह्न से के समान।

3. वैकल्पिक नामिक विभक्ति

परिचय :- प्राचीन शास्त्रीय संस्कृत में मूल तथा सार्व नामिक विभक्तियों के अतिरिक्त अनेक अन्य नामिक विभक्ति प्रत्यय भी प्रयोग होते रहे हैं। उनको हम वैकल्पिक नामिक विभक्ति कहते हैं।

विशेष :- यह तथ्य सभी विद्वान् एकमत से स्वीकार करते हैं कि वेद की भाषा अधिक सरल और व्यावहारिक है। बाद में लोक व्यवहार में कुछ विभक्ति प्रत्ययों का प्रयोग अधिक होने लगा तथा कुछ का प्रयोग कम हुआ। व्याकरणाचार्यों ने अपने समय में जिस प्रयोग को अधिक प्रचलित पाया, उसे मान्यता दी। इसीलिए उस भाषा को लौकिक संस्कृत कहते हैं। शब्द रूपावली में ऐसी विभक्तियों को स्थान दिया गया है। सरल संस्कृत व्याकरण में इनको विकल्प या अपवाद माना जा सकता है।

ध्यातव्य :- प्राचीन ग्रन्थों में वैकल्पिक विभक्तियों का भी प्रयोग हुआ है, अतः उनका अर्थ जानना उपयोगी है। परन्तु मूल तथा सार्व नामिक विभक्तियों के सरल प्रयोग छोड़कर वैकल्पिक विभक्तियों को ही सीखने पर बल देना उचित नहीं है। यही तरीका संस्कृत भाषा को कठिन तथा अरुचिकर बना देता है। अतः व्यावहारिक जीवन में मूल तथा सार्व नामिक विभक्तियों का प्रयोग सीखना तथा उपयोग करना ही उचित है। वैकल्पिक नामिक विभक्तियों को संस्कृत भाषा में लेखन तथा सम्भाषण का अभ्यास हो जाने के बाद ही सीखना उचित है।

नामिक विभक्ति : सरल प्रयोग

नियम 1 :- सभी व्यंजनान्त शब्दों के रूप मूल नामिक विभक्तियाँ लगाकर तथा स्वरान्त शब्दों के रूप सार्व नामिक विभक्तियाँ लगाकर बनाएँ। कुछ शब्द अपवाद हैं, अनुभव तथा अभ्यास से उनको सीखा जा सकता है। उनके लिए सरल व्यावहारिक नियम ध्यान रखें।

नियम 2 :- उभय लिंग या नपुंसक लिंग शब्दों में कर्ता व कर्म के रूप

एक समान होते हैं। तृतीया से सप्तमी तक सभी रूप अन्य शब्दों के समान ही होते हैं। संस्कृत में कुछ विशेष शब्दों को भी उभय लिंग कहा जाता है, यद्यपि जिनके लिए वे शब्द प्रयोग होते हैं, वे नपुंसक लिंग के नहीं होते हैं जैसे कलत्रम् (पत्नी)।

नियम 3 :- अकारान्त के अतिरिक्त सभी ऐसे उभय लिंग माने जाने वाले शब्दों के प्रथमा व द्वितीया एक वचन में विभक्ति का लोप होता है अर्थात् मूल शब्द ही प्रयोग होते हैं।

नियम 4 :- उभय लिंग अकारान्त शब्दों में कर्ता व कर्म दोनों के एक वचन में म् विभक्ति प्रत्यय ही लगता है। अर्थात् कर्ता में भी विसर्ग के स्थान पर म् होता है जैसे कलत्रम्, पुस्तकम्, फलम्।

नियम 5 :- उभय लिंग शब्दों में प्रथमा, द्वितीया द्विवचन में ई तथा बहुवचन में इ लगता है।

नियम 6 :- उभय लिंग शब्दों में प्रथमा, द्वितीया बहुवचन में वर्गों के पंचम वर्ण तथा अन्तस्थ के अतिरिक्त कोई वर्ण अन्त में होने पर अन्तिम स्वर दीर्घ होकर उसके बाद न् लगता है।

उदाहरण :-

पुस्तक + न् + इ = पुस्तका + न् + इ = पुस्तकानि।

वारि + न् + इ = वारी + न् + इ = वारीणि।

मनस् + न् + इ = मना + न् + स् + इ = मनांसि (मनान्सि)

यजुष् + न् + इ = यजू + न् + ष् + इ = यजूंषि (यजून्षि)

नियम 7 :- उभय लिंग शब्दों के अन्त में इ, उ, ऋ होने पर सभी स्वरादि विभक्तियों से पूर्व न् जुड़ जाता है। न् के स्थान पर विकल्प में ण हो जाना संस्कृत में सामान्य प्रवृत्ति है। इसके लिए नियम बताया जा चुका है।

उदाहरण :- वारि + आ = वारिणा।

मधु + आ = मधुना।

नियम 8 :- पुल्लिंग शब्दों के अन्त में ह्रस्व या लघु स्वर होने पर कर्म बहुवचन में अन्तिम स्वर दीर्घ होकर न् जुड़ता है परन्तु नपुंसक लिंग विभक्ति का इ नहीं लगता है।

उदाहरण :- बालक + न् = बालका + न् = बालकान्।

हरि + न् = हरी + न् = हरीन्।

गुरु + न् = गुरू + न् = गुरून्।

पितृ + न् = पितॄ + न् = पितॄन्।

विशेष :- इस प्रकार हम पाते हैं कि पुल्लिंग तथा नपुंसक लिंग कर्मकारक द्वितीया बहुवचन में बहुधा अः के स्थान पर न् जुड़ता है तथा अन्तिम स्वर दीर्घ हो जाता है। नपुंसक लिंग के सभी शब्दों में ऐसा होता है परन्तु पुल्लिंग में लघु स्वर अन्त में होने पर ही ऐसा होता है।

ध्यातव्य :- अः को मूल विभक्ति मानने पर इसे अपवाद ही कहना पड़ेगा, परन्तु यह नियम के समान ही व्यापक है। अः विभक्ति प्रत्यय कर्ता बहुवचन, कर्म बहुवचन, अपादान एक वचन तथा सम्बन्ध एक वचन में भी लगता है। अतः कर्म बहुवचन में दीर्घत्व के साथ न् के प्रयोग को मूल विभक्ति प्रत्यय मान लेना उचित है। इसका प्रयोग सभी शब्दों में करना व्यावहारिक दृष्टि से उपयोगी है। व्यंजनान्त शब्दों में अन्, लघु स्वर अन्त में होने पर दीर्घत्व के साथ न् तथा दीर्घ स्वर होने पर न् का प्रयोग हो सकता है।

नियम 9 :- कर्ता, कर्म द्विवचन में कुछ शब्दों में इ, उ होने पर दीर्घ होता है तथा आकारान्त शब्दों में आ के स्थान पर ए हो जाता है। उचित यही है कि कर्ता तथा कर्म के रूपों को सावधानी से देख लें।

नियम 10 :- द्विवचन से बचने के लिए दो का बोध कराने के लिए युगल, युग्म जैसे शब्द जोड़कर एक वचन में प्रयोग कर सकते हैं।

नियम 11 :- शब्दों के बहुवचन सभी भाषाओं में अनेक प्रकार से बनते हैं और सामान्यतः प्रत्येक शब्द के बहुवचन स्मरण किये जाते हैं। संस्कृत सीखने के लिए व्यावहारिक दृष्टि से उचित है कि प्रारम्भ में कर्ता, कर्म के

द्विवचन व बहुवचन रूप विवेक से समझ कर स्मरण कर लें। अभ्यास से शुद्ध प्रयोग सीख जायेंगे।

नियम 12 :- तृतीया से सप्तमी तक एक वचन में सार्व विभक्तियों का प्रयोग करें।

नियम 13 :- ध्यान रखें कि द्विवचन तथा बहुवचन की मूल नामिक विभक्तियाँ स्पष्ट हैं। केवल षष्ठी बहुवचन स्वरान्त शब्दों के साथ बहुधा आम् के स्थान पर नाम् या णाम् तथा सर्वनाम शब्दों में साम् या षाम् लगता है, इसे अभ्यास से सीख लें।

नियम 14 :- सम्बन्ध एक वचन में सर्वत्र समास चिह्न (-) का प्रयोग उपयुक्त है। द्विवचन व बहुवचन में भी कर सकते हैं।

नियम 15 :- सम्बन्ध द्विवचन में सर्वत्र अधिकरण द्विवचन के समान रूप बनता है।

नियम 16 :- सम्बोधन में कर्ता के समान प्रथमा विभक्ति होती है। सम्बोधन एकवचन में विसर्ग नहीं लगता है। विकल्प के रूप में सूक्ष्म परिवर्तन भी हो सकते हैं।

नियम 17 :- कुछ विभक्तियों में न् के स्थान पर ण् तथा स् के स्थान ष् कहीं-कहीं होता है। अभ्यास से बोध स्वतः हो जायेगा। यद्यपि इसके लिए नियम बताया गया है।

प्रमुख नामिक विभक्ति

एकवचन

1. **(विसर्ग) :**	(ने)	-	कर्ता, एक वचन (लोप भी)
2. **म्**	(को)	-	कर्म, एक वचन।
3. **आ, तः, द्वारा**	(से, द्वारा)	-	करण, एक वचन
4. **इन, इण**	(से, द्वारा)	-	करण, एकवचन। (शब्द के अन्त में अ होने पर)
5. **ना, णा**	(से, द्वारा)	-	करण, एकवचन। (शब्द के अन्त में इ, उ होने पर)
6. **या**	(से, द्वारा)	-	करण, एक वचन, स्त्रीलिंग
7. **कृते, हेतु, अर्थम्**	(के लिए)	-	सम्प्रदान, एक वचन
8. **ए**	(के लिए)	-	सम्प्रदान, एक वचन। (अन्त में व्यंजन होने पर)
9. **आय**	(के लिए)		सम्प्रदान, एकवचन। (अन्त में अ होने पर।)
10. **ये**	(के लिए)		सम्प्रदान, एक वचन। (अन्त में इ होने पर।)
11. **वे**	(के लिए)		सम्प्रदान, एक वचन। (अन्त में उ होने पर।)
12. **अः**	(से, अलग होना)	-	अपादान, एक वचन
13. **तः**	(से, अलग होना)	-	अपादान, एक वचन
14. **आत्**	(से, अलग होना)	-	अपादान, एक वचन। (अन्त में अ होने पर।)
15. **गुण + :**	(से, अलग होना)		अपादान, एक वचन। (अन्त में इ, उ होने पर)

विशेष :- अन्तिम स्वर से पूर्व अ जुड़ता है तथा सन्धि होकर ए, ओ हो जाता है। इसे परम्परागत व्याकरण में गुण होना कहते हैं।

16. **स्य** (का, की) - सम्बन्ध, एकवचन।
(अन्त में अ होने पर।)
(शेष शब्दों में अपादान के समान)

17. **(-) समास चिह्न** (का, की) - सम्बन्ध एक वचन

18. **अः** (का, की) - सम्बन्ध, एक वचन

19. **इ** (में, पर) - अधिकरण, एक वचन।
(अन्त में अ, व्यंजन होने पर)

20. **आम्** (में, पर) - अधिकरण, एक वचन।
(अन्त में स्वर होने पर)

21. **याम्** (में, पर) अधिकरण, एक वचन।
(अन्त में आ होने पर।)

22. **त्र** (में, पर) - अधिकरण, एक वचन

द्विवचन

1. **औ** - कर्ता व कर्म द्विवचन।
(अधिकरण, एकवचन, पुल्लिंग, इकारान्त, उकारान्त में भी)

2. **(दीर्घत्व)** - कर्ता व कर्म द्विवचन।
(अन्त में इ, उ होने पर।)

3. **भ्याम्** - करण, सम्प्रदान, अपादान द्विवचन

4. **ओः** - सम्बन्ध व अधिकरण द्विवचन।

5. **योः** - सम्बन्ध व अधिकरण द्विवचन।
(अन्त में 'अ' होने पर।)
(जैसे - बालकयोः, पुस्तकयोः आदि।)

बहुवचन

1. **अः** कर्ता, कर्म बहुवचन
(स्त्रीलिंग व पुल्लिंग)

विशेष :- शब्द के अन्त में व्यंजन होने पर कर्म बहुवचन, अपादान व सम्बन्ध एक वचन में भी।

2. **असः** कर्ता बहुवचन
(वेद में प्रयोग, सरल संस्कृत में उपयोगी)

3. **न्** - कर्म बहुवचन।
(पुल्लिंग शब्द के अन्त में स्वर होने पर, दीर्घ करने के साथ)

विशेष :- शब्द के अन्त में व्यंजन होने पर अन् तथा स्वर होने पर उसे दीर्घ करने के साथ सरल संस्कृत में प्रयोग कर सकते हैं।)

4. **नि** - कर्ता व कर्म बहुवचन नपुंसक लिंग में।

5. **भिः** - करण बहुवचन।

6. **ऐः** - करण बहुवचन, शब्द के अन्त में अ होने पर।

7. **भ्यः** - सम्प्रदान व अपादान बहुवचन

8. **आम्** - सम्बन्ध, बहुवचन।
(अन्त में व्यंजन या ओ होने पर)

9. **नाम्** - सम्बन्ध, बहुवचन।
(अन्त में स्वर होने पर।)

10. **सु** - अधिकरण, बहुवचन।

ॐ

सर्वनाम

संज्ञा तथा विशेषण शब्दों की तरह सर्वनाम भी नाम शब्दभेद के अन्तर्गत आते हैं, अतः इनमें भी संज्ञा तथा विशेषण के समान ही नामिक प्रत्यय लगते हैं। उनमें यत्र-तत्र साधारण परिवर्तन होते हैं जो समझने तथा प्रयोग करने में सरल हैं। विशेष बात यह है कि सामान्यतः सर्वनाम शब्दों के नामिक विभक्ति प्रत्यय समान हैं, उनमें विविधता नहीं है। सर्वनाम शब्दों के रूप लिंग के अनुसार चलते हैं, इसका विशेष ध्यान रखें।

सर्वनाम विशेष विभक्तियां

सर्वनाम शब्दों में कुछ नामिक विभक्तियां संज्ञा तथा विशेषण शब्दों से भिन्न होतीं हैं। ये इस प्रकार हैं।

1. स्मै - सम्प्रदान, एक वचन, सर्वनाम (पुल्लिंग, उभय लिंग)

2. स्मात् - अपादान, एक वचन, सर्वनाम (पुल्लिंग, उभय लिंग)

3. स्मिन् - अधिकरण, एक वचन, सर्वनाम (पुल्लिंग, उभय लिंग)

4. स्यै - सम्प्रदान, एक वचन, सर्वनाम (स्त्रीलिंग)

5. स्याः - अपादान व सम्बन्ध, एकवचन, सर्वनाम (स्त्रीलिंग)

6. साम् - सम्बन्ध, बहुवचन, सर्वनाम (स्त्रीलिंग)

6. षाम् - सम्बन्ध, बहुवचन, सर्वनाम (पुल्लिंग, उभयलिंग)

7. स्याम् - अधिकरण, एक वचन, सर्वनाम (स्त्रीलिंग

विशेष

1. भवत् (आप, पुल्लिंग) तथा भवती (आप, स्त्रीलिंग) शब्द सर्वनाम हैं, परन्तु इनके नामिक रूप संज्ञा शब्दों के समान बनते हैं, सर्वनाम शब्दों के अनुसार नहीं।

2. अस्मद् (मैं) तथा युष्मद् (तुम) के रूप नहीं बन सकते हैं। उसके रूप वास्तव में होते ही नहीं हैं, विभिन्न कारक या नामिकों में पृथक् शब्द ही प्रयोग होते हैं। कुछ अन्य सर्वनाम शब्द भी इसी प्रकार के हैं। उनके शब्दार्थ स्मरण करें, यही उचित है। कारक अथवा नामिक विभक्तियों के अनुसार प्रयोग का अभ्यास क्रमशः होता जायेगा।

ध्यातव्य :- वास्तव में सर्वनाम शब्दों के रूप नामिक शब्दों में विभक्तियों के प्रयोग के उदाहरण के रूप में समझे जायें तो इस प्रकरण को समझने में बहुत सरलता हो सकती है।

इसी उद्देश्य से हम कुछ प्रमुख सर्वनाम शब्दों के नामिक रूप यहां दे रहे हैं।

भवत् (आप) पुल्लिंग

विभक्ति	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	भवान्	भवन्तौ	भवन्तः
द्वितीया	भवन्तम्	भवन्तौ	भवतः
तृतीया	भवता	भवद्भ्याम्	भवद्भिः
चतुर्थी	भवते	भवद्भ्याम्	भवद्भ्यः
पञ्चमी	भवतः	भवद्भ्याम्	भवद्भ्यः
षष्ठी	भवतः	भवतोः	भवताम्
सप्तमी	भवति	भवतोः	भवत्सु

भवती (आप) स्त्रीलिंग

विभक्ति	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	भवती	भवत्यौ	भवत्यः
द्वितीया	भवतीम्	भवत्यौ	भवतीः
तृतीया	भवत्या	भवतीभ्याम्	भवतीभिः
चतुर्थी	भवत्यै	भवतीभ्याम्	भवतीभ्यः

पञ्चमी	भवत्याः	भवतीभ्याम्	भवतीभ्यः
षष्ठी	भवत्याः	भवत्योः	भवतीनाम्
सप्तमी	भवत्याम्	भवत्योः	भवतीषु

सर्व (सब) पुल्लिंग

विभक्ति	**एकवचन**	**द्विवचन**	**बहुवचन**
प्रथमा	सर्वः	सर्वो	सर्वे
द्वितीया	सर्वम्	सर्वो	सर्वान्
तृतीया	सर्वेण	सर्वाभ्याम्	सर्वैः
चतुर्थी	सर्वस्मै	सर्वाभ्याम्	सर्वेभ्यः
पञ्चमी	सर्वस्मात्	सर्वाभ्याम्	सर्वेभ्यः
षष्ठी	सर्वस्य	सर्वयोः	सर्वेषाम्
सप्तमी	सर्वस्मिन्	सर्वयोः	सर्वेषु

सर्व (सब) नपुंसकलिंग

विभक्ति	**एकवचन**	**द्विवचन**	**बहुवचन**
प्रथमा	सर्वम्	सर्वे	सर्वाणि
द्वितीया	सर्वम्	सर्वे	सर्वाणि
तृतीया	सर्वेण	सर्वाभ्याम्	सर्वैः
चतुर्थी	सर्वस्मै	सर्वाभ्याम्	सर्वेभ्यः
पञ्चमी	सर्वस्मात्	सर्वाभ्याम्	सर्वेभ्यः
षष्ठी	सर्वस्य	सर्वयोः	सर्वेषाम्
सप्तमी	सर्वस्मिन्	सर्वयोः	सर्वेषु

सर्वा (सब) स्त्रीलिंग

विभक्ति	**एकवचन**	**द्विवचन**	**बहुवचन**
प्रथमा	सर्वा	सर्वे	सर्वाः
द्वितीया	सर्वाम्	सर्वे	सर्वाः
तृतीया	सर्वया	सर्वाभ्याम्	सर्वाभिः
चतुर्थी	सर्वस्यै	सर्वाभ्याम्	सर्वाभ्यः
पञ्चमी	सर्वस्याः	सर्वाभ्याम्	सर्वाभ्यः
षष्ठी	सर्वस्याः	सर्वयोः	सर्वासाम्
सप्तमी	सर्वस्याम्	सर्वयोः	सर्वासु

विशेष

सामान्यतः सर्वनाम शब्दों के रूप सर्व के समान ही बनते हैं। उभयलिंग में प्रथमा, द्वितीया के रूप एकसमान होते हैं तथा शेष विभक्तियों में पुल्लिंग के समान रूप बनते हैं। प्रथमा एक वचन में बहुधा लिंग के अनुसार मूल शब्द में परिवर्तन होता है।

ध्यातव्य :- यत्, तत्, किम् आदि सर्वनाम शब्दों के रूप इसी प्रकार बनेंगे। उदाहरणस्वरूप यत् के रूप तीनों लिंगों में यहां प्रस्तुत किये जा रहे हैं। कुछ शब्दों के रूप विभक्तियाँ लगाने से नहीं बनते, उन शब्दों में ही परिवर्तन हो जाता है। उनको ध्यान देकर समझ लें।

यत् (जो) पुल्लिंग

विभक्ति	**एकवचन**	**द्विवचन**	**बहुवचन**
प्रथमा	यः	यौ	ये
द्वितीया	यम्	यौ	यान्
तृतीया	येन	याभ्याम्	यैः
चतुर्थी	यस्मै	याभ्याम्	येभ्यः

पञ्चमी	यस्मात्	याभ्याम्	येभ्यः
षष्ठी	यस्य	ययोः	येषाम्
सप्तमी	यस्मिन्	ययोः	येषु

यत् (जो) नपुंसकलिंग

विभक्ति	**एकवचन**	**द्विवचन**	**बहुवचन**
प्रथमा	यत्-यद्	ये	यानि
द्वितीया	यत्-यद्	ये	यानि
तृतीया	येन	याभ्याम्	यैः
चतुर्थी	यस्मै	याभ्याम्	येभ्यः
पञ्चमी	यस्मात्	याभ्याम्	येभ्यः
षष्ठी	यस्य	ययोः	येषाम्
सप्तमी	यस्मिन्	ययोः	येषु

यत् (जो) स्त्रीलिंग

विभक्ति	**एकवचन**	**द्विवचन**	**बहुवचन**
प्रथमा	या	ये	याः
द्वितीया	याम्	ये	याः
तृतीया	यया	याभ्याम्	याभिः
चतुर्थी	यस्यै	याभ्याम्	याभ्यः
पञ्चमी	यस्याः	याभ्याम्	याभ्यः
षष्ठी	यस्याः	ययोः	यासाम्
सप्तमी	यस्याम्	ययोः	यासु

विशेष सर्वनाम शब्द

अब हम कुछ विशेष सर्वनाम शब्दों के रूप दे रहें हैं जिनमें विभक्तियाँ लगाने पर शब्दों में ही परिवर्तन हो जाता है। विशेष बात यह है कि विभक्तियों में परिवर्तन नहीं होता है, परिवर्तन सर्वनाम शब्दों में होता है। इन पर विशेष ध्यान दें। इनका शब्दार्थ स्मरण करना उपयोगी है।

इदम् (यह) पुल्लिंग

विभक्ति	**एकवचन**	**द्विवचन**	**बहुवचन**
प्रथमा	अयम्	इमौ	इमे
द्वितीया	इमम्	इमौ	इमान्
तृतीया	अनेन	आभ्याम्	एभिः
चतुर्थी	अस्मै	आभ्याम्	एभ्यः
पञ्चमी	अस्मात्	आभ्याम्	एभ्यः
षष्ठी	अस्य	अनयोः	एषाम्
सप्तमी	अस्मिन्	अनयोः	एषु

इदम् (यह) नपुंसकलिंग

विभक्ति	**एकवचन**	**द्विवचन**	**बहुवचन**
प्रथमा	इदम्	इमे	इमानि
द्वितीया	इदम्	इमे	इमानि
तृतीया	अनेन	आभ्याम्	एभिः
चतुर्थी	अस्मै	आभ्याम्	एभ्यः
पञ्चमी	अस्मात्	आभ्याम्	एभ्यः
षष्ठी	अस्य	अनयोः	एषाम्
सप्तमी	अस्मिन्	अनयोः	एषु

इदम् (यह) स्त्रीलिंग

विभक्ति	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	इयम्	इमे	इमाः
द्वितीया	इमाम्	इमे	इमाः
तृतीया	अनया	आभ्याम्	आभिः
चतुर्थी	अस्यै	आभ्याम्	आभ्यः
पञ्चमी	अस्याः	आभ्याम्	आभ्यः
षष्ठी	अस्याः	अनयोः	आसाम्
सप्तमी	अस्याम्	अनयोः	आसु

अदस् (यह) पुल्लिंग

विभक्ति	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	असौ	अमू	अमो
द्वितीया	अमुम्	अमू	अमून्
तृतीया	अमुना	अमूभ्याम्	अमीभिः
चतुर्थी	अमुष्मै	अमूभ्याम्	अमीभ्यः
पञ्चमी	अमुष्मात्	अमूभ्याम्	अमीभ्यः
षष्ठी	अमुष्य	अमुयोः	अमीषाम्
सप्तमी	अमुष्मिन्	अमुयोः	अमीषु

अदस् (यह) नपुंसकलिंग

विभक्ति	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	अदः	अमू	अमूनि
द्वितीया	अदः	अमू	अमूनि
तृतीया	अमुना	अमूभ्याम्	अमीभिः

चतुर्थी	अमुष्मै	अमूभ्याम्	अमीभ्यः
पञ्चमी	अमुष्मात्	अमूभ्याम्	अमीभ्यः
षष्ठी	अमुष्य	अमुयोः	अमीषाम्
सप्तमी	अमुष्मिन्	अमुयोः	अमीषु

अदस् (यह) स्त्रीलिंग

विभक्ति	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	असौ	अमू	अमूः
द्वितीया	अमुम्	अमू	अमूः
तृतीया	अमुया	अमूभ्याम्	अमूभिः
चतुर्थी	अमुष्यै	अमूभ्याम्	अमूभ्यः
पञ्चमी	अमुष्याः	अमूभ्याम्	अमूभ्यः
षष्ठी	अमुष्याः	अमुयोः	अमूषाम्
सप्तमी	अमुष्याम्	अमुयोः	अमूषु

अस्मद् (मैं) त्रिलिंग

विभक्ति	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	अहम्	आवाम्	वयम्
द्वितीया	माम्	आवाम्	अस्मान्
तृतीया	मया	आवाभ्याम्	अस्माभिः
चतुर्थी	मह्यम्	आवाभ्याम्	अस्मभ्यम्
पञ्चमी	मत्	आवाभ्याम्	अस्मत्
षष्ठी	मम	आवयोः	अस्माकम्
सप्तमी	मयि	आवयोः	अस्मासु

युष्मद् (तू) त्रिलिंग

विभक्ति	**एकवचन**	**द्विवचन**	**बहुवचन**
प्रथमा	त्वम्	युवाम्	यूयम्
द्वितीया	त्वाम्	युवाम्	युष्मान्
तृतीया	त्वया	युवाभ्याम्	युष्माभिः
चतुर्थी	तुभ्यम्	युवाभ्याम्	युष्मभ्यम्
पञ्चमी	त्वत्	युवाभ्याम्	युष्मत्
षष्ठी	तव	युवयोः	युष्माकम्
सप्तमी	त्वयि	युवयोः	युष्मासु

विशेष :- सारिणी से स्पष्ट है कि अस्मद्, युष्मद् के रूप नहीं होते, सभी स्वतन्त्र शब्द हैं।

प्रमुख सर्वनाम शब्द

(नामिक विभक्ति के साथ पद बनाकर प्रयोग होंगे)

अदस् = यह
अधर = नीचे
अन्तर = बीच में
अन्य = कोई और, इतर
अन्यतर = कोई अन्य
अपर = अन्य
अवर = बाद वाला, नीचे वाला
इतर = अन्य
इदम् = यह
उत्तर = उत्तर
उभय = दोनो
उभ = दोनो
एक = एक

एतत् = यह
किम् = क्या
तत् = वह
त्वत् = अन्य
त्व = अन्य
दक्षिण = दाहिने
द्वि = दो
नेम = अर्ध
पर = पराया, अन्य, दूसरा
पूर्व = पहले
यत् = जो
विश्व = सब
सम = सब (समान अर्थ में सर्वनाम नहीं)
सिम = सम्पूर्ण
सर्व = सब
स्व = निज, अपना

प्रमुख सर्वनाम शब्द

(नामिक विभक्तियों के साथ)

1. अहम् = मैं, मैंने
2. आवाम् = हम दोनों ने, हम दोनो को
3. वयम् = हमने, हम
4. माम्, मा = मुझको
5. अस्मान् = हमको, हमें
6. मया = मुझसे, मेरे द्वारा
7. आवाभ्याम् = हम दोनों द्वारा, हम दोनो से, हम दोनों के लिए
8. अस्माभिः = हमसे, हमारे द्वारा

9. मह्यम् = मेरे लिए
10. मे = मेरे लिए, मेरा
11. नौ = हम दोनों को, हम दोनो का,
हम दोनो के लिए
12. अस्मभ्यम् = हमारे लिए
13. नः = हमको, हमारा, हमारे लिए
14. मत् = मुझसे
15. अस्मत् = हमसे
16. मम = मेरा
17. आवयोः = हम दोनों का, हम दोनो में
18. अस्माकम् = हमारा
19. मयि = मुझसे
20. अस्मासु = हममें
21. त्वम् = तुम, तुमने
22. युवाम् = तुम दोनों ने, तुम दोनो को
23. यूयम् = तुम सब ने
24. त्वाम् = तुमको
25. वाम् = तुम दोनों को, तुम दोनो का,
तुम दोनो के लिए
26. युष्मान् = तुम सब को
27. वः, वो = तुम सबको, तुम सबका,
तुम सबके लिए
28. त्वया = तुमसे, तुम्हारे द्वारा
29. युवाभ्याम् = तुम दोनों से, तुम दोनो द्वारा,
तुम दोनो के लिए
30. युष्माभिः = तुम सब से, तुम सब द्वारा
41. तुभ्यम् = तुम्हारे लिए
42. युष्मभ्यम् = तुम सब के लिए

43. त्वत् = तुमसे
44. युष्मत् = तुम सब से
45. तव = तुम्हारा
46. युवयोः = तुम दोनों का, तुम दोनो में
47. युष्माकम् = तुम सबको
48. त्वयि = तुम में
49. युष्मासु = तुम सब में
40. वाम्, ते = तुम्हारे लिए, तुम्हारा
41. सः = वह (पुरुष)
42. सा = वह (स्त्री)
43. तत् = वह (उभयलिंग)
44. तौ = वे दोनो, उन दोनो को (पुरुष)
45. ते = वे सब (पुरुष),
वे दो, उन दो को (स्त्री, उभयलिंग)
46. तम् = उसको
47. तान् = उन सबको
48. तेन = उससे, उसके द्वारा
49. ताभ्याम् = उन दोनो द्वारा, उन दोनो के लिए,
उन दोनो से (अपादान, अलग होना)
50. तैः = उनके द्वारा
51. तस्मै = उसके लिए
52. तेभ्यः = उनके लिए,
उनसे (अपादान, अलग होना)
53. तस्मात् = उससे (अपादान, अलग होना)
54. तस्य = उसका
55. तयोः = उन दोनो का, उन दोनो में
56. तेषाम् = उनका
57. तस्मिन् = उसमें

58. तेसु = उनमें
59. भवान् = आप, आपने
60. भवन्तौ = आप दो, आप दो ने, आप दो को
61. भवन्तः = आप सब, आप सबने
62. भवन्तम् = आप को
63. भवतः = आप सबको
64. भवता = आपसे, आप द्वारा
65. भवद्भ्याम् = आप दो द्वारा, आप दो के लिए, आप दो से (अपादान, अलग होना)
66.भवद्भिः = आप सब द्वारा
67. भवते = आप के लिए
68. भवद्भ्यः = आप सब के लिए, आप सब से (अपादान, अलग होना)
69. भवतः = आप से (अपादान, अलग होना), आपका
70. भवतोः = आप दो का, आप दो में
71. भवताम् = आप सब का
72. भवति = आप में
73. भवत्सु = आप सब में
74. भवन् = आप (सम्बोधन)
75. भवती = आप (स्त्री), आप दो (उभयलिंग)
76. भवत् = आप, आपने (उभयलिंग)
77. भवन्ति = आप सब, आप सबने (उभयलिंग)

ॐ

संख्या

अंक	संख्या	हिन्दी	क्रमवाची संख्या रूप पुल्लिंग (उभयलिंग)	स्त्रीलिंग
1	एक	एक	प्रथमः (प्रथमम्)	प्रथमा
2	द्वि	दो	द्वितीयः (द्वितीयम्)	द्वितीया
3	त्रि	तीन	तृतीयः (तृतीयम्)	तृतीया
4	चतुः	चार	चतुर्थ, तुरीय, तुर्य	चतुर्थी, तुरीया, तुर्या
5	पंच	पांच	पंचम	पंचमी
6	षट्	छह	षष्ठ	षष्ठी
7	सप्त	सात	सप्तम	सप्तमी
8	अष्ट	आठ	अष्टम	अष्टमी
9	नव	नौ	नवम	नवमी
10	दश	दस	दशम	दशमी
11	एकादश	ग्यारह	एकादश	एकादशी
12	द्वादश	बारह	द्वादश	द्वादशी
13	त्रयोदश	तेरह	त्रयोदश	त्रयोदशी
14	चतुर्दश	चौदह	चतुर्दश	चतुर्दशी
15	पंचदश	पन्द्रह	पंचदश	पंचदशी
16	षोडश	सोलह	षोडश	षोडशी
17	सप्तदश	सत्रह	सप्तदश	सप्तदशी
18	अष्टदश	अठारह	अष्टादश	अष्टादशी
19	नवदश, एकोनविंशति, ऊनविंशति,	उन्नीस	नवदश एकोनविंश एकोनविंशतितम ऊनविंश, ऊनविंशतितम	नवदशी एकोनविंशी एकोनविंशतिमी ऊनविंशी ऊनविंशतितमी

	एकान्नविंशति		एकान्नविंश, एकान्नविंशतितम्	एकान्नविंशी एकान्नविंशतितमी
20	विंशतिः	बीस	विंश विंशतितम	विंशी विंशतितमी
21	एकविंशतिः	इक्कीस	एकविंश, एकविंशतितम	एकविंशी एकविंशतितमी
22	द्वाविंशतिः	बाईस	द्वाविंश द्वाविंशतितम	द्वाविंशी द्वाविंशतितमी
23	त्रयोविंशतिः	तेईस	त्रयोविंश, त्रयोविंशतितम	त्रयोविंशी त्रयोविंशतितमी
24	चतुर्विंशतिः	चौबीस	चतुर्विंश, चतुर्विंशतितम	चतुर्विंशी चतुर्विंसतितमी
25	पंचविशतिः	पच्चीस	पंचविंश, पंचविंशतितम	पञ्चविंशी पंचविंशतितमी
26	षड्विंशतिः	छब्बीस	षड्विंश, षड्विंशतितम	षड्विंशी षड्विंशतितमी
27	सप्तविंशतिः	सत्ताईस	सप्तविंश, सप्तविंशतितम	सप्तविंशी सप्तविंशतितमी
28	अष्टाविंशतिः अष्टविंशतिः	अट्ठाईस	अष्टाविंश, अष्टाविंशतितम	अष्टाविंशी अष्टाविंशतितमी
29	नवविंशतिः,	उनतीस	नवविंश, नवविंशतितम	नवविंशी नवविंशतितमी
	एकोनत्रिंशत्		एकोनत्रिंश, एकोनत्रिंशत्तम	एकोनत्रिंशी एकोनत्रिंशत्तमी
	ऊनत्रिंशत्		ऊनत्रिंश, ऊनत्रिंशत्तम	ऊनत्रिंशी ऊनत्रिंशत्तमी
	एकान्नत्रिंशत्		एकान्नत्रिंश, एकान्नत्रिंशत्तम	एकान्नत्रिंशी एकान्नत्रिंशत्तमी
30	त्रिंशत्	तीस	त्रिंश, त्रिंशत्तम	त्रिंशी, त्रिंशत्तमी
31	एकत्रिंशत्	इकतीस	एकत्रिंश एकत्रिंशत्तम	एकत्रिंशी एकत्रिंशत्तमी
32	द्वात्रिंशत्	बत्तीस	द्वात्रिंश	द्वात्रिंशी

			द्वात्रिंशत्तम	द्वात्रिंशत्तमी
33	त्रयस्त्रिंशत्	तैंतीस	त्रयस्त्रिंश त्रयस्त्रिंशत्तम	त्रयस्त्रिंशी त्रयस्त्रिंशत्तमी
34	चतुस्त्रिंशत्	चौंतीस	चतुस्त्रिंश चतुस्त्रिंशत्तम	चतुस्त्रिंशो चतुस्त्रिंशत्तमी
35	पंचत्रिंशत्	पैंतीस	पंचत्रिंश पंचत्रिंशत्तम	पंचत्रिंशी पंचत्रिंशत्तमी
36	षट्त्रिंशत्	छत्तीस	षट्त्रिंश षट्त्रिंशत्तम	षट्त्रिंशी षट्त्रिशत्तमी
37	सप्तत्रिंशत्	सैंतीस	सप्तत्रिंश सप्तत्रिंशत्तम	सप्तत्रिंशी सप्तत्रिंशत्तमी
38	अष्टात्रिंशत्	अड़तीस	अष्टत्रिंश अष्टत्रिंशत्तम	अष्टात्रिंशी अष्टत्रिंशत्तमी
39	नवत्रिंशत्	उनतालीस	नवत्रिंश नवत्रिंशत्तम	नवत्रिंशी नवत्रिंशत्तमी
	एकोनचत्वारिंशत्		एकोनचत्वारिंश एकोनचत्वारिंशत्तम	एकोनचत्वारिंशी एकोनचत्वारिंशत्तमी
	ऊनचत्वारिंशत्		ऊनचत्वारिंश ऊनचत्वारिंशत्तम	ऊनचत्वारिंशी ऊनचत्वारिंशत्तमी
	एकान्नचत्वारिंशत्		एकान्नचत्वारिंश एकान्नचत्वारिंशत्तम	एकान्नचत्वारिंशी एकान्नचत्वारिंशत्तमी
40	चत्वारिंशत्	चालीस	चत्वारिंश चत्वारिंशत्तम	चत्वारिंशी चत्वारिंशत्तमी
41	एकचत्वारिंशत्	इकतालीस	एकचत्वारिंश एकचत्वारिंशत्तम	एकचत्वारिंशी एकचत्वारिंशत्तमी
42	द्विचत्वारिंशत्	बयालीस	द्वाचत्वारिंश द्वाचत्वारिंशत्तम	द्वाचत्वारिंशी द्वाचत्वारिंशत्तमी
	द्विचत्वारिंशत्		द्विचत्वारिंश द्विचत्वारिंशत्तम	द्विचत्वारिंशी द्विचत्वारिंशत्तमी
43	त्रिचत्वारिंशत्	तितालीस	त्रयश्चत्वारिंश त्रयश्चत्वारिंशत्तम	त्रयश्चत्वारिंशी त्रयश्चत्वारिंशत्तमी
			त्रिचत्वारिंश त्रिचत्वारिंशत्तम	त्रिचत्वारिंशी त्रिचत्वारिंशत्तमी

44	चतुश्चत्वारिंशत्	चौवालीस	चतुश्चत्वारिंश	चतुश्चत्वारिंशी
			चतुश्चत्वारिंशत्तम	चतुश्चत्वारिंशत्तमी
45	पंचचत्वारिंशत्	पैंतालीस	पंचचत्वारिंश	पंचचत्वारिंशी
			पंचत्वारिंशत्तम	पंचचत्वारिंशत्तमी
46	षट्चत्वारिंशत्	छियालीस	षट्चत्वारिंश	षट्चत्वारिंशी
			षट्चत्वारिंशत्तम	षट्चत्वारिंशत्तमी
47	सप्तचत्वारिंशत्	सैंतालीस	सप्तचत्वारिंश	सप्तचत्वारिंशी
			सप्तचत्वारिंशत्तम	सप्तचत्वारिंशत्तमी
48	अष्टचत्वारिंशत्	अड़तालीस	अष्टचत्वारिंश	अष्टचत्वारिंशी
			अष्टचत्वारिंशत्तम	अष्टचत्वारिंशत्तमी
49	नवचत्वारिंशत्	उनचास	नवचत्वारिंश	नवचत्वारिंशी
			नवचत्वारिंशत्तम	नवचत्वारिंशत्तमी
	एकोनपंचाशत्		एकोनपंचाश	एकोनपंचाशी
			एकोनपंचाशत्तम	एकोनपंचाशत्तमी
	ऊनपंचाशत्		ऊनपंचाश	ऊनपंचाशी
			ऊनपंचाशत्तम	ऊनपंचाशत्तमी
	एकान्नपंचाशत्		एकान्नपंचाश	एकान्नपंचाशी
			एकान्नपंचाशत्तम	एकान्नपंचाशत्तमी
50	पंचाशत्	पचास	पंचाश	पंचाशी
			पंचाशत्तम	पंचाशत्तमी
51	एकापंचाशत्	इक्यावन	एकपंचाश	एकपंचाशी
			एकपञ्चाशत्तम	एकपंचाशत्तमी
52	द्विपंचाशत्	बावन	द्विपंचाश	द्विपंचाशी
			द्विपंचाशत्तम	द्विपंचाशत्तमी
	द्वापंचाशत्		द्वापंचाश	द्वापंचाशी
			द्वापंचाशत्तम	द्वापंचाशत्तमी
53	त्रिपंचाशत्	तिरपन	त्रिपंचाश	त्रिपंचाशी
			त्रिपंचाशत्तम	त्रिपंचाशत्तमी
	त्रयःपंचाशत्		त्रयःपंचाश	त्रयःपंचाशी
			त्रयःपंचाशत्तम	त्रयःपंचाशत्तमी
54	चतुःपंचाशत्	चौवन	चतुःपंचाश	चतुःपंचाशी
			चतुःपंचाशत्तम	चतुःपंचाशत्तमी

55	पंचपंचाशत्	पचपन	पंचपंचाश	पंचपंचाशी
			पञ्चपञ्चाशत्तम	पंचपंचाशत्तमी
56	षट्पंचाशत्	छप्पन	षट्पंचाश	षट्पंचाशी
			षट्पंचाशत्तम	षट्पंचाशत्तमी
57	सप्तपंचाशत्	सत्तावन	सप्तपंचाश	सप्तपंचाशी
			सप्तपंचाशत्तम	सप्तपंचाशत्तमी
58	अष्टपंचाशत्	अट्ठावन	अष्टपंचाश	अष्टपंचाशी
			अष्टपंचाशत्तम	अष्टपंचाशत्तमी
59	नवपंचाशत्	उनसठ	नवपंचाश	नवपंचाशी
			नवपंचाशत्तम	नवपंचाशत्तमी
	एकोनषष्टि		एकोनषष्ट	एकोनषष्टी
			एकोनषष्टतम	एकोनषष्टतमी
	ऊनषष्टि		ऊनषष्ट	ऊनषष्टी
			ऊनषष्टितम	ऊनषष्टितमी
	एकोन्नषष्टि		एकोनषष्ट	एकोनषष्टी
			एकोनषष्टितम	एकोनषष्टितमी
60	षष्टिः	साठ	षष्ट	षष्टी
			षष्टितम	षष्टितमी
61	एकषष्टिः	इकसठ	एकषष्ट	एकषष्टी
			एकषष्टितम	एकषष्टितमी
62	द्विषष्टि	बांसठ	द्विषष्ट	द्विषष्टी
			द्विषष्टितम	द्विषष्टितमी
	द्वाषष्टि		द्वाषष्ट	द्वाषष्टी
			द्वाषष्टितम	द्वाषष्टितमी
63	त्रिषष्टिः	तिरसठ	त्रिषष्ट	त्रिषष्टी
			त्रिषष्टितम	त्रिषष्टितमी
	त्रयषष्टिः		त्रयष्षष्ट	त्रयष्षष्टी
			त्रयष्षष्टितम	त्रयष्षष्टितमी
64	चतुःषष्टिः	चौंसठ	चतुष्षष्ट	चतुष्षष्टी
			चतुष्षष्टितम	चतुष्षष्टितमी
65	पंचषष्टिः	पैंसठ	पंचषष्ठ	पंचषष्ठी
			पंचषष्टितम	पंचषष्टितमी

66	षट्षष्टिः	छांछठ	षट्षष्ट	षट्षष्ठी
			षट्षष्टितम	षट्षष्टितमी
67	सप्तषष्टिः	सरसठ	सप्तषष्ट	सप्तषष्टी
			सप्तषष्टितम	सप्तषष्टितमी
68	अष्टषष्टिः	अड़सठ	अष्टषष्ट	अष्टषष्टी
			अष्टषष्टितम	अष्टषष्टितमी
69	नवषष्टिः	उनहत्तर	नवषष्ट	नवषष्टी
			नवषष्टितम	नवषष्टितमी
	एकोनसप्तति		एकोनसप्तत	एकोनसप्तमी
			एकोनसप्ततितम	एकोनसप्ततितमी
	ऊनसप्तति		ऊनसप्तत	ऊनसप्तती
			ऊनसप्ततितम	ऊनसप्तततमी
	एकान्नसप्तति		एकान्नसप्तत	एकान्नसप्तती
			एकान्नसप्ततितम	कान्नसप्ततितमी
70	सप्तति	सत्तर	सप्तत	सप्तती
			सप्ततितम	सप्तततमी
71	एकसप्तति	इकहत्तर	एकसप्तत	एकसप्तती
			एकसप्ततितम	एकसप्ततितमी
72	द्विसप्तति	बहत्तर	द्विसप्तत	द्विसप्तती
			द्विसप्ततितम	द्विसप्ततितमी
	द्वासप्तति		द्वासप्तत	द्वासप्तती
			द्वासप्ततितमी	द्वासप्ततितमी
73	त्रिसप्तति	तिहत्तर	त्रिसप्तत	त्रिसप्तती
			त्रिसप्ततितम	त्रिसप्ततितमी
	त्रयस्सप्तति		त्रयस्सप्तत	त्रयस्सप्तती
			त्रयस्सप्ततितम	त्रयस्सप्ततितमी
74	चतुस्सप्तति	चौहत्तर	चतुस्सप्तत	चतुस्सप्तती
			चतुस्सप्ततितम	चतुस्सप्तततमी
75	पंचसप्तति	पिचहत्तर	पंचसप्तत	पंचसप्तती
			पंचसप्ततितम	पंचसप्ततितमी
76	षट्सप्तति	छिहत्तर	षट्सप्तत	षट्सप्तती
			षट्सप्ततितम	षट्सप्ततितमी

77	सप्तसप्तति	सतहत्तर	सप्तसप्तत	सप्तसप्तती
			सप्तसप्ततितम	सप्तसप्ततितमी
78	अष्टसप्तति	अठहत्तर	अष्टसप्तत	अष्टसप्तती
			अष्टसप्ततितम	अष्टसप्ततितमी
79	नवसप्तति	उन्यासी	नवसप्तत	नवसप्तती
			नवसप्ततितम	नवसप्ततितमी
	एकोनाशिति		एकोनाशीत	एकोनाशीती
			एकोनाशीतितम	एकोनाशीतितमी
	ऊनाशीति		ऊनाशीत	ऊनाशीती
			ऊनाशीतितम	ऊनाशीतितमी
	एकान्नाशीति		एकान्नाशीत	एकान्नाशीती
			एकान्नाशीतितम	एकान्नाशीतितमी
80	अशीति	अस्सी	अशीत	अशीती
			अशीतितम	अशीतितमी
81	एकाशीति	इक्यासी	एकाशीत	एकाशीती
			एकाशीतितम	एकाशीतितमी
82	द्वयशीति	बयासी	द्वयशीत	द्वयशीती
			द्वयशीतितम	द्वयशीतितमी
83	त्र्यशीति	तिरासी	त्र्यशीत	त्र्यशीती
			त्र्यशीतितम	त्र्यशीतितमी
84	चतुरशीति	चौरासी	चतुरशीत	चतुरशीती
			चतुरशीतितम	चतुरशीतितमी
85	पंचाशीति	पच्चासी	पंचाशीत	पंचाशीती
			पंचाशीतितम	पंचाशीतितमी
86	षडशीति	छियासी	षडशीत	षडशीती
			षडशीतितम	षडशीतितमी
87	सप्ताशीति	सत्तासी	सप्ताशीत	सप्ताशीती
			सप्ताशीतितम	सप्ताशीतितमी
88	अष्टशीति	अट्ठासी	अष्टाशीत	अष्टाशीती
			अष्टाशीतितम	अष्टाशीतितमी
89	नवाशीति	नवासी	नवाशीत	नवाशीती
			नवाशीतितम	नवाशीतितमी

	एकोननवति		एकोननवत एकोननवतितम	एकोननवती एकोननवतितमी
	ऊननवति		ऊननवत ऊननवतितम	ऊननवती ऊननवतितमी
	एकान्ननवति		एकान्ननवत एकान्नवतितम	एकान्ननवती एकान्नवतितमी
90	नवति	नब्बे	नवत नवतितम	नवती नवतितमी
91	एकनवति	इक्यानवे	एकनवत एकनवतितम	एकनवती एकनवतितमी
92	द्विनवति	बानवे	द्विनवत द्विनवतितम	द्विनवती द्विनवतितमी
	द्वानवति		द्वानवत द्वानवतितम	द्वानवती द्वानवतितमी
93	त्रिनवति	तिरानवे	त्रिनवत त्रिनवतितम त्रयोनवत त्रयोनवतितम	त्रिनवती त्रिनवतितमी त्रयोनवती त्रयोनवतितमी
94	चतुर्नवति	चौरानवे	चतुर्नवत चतुर्नवतितम	चतुर्नवती चतुर्नवतितमी
95	पंचनवति	पच्चानवे	पंचनवत पंचनवतितम	पंचनवती पंचनवतितमी
96	षण्णवति	छियानवे	षण्णनवत षण्णनवतितम	षण्णनवती षण्णनवतितमी
97	सप्तनवति	सत्तानवे	सप्तनवत सप्तनवतितम	सप्तनवती सप्तनवतितमी
98	अष्टनवति	अट्ठानवे	अष्टनवत अष्टनवतितम	अष्टनवती अष्टनवतितमी
99	नवनवति	निन्यानवे	नवनवत नवनवतितम	नवनवती नवनवतितमी
	एकोनशत		एकोनशततम	एकोनशततमी
100	शतम्	सौ	शततम	शततमी

1000	सहस्र	एक हजार	सहस्रतम	सहस्रततमी
10,000	अयुत	दस हजार	अयुततम	अयुततमी
1,00,000	लक्ष	एक लाख	लक्षतम	लक्षतमी
10,00,000	नियुत	दस लाख	नियुततम	नियुततमी
1,00,00,000	कोटि	एक करोड़	कोटितम	कोटितमी

संख्यावाची शब्द प्रयोग

नियम 1. एक, दस, सौ के क्रम से दस गुना करते हुए बड़ी संख्याओं का बोध इन दो श्लोकों से हो जाता है :

एकम् दश शतम् चैव, सहस्रम् अयुतम् तथा।
लक्षम् च नियुतम् चैव, कोटिः अर्बुदम् एव च।।
वृन्दः खर्वो निखर्वः च, शंखः पद्मम् च सागरः।
अन्त्यम् मध्यम् परार्द्धम् च, दशवृद्ध्या यथाक्रमम्।।

नियम 2. एक शब्द एक वचन में, द्वि शब्द द्विवचन में तथा त्रि से अष्टादश तक शब्द बहुचचन में प्रयोग होते हैं।

नियम 3. एक से अष्टादश तक संख्यायें विशेषण मानी जातीं हैं, अतः विशेष्य के अनुसार प्रयोग होती हैं।

नियम 4. एक, द्वि, त्रि, चतुः शब्दों का लिंग अपने विशेष्य के अनुसार होता है। पंच से अष्टादश तक लिंगभेद प्रायः नहीं होता है।

नियम 5. विंशति आदि संख्या शब्द यदि अपनी संख्या को सूचित करें तो एक वचन में प्रयोग होते हैं। उनमें लिंगभेद नहीं होता है।

नियम 6. यदि इन संख्याओं का प्रयोग संख्या से कई गुने के लिए हो तो द्विवचन या बहुवचन में प्रयोग होता है। जैसे त्रीणि शतानि आदि।

नियम 7. ऊन विंशति से नवनवति तक संख्या शब्द स्त्रीलिंग माने गये हैं, वे पुल्लिंग के लिए प्रयोग हों तो भी। यह परम्परा है।

नियम 8. एक सौ से बड़ी संख्या के लिए छोटी संख्या के बाद अधिक या उत्तर जोड़कर बड़ी संख्या लिखते हैं। जैसे सप्ताधिक नवशतम्।

नियम 9. शत, सहस्र, लक्ष, कोटि आदि संख्याओं का आधा, चौथाई जोड़ने के लिए सार्ध या सपाद का प्रयोग करते हैं। जैसे सार्ध पंचशतम् (550), सपादलक्षम् (सवा लाख) आदि।

नियम 10. इनमें चौथाई कम करने के लिए पादोन शब्द का प्रयोग करते हैं। जैसे पादोन अष्टशतम् (पौने आठ सौ)।

नियम 11. पांच या सात जैसे अनिश्चित संख्या के लिए पंचसप्तानि आदि का प्रयोग करते हैं।

नियम 12. सौ प्रकार से जैसे शब्दों के लिए शतधा, सहस्रधा आदि का प्रयोग करते हैं।

नियम 13. समूहवाचक द्वय, त्रय, चतुष्टय, पंचक षट्क, सप्तक आदि एक वचन उभयलिंग में प्रयोग होते हैं। बालकद्वयम् क्रीडति, छात्रत्रयम् पठति आदि।

नियम 14. दो सौ, तीन सौ, पांच सौ आदि के लिए द्विशत, त्रिशत, पंचशत आदि का प्रयोग करते हैं। सामान्यतः **जनानाम् सप्तशती तिष्ठति** जैसे वाक्य बनाने की परम्परा है। सरल संस्कृत में पंचशत जनाः, पंचशताः बालकाः, सप्तसहस्राः छात्राः, अष्टलक्षा नार्यः, अष्टलक्ष नार्यः भी लिख सकते हैं। ऐसे प्रयोगों में विकल्प स्वीकार्य हैं, शास्त्रीयता अथवा परम्परा को लेकर विवाद व्यर्थ है।

नियम 15. दश, विंशति आदि के साथ जुड़ने पर एक-एका, द्वि-द्वा, त्रि-त्रय, अष्ट-अष्टा आदि विकल्प प्रचलित हैं। सरल संस्कृत में ये विकल्प सर्वत्र मान्य हैं।

नियम 16. सरल संस्कृत में सभी संख्याओं को अव्यय मानकर प्रयोग करने का विकल्प स्वीकार्य है।

ॐ

आख्यातिक : क्रिया प्रकरण

क्रिया-भेद

संस्कृत व्याकरण में **क्रियाओं के सात भेद** होते हैं :

1. सहायक क्रिया
2. विशिष्ट क्रिया
3. मुख्य क्रिया
4. सोपसर्ग क्रिया
5. प्रेरणार्थक क्रिया
6. पूर्वकालिक क्रिया
7. सह क्रिया

1. सहायक क्रिया

परिचय :- इससे किसी व्यक्ति, वस्तु, स्थान आदि के होने, अस्तित्व अथवा स्थिति की सूचना मात्र मिलती है।

वाक्य रचना :- संस्कृत वाक्यों में अस्ति, भवति, आसीत्, स्म, भविष्यति आदि सहायक क्रियाओं का प्रयोग करते हैं।

उदाहरण :- सः छात्रः अस्ति। वह छात्र है।

2. विशिष्ट क्रिया

परिचय :- क्रियाएँ मूलतः दो प्रकार की होती हैं, करना तथा होना। कोई भी क्रिया या तो होती है अथवा उसे किया जाता है। अतः सभी क्रियाओं को करना या होना के रूप में व्यक्त कर सकते हैं। इस प्रकार की वाक्य रचना में व्याकरण की दृष्टि से प्रयोग में सरलता भी होती है।

वाक्य रचना :- संस्कृत वाक्यों में में मुख्य क्रिया को संज्ञा के रूप में व्यक्त कर विशिष्ट क्रिया के रूप में कृ अथवा भू धातु के आख्यातिक रूपों का प्रयोग करते हैं।

उदाहरण :- सः पठति के स्थान पर पठनम् पाठम् वा करोति।

वह पढ़ता है अथवा पढ़ाई या पाठ करता है।

इसी प्रकार शयनम् करोति, दर्शनम् करोति, वर्षा भवति इत्यादि वाक्य विशिष्ट क्रिया के प्रयोग से बन सकते हैं।

विशेष :- 1. कृ धातु के रूप करति, करतः करन्ति आदि भी बनते हैं। वेद में इन रूपों का प्रयोग हुआ है तथा पाणिनि सहित अनेक व्याकरणाचार्यों का भी ऐसा ही मत है।

2. परम्परागत शब्दावली में कहें तो कृ धातु भ्वादि गण में पठित है। क्षीरतरंगिणी 1-639, पुरुषकार, पाल्यकीर्ति, हेमचन्द्र तथा दशपादी उणादि वृत्तिकार आदि इससे सहमत हैं।

3. पाणिनि ने अष्टाध्यायी सूत्र तनादिकृञ्भ्यः उः (3-1-79) में तनादि गण से पृथक् कृ धातु का उल्लेख किया है। इससे भी स्पष्ट है कि कृ धातु का पाठ तनादि गण में नहीं है। उल्लेखनीय है कि करोति आदि रूप तनादि गण के अनुसार बनते हैं।

4. कृ धातु का पाठ मूलतः भ्वादि गण में ही था। करोति आदि रूप भी लोक व्यवहार में प्रचलन में आ जाने के कारण उसे तनादि गण में रखा जाने लगा।

5. दयानन्द ने यजुर्वेद भाष्य में अध्याय तीन के मन्त्र 58 के भाष्य में लिखा है कि कृ धातु का पाठ भ्वादिगण में होने से शप् विकरण होता है तथा तनादि के साथ कृ का पाठ अष्टाध्यायी सूत्र तनादिकृञ्भ्यः उः (3-1-79) के अनुसार मानने से उ विकरण भी होता है।

6. इससे स्पष्ट है कि कृ धातु के करति आदि रूप पूर्णतः शुद्ध हैं। यही रूप सुगम होने से सरल संस्कृत व्याकरण में स्वीकार करने योग्य है।

3. मुख्य क्रिया

परिचय :- सहायक क्रिया तथा विशिष्ट क्रिया के अतिरिक्त सभी धातुओं से बने आख्यातिक रूप मुख्य क्रिया हैं।

वाक्य रचना :- विशिष्ट क्रिया अथवा सहायक क्रिया का उपयोग किये बिना पठ्, गम् आदि धातुओं में आख्यातिक विभक्ति लगाकर प्रयोग करते हैं।

उदाहरण :- देवः पठति। देव पढ़ता है।

वरुणः गच्छति। वरुण जाता है।

विशेष :- कृ तथा भू धातुओं का प्रयोग मुख्य क्रिया के रूप में भी हो सकता है।

4. सोपसर्ग क्रिया

परिचय :- जब आख्यात पदों या क्रियाओं को विशिष्ट अर्थ प्रदान करने के लिए उससे पूर्व उपसर्ग लगाकर प्रयोग करते हैं तो उसे सोपसर्ग क्रिया कहते हैं।

वाक्य रचना :- आख्यातिक अथवा क्रिया रूप से पूर्व उपसर्ग का प्रयोग करते हैं।

उदाहरण :- आ + गम् से आगमिष्यति।

प्रति + कृ से प्रतिकरोति अथवा प्रतिकरति।

इसी प्रकार अनुगच्छति, अनुहरति, प्रहरति, विहरति, अनुपठति, अनुवदति आदि आख्यातिक से पूर्व उपसर्ग लगाकर सोपसर्ग क्रिया रूप बन सकते हैं।

विशेष :- ध्यान रखें कि उपसर्ग का प्रयोग धातु से पूर्व नहीं होता है, आख्यातिक या क्रियारूप से पूर्व होता है। पठ् धातु के भूतकाल में उपसर्ग लगाना हो तो पहले उसका भूतकाल रूप अपठत् बनेगा और बाद में अपठत् से पूर्व उपसर्ग लगेगा। अर्थात् आख्यातिक रूप बनाने के बाद उपसर्ग लगायेंगे, उपसर्ग लगाने के बाद रूप बनाने के लिए विभक्ति प्रत्यय या उपसर्ग नहीं जोड़ेंगे।

इस नियम के अनुसार अनु + अपठत् को सन्धि कर अन्वपठत् लिखेंगे। प्रति + अगच्छत् को प्रत्यगच्छत् लिखा जायेगा। गच्छ धातु में प्रति उपसर्ग लगाकर प्रतिगच्छ् धातु मानना और उसका भूतकाल रूप अप्रतिगच्छत् लिखना अशुद्ध होगा।

ध्यातव्य :- यह महत्वपूर्ण नियम है, इसका सदैव ध्यान रखें।

5. प्रेरणार्थक क्रिया

परिचय :- जब क्रिया स्वयम् न करके किसी अन्य द्वारा करायी जाती है, तो प्रेरणार्थक कहलाती है।

वाक्य रचना :- मूल धातु में 'अय' जोड़कर फिर आख्यातिक विभक्ति का प्रयोग करते हैं।

उदाहरण :- सः गमयति। वह भिजवाता है।

गुरुः दर्शयति। गुरु जी दिखाते हैं।

6. पूर्वकालिक क्रिया

परिचय :- जब एक कार्य करके दूसरा कार्य किया जाता है, तब पहले किये गये कार्य में पूर्वकालिक क्रिया प्रत्यय लगता है।

वाक्य रचना :- पहले होने वाली क्रिया की धातु में त्वा, य, त्य आदि प्रत्यय लगाते हैं तथा बाद में होने वाली क्रिया में आख्यातिक विभक्ति प्रत्यय का प्रयोग करते हैं।

उदाहरण :- भोजनम् कृत्वा विद्यालयम् गच्छ।

भोजन करके विद्यालय जाओ।

राजा सिंहासनम् आरूह्य आदिशति।

राजा सिंहासन पर बैठकर आदेश करता है।

अत्र आगत्य वदतु।

यहाँ आकर बोलो।

विशेष

1. सामान्यतः मूल धातु में त्वा प्रत्यय लगता है।

2. सोपसर्ग धातु में य अथवा त्य प्रत्यय लगता है।

3. धातु से पूर्व न के अर्थ में अ उपसर्ग होने पर भी त्वा प्रत्यय ही लगता है, य अथवा त्य नहीं।

4. पूर्व कालिक प्रत्ययों के लगने पर धातुओं में कुछ परिवर्तन भी हो सकते हैं। अभ्यास से इसका बोध हो जायेगा।

7. सह क्रिया

परिचय :- जब दो क्रियायें एक साथ होती हैं तो उनको सह क्रिया कहते हैं। इसमें एक क्रिया लगातार हो रही होती है तथा उसी समय में दूसरी क्रिया भी होती है।

वाक्य रचना :- 1. जो क्रिया लगातार हो रही होती है, उसकी धातु के अन्त में पुल्लिंग में अन्, स्त्रीलिंग में अन्ती तथा नपुंसक लिंग में 'अत्' जोड़ा जाता है।

2. इस प्रकार कर्ता कारक, प्रथमा एक वचन रूप बनता है।

3. इससे स्पष्ट है कि सह क्रिया का प्रत्यय लगाने पर धातु से नाम शब्द बन जाता है।

4. मूल धातु में 'आन' या 'मान' जोड़कर भी इसी प्रकार नाम शब्द का प्रथमा एकवचन का रूप बन सकता है।

उदाहरण :- स गच्छन् वदति। वह जाते हुए बोलता है।

शयानः बालकः हसति। सोता हुआ बालक हँसता है।

ॐ

सरल आख्यात पद : क्रियारूप

आख्यात परिचय :- संस्कृत में क्रियाओं के रूप बनाने के लिए धातुओं में प्रत्यय जोड़े जाते हैं। इन प्रत्ययों को आख्यातिक विभक्ति तथा बनने वाले पदों को आख्यात पद या क्रियापद कहते हैं।

रचना :- क्रियाओं के रूप वचन, पुरुष, काल तथा विधान, आशीष आदि अवस्थाओं के अनुसार परिवर्तित होते हैं। इस प्रकार किसी भी काल या अवस्था में नौ आख्यातिक विभक्ति प्रत्यय होते हैं। उनको धातु के बाद जोड़कर क्रिया पद बना लेते हैं।

सरल काल परिवर्तन :- सरल संस्कृत व्याकरण में तीनों कालों वर्तमान, भूत तथा भविष्यत् काल में वाक्य रचना एक ही प्रकार के आख्यातिक प्रत्ययों से की जा सकती है। वर्तमान काल के आख्यातिक प्रत्ययों में सरलता से परिवर्तन कर भूतकाल तथा भविष्यत् काल बनाया जा सकता है।

अनिवार्य आख्यात पद या क्रिया रूप :- इस प्रकार सरल संस्कृत व्याकरण में तीनों कालों की सहायक क्रियायें, आख्यातिक प्रत्ययों का प्रयोग कर तीनों कालों में क्रियारूप बनाना, विधान वाक्य तथा अनुबन्ध वाक्य रचना के लिए विधान तथा अनुबन्ध आख्यातिक प्रत्यय सीखना आवश्यक तथा पर्याप्त भी है। इतना अभ्यास कर दैनिक जीवन में संस्कृत भाषा का प्रयोग किया जा सकता है।

1. वर्तमान काल

परिचय :- जो समय चल रहा है अर्थात् जिस समय हम बात कर रहे हैं, वह वर्तमान काल होता है।

पहचान : हिन्दी वाक्यों में है, हूँ, हो, हैं आदि रहते हैं।

वाक्य रचना :- संस्कृत क्रियाओं में धातु के साथ वचन, पुरुष के अनुसार

वर्तमान कालिक आख्यातिक विभक्ति प्रत्यय जुड़ते हैं।

उदाहरण :- छात्रः (पठ्+अति) पठति।

छात्र पढ़ता है।

वर्तमान आख्यातिक प्रत्यय

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
अन्य पुरुष	अति	अतः	अन्ति
मध्यम पुरुष	असि	अथः	अथ
उत्तम पुरुष	आमि	आवः	आमः

विशेष :- हिन्दी वाक्यों में लिखता है, लिख रहा है, आदि को संस्कृत में लिख् धातु में अति विभक्ति प्रत्यय जोड़कर व्यक्त कर सकते हैं :

लिख् + अति = लिखति।

इसी प्रकार खेलति का अर्थ खेलता है, खेल रहा है, आदि होता है।

वर्तमान काल : सहायक क्रियाएँ

हिन्दी सहायक क्रियाओं है, हो, हूँ, हैं के स्थान पर संस्कृत में भू = भव् (होना) धातु के रूप प्रयोग हो सकते हैं। ये रूप वर्तमान काल विभक्ति प्रत्यय जोड़कर सरलता से बनाये जा सकते हैं जैसे - भव् + अति = भवति आदि।

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
अन्य पुरुष	भवति	भवतः	भवन्ति
मध्यम पुरुष	भवसि	भवथः	भवथ
उत्तम पुरुष	भवामि	भवावः	भवामः

विशेष :- वर्तमान काल में अस्ति आदि सहायक क्रियायें भी होती हैं जो अस् धातु का लट् लकार रूप मानी जाती हैं। उनका विकल्प भू-भव् धातु के रूप हैं जो सरल हैं। अतः अस्ति आदि रूपों को हमने सरल आख्यात पद रचना में अनिवार्य नहीं माना है। उनको आगामी पाठ में रखा गया है।

2. भूतकाल

परिचय :- जो समय बीत चुका होता है, उसे भूतकाल कहते हैं।

पहचान :- हिन्दी में था, थी, थे वाक्य में अवश्य रहते हैं।

वाक्य रचना :- संस्कृत में भूतकाल बनाना बहुत ही सरल है। संस्कृत वाक्यों में वर्तमान काल की क्रिया के साथ स्म का प्रयोग कर भूतकाल बना सकते हैं।

उदाहरण :- दिनेशः सुलेखम् **लिखति**।

दिनेश सुलेख लिखता है।

इस वर्तमान काल वाक्य में क्रिया के साथ स्म जोड़ कर भूतकाल का वाक्य बनेगा

दिनेशः सुलेखम् **लिखति स्म**।

दिनेश ने सुलेख लिखा अथवा दिनेश सुलेख लिखता था।

इस प्रकार सरलता से वर्तमान काल के वाक्य से ही भूतकाल वाक्य बन जायेगा।

भूतकाल : सहायक क्रियाएँ

हिन्दी सहायक क्रियाओं था, थी, थे के स्थान पर संस्कृत में भू (भव्) धातु के भूतकाल रूपों भवति स्म आदि का प्रयोग कर सकते हैं।

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
अन्य पुरुष	भवति स्म	भवतः स्म	भवन्ति स्म
मध्यम पुरुष	भवसि स्म	भवथः स्म	भवथ स्म
उत्तम पुरुष	भवामि स्म	भवावः स्म	भवामः स्म

विशेष :- भूतकाल में अस् धातु से अस्ति, आसीत् आदि सहायक क्रियायें बनती हैं। उन्हें हम आगामी पाठ में प्रस्तुत करेंगे।

3. भविष्यत् काल

परिचय :- बाद में आने वाले समय को भविष्यत् काल कहते हैं।

पहचान :- हिन्दी वाक्यों में गा, गी, गे का प्रयोग होता है।

वाक्य रचना :- संस्कृत क्रियाओं में धातु तथा वर्तमान काल के आख्यातिक विभक्ति प्रत्यय के बीच में इष्य् जोड़ा जाता है।

विशेष :- कुछ धातुओं के साथ इन प्रत्ययों को जोड़ने पर इ का लोप भी हो सकता है।

उदाहरण :- सः लिखिष्यति। वह लिखेगा।

(लिख् + इष्य् + अति = लिखिष्यति)

सः विद्यालयम् गमिष्यति।

वह विद्यालय जायेगा।

त्वम् पुस्तकम् पठिष्यसि।

तुम पुस्तक पढ़ोगे।

भविष्यत् काल : सहायक क्रियाएँ

हिन्दी सहायक क्रियाओं होगा, होगी, होंगे, हूँगा, बनेगा, बनेगी, बनोगे, बनूँगा, बनेंगे के स्थान पर भू (भव्) धातु के भविष्यत् काल के रूपों का ही प्रयोग होता है।

उदाहरण :- भव् + इष्य् + अति = भविष्यति (होगा, होगी, रहेगा, रहेगी, बनेगा, बनेगी) आदि।

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
अन्य पुरुष	भविष्यति	भविष्यतः	भविष्यन्ति
मध्यम पुरुष	भविष्यसि	भविष्यथः	भविष्यथ
उत्तम पुरुष	भविष्यामि	भविष्यावः	भविष्यामः

विशेष :- वर्तमान तथा भूतकाल में अस् धातु से बनने वाली सहायक क्रियाओं अस्ति, आसीत् आदि के समान भविष्यत् काल में सहायक क्रियायें नहीं होती हैं। भविष्यत् काल में भू-भव् धातु से बनने वाली सहायक क्रियायें ही प्रयोग होती हैं।

4. विधान वाक्य

परिचय :- इन वाक्यों में किसी के लिए आज्ञा, निर्देश, आशीष, शुभकामना, प्रार्थना आदि व्यक्त होते हैं।

पहचान :- हिन्दी वाक्यों में चाहिए तथा क्रियाओं के अन्त में ओ, ए, एं आदि आते हैं।

वाक्य रचना :- संस्कृत वाक्यों में इसके लिए विधान आख्यातिक विभक्ति प्रत्यय (लोट् लकार) का प्रयोग करते हैं।

उदाहरण :- सः पुस्तकम् पठतु।

वह पुस्तक पढ़े।

विधान आख्यातिक प्रत्यय

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
अन्य पुरुष	अतु	अताम्	अन्तु
मध्यम पुरुष	अ	अतम्	अत
उत्तम पुरुष	आनि	आव	आम

5. अनुबन्ध (हेतु-हेतुमद्) भूत काल

परिचय :- अनुबन्ध भूतकाल में दो क्रियाएं परस्पर अनुबन्ध की स्थिति में होती हैं, अर्थात् एक क्रिया के होने पर ही दूसरी क्रिया होने का बोध होता है। हम कह सकते हैं कि एक क्रिया दूसरी क्रिया के हेतु या कारण के रूप में होती है तो अनुबन्ध या हेतु-हेतुमद् भूत काल होता है।

पहचान :- अनुबन्ध भूतकाल के हिन्दी वाक्यों में यदि..... तो आदि का प्रयोग होता है।

वाक्य रचना :- संस्कृत वाक्यों में अनुबन्ध भूत विभक्ति प्रत्ययों (लृङ् लकार) का प्रयोग करते हैं।

उदाहरण :- यदि सः अपठिष्यत् तर्हि सफलताम् अगमिष्यत्।

यदि वह पढ़ता तो सफलता पाता या सफल हो जाता।

विशेष :- 1. मुख्य धातु के पूर्व 'अ' उपसर्ग जोड़कर तब धातु में अनुबन्ध भूत आख्यातिक विभक्ति प्रत्ययों का प्रयोग करते हैं।

2. कुछ धातुओं के साथ इन प्रत्ययों को जोड़ने पर भविष्यत् काल के समान इ का लोप भी हो सकता है।

अनुबन्ध (हेतु-हेतुमद्) भूत विभक्ति प्रत्यय

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
अन्य पुरुष	इष्यत्	इष्यताम्	इष्यन्
मध्यम पुरुष	इष्यः	इष्यतम्	इष्यत
उत्तम पुरुष	इष्यम्	इष्याव	इष्याम

अनुबन्ध सहायक क्रियाएं

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
अन्य पुरुष	अभविष्यत्	अभविष्यतम्	अभविष्यन्
मध्यम पुरुष	अभविष्यः	अभविष्यतम्	अभविष्यत
उत्तम पुरुष	अभविष्यम्	अभविष्याव	अभविष्याम

विशेष

अनुबन्ध सहायक क्रियाओं के रूप में भू-भव् धातु के रूप दिये गये हैं। इसी प्रकार अन्य धातुओं के अनुबन्ध क्रियारूप भी बनाये जा सकतें हैं।

उदाहरणस्वरूप पठ् धातु के अनुबन्ध क्रियारूप बनाते हैं :-

अ+ पठ् + इष्यत् = अपठिष्यत्

अ+ पठ् + इष्यताम् = अपठिष्यताम्

अ+ पठ् + इष्यन् = अपठिष्यन्

अ+ पठ् + इष्यः = अपठिष्यः

अ+ पठ् + इष्यतम् = अपठिष्यतम्

अ+ पठ् + इष्यत = अपठिष्यत

अ+ पठ् + इष्यम् = अपठिष्याम्

अ+ पठ् + इष्याव = अपठिष्याव

अ+ पठ् + इष्याम = अपठिष्याम

ध्यातव्य :- परम्परागत व्याकरण में धातुओं के रूप गणों के अनुसार चलते हैं जिससे आख्यातिक विभक्ति प्रत्ययों से पहले एक और प्रत्यय लगता है जिसे विकरण प्रत्यय कहते हैं। अति में अ तथा इष्यति में इ वास्तव में विकरण प्रत्यय ही है जो सामान्यतः लगते ही हैं। यदा-कदा इनका लोप हो सकता है तथा इनमें परिवर्तन भी हो जाता है। इनका लोप या परिवर्तन बहुधा वैकल्पिक माने गये हैं।

परम्परागत व्याकरण में कठि-कण्ठ धातु के वर्तमान (लट्) अन्य पुरुष एक वचन में कण्ठति, कण्ठते, कण्ठयति, कण्ठयते चार विकल्प स्वीकार्य हैं। यह उदाहरण मात्र है, इस तरह विकल्प बहुशः मान्य हैं। परम्परागत व्याकरण की शब्दावली में कह सकते हैं कि अनेक धातुयें धातुपाठ में अनेक स्थानों पर पठित हैं, अतः उनके रूप विभिन्न प्रकार से चलते हैं। सरल संस्कृत व्याकरण में इसे सर्वत्र विकल्प माना जाता है। कण्ठयति, कण्ठयते जैसे य विकरण वाले रूप प्रेरणार्थक क्रिया में प्रयोग होते हैं, अतः इनका प्रयोग सामान्य क्रिया के स्थान पर प्रेरणार्थक क्रिया में ही करना उचित है। सामान्य क्रिया में इनका प्रयोग करने पर अर्थ अस्पष्ट हो सकता है।

ॐ

अष्टादश आख्यातिक विभक्ति

तीनों कालों में साधारण संस्कृत वाक्य सहायक क्रियाओं तथा वर्तमान काल के आख्यातिक विभक्ति प्रत्ययों का प्रयोग कर बनाये जा सकते हैं। इनके अतिरिक्त कुछ विशेष प्रकार के वाक्यों के लिए विधान वाक्य तथा हेतुहेतुमद्भूत या अनुबन्ध भूत वाक्यों का प्रयोग जानना पर्याप्त है। परन्तु **आधुनिक आवश्यकताओं के अनुकूल संस्कृत भाषा में विशेष प्रकार के वाक्य बनाने के लिए हम अष्टादश आख्यातिक विभक्तियों के प्रयोग** प्रस्तुत कर रहे हैं। आवश्यकता के अनुसार इनका प्रयोग कर सकते हैं।

संस्कृत में अष्टादश आख्यातिक प्रयोग बहुत उपयोगी तथा रोचक सिद्ध हुआ है। हम अष्टादश आख्यातिक प्रयोग की सीमा भी नहीं बांधना चाहते हैं। इसी प्रकार आख्यातिक विभक्तियों तथा उपयोगी प्रत्ययों का प्रयोग कर अन्य प्रकार के वाक्य भी बनाये जा सकते हैं और बनाये जाने भी चाहिए।

अष्टादश आख्यातिक विभक्ति

1. सामान्य वर्तमान काल
2. स्वभाव वर्तमान काल
3. सतत वर्तमान काल
4. पूर्ण वर्तमान काल
5. विधान वाक्य
6. निर्देश वर्तमान काल
7. सामान्य भूत काल
8. विशेष भूत काल
9. स्वभाव भूत काल
10. सतत भूत काल
11. पूर्ण भूत काल
12. अनुबन्ध (हेतुहेतुमद्) भूत काल

13. निर्देश भूत काल
14. सामान्य भविष्यत् काल
15. स्वभाव भविष्यत् काल
16. सतत भविष्यत् काल
17. पूर्ण भविष्यत् काल
18. आशीष वाक्य

1. सामान्य वर्तमान काल

परिचय :- सामान्य वर्तमान काल के वाक्यों में अस्तित्व की सूचना मात्र मिलती है। इन वाक्यों में उपस्थिति के अतिरिक्त किसी क्रिया या कार्य के होने का बोध नहीं होता है।

पहचान :- हिन्दी वाक्यों में सहायक क्रियाओं है, हैं, हूँ, हो आदि का प्रयोग होता है।

वाक्य रचना :- संस्कृत वाक्यों में आख्यातिक या क्रियापद के रूप में केवल सहायक क्रियाओं का प्रयोग करते हैं।

उदाहरण :- सः सुन्दरः बालकः अस्ति।

वह सुन्दर बालक है।

वर्तमान कालिक सहायक क्रियाएँ

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
अन्य पुरुष	अस्ति	स्तः	सन्ति
मध्यम पुरुष	असि	स्थः	स्थ
उत्तम पुरुष	अस्मि	स्वः	स्मः

विशेष :- सहायक क्रियाओं के स्थान पर भू = भव् (होना) धातु के रूप भी प्रयोग हो सकते हैं। ये रूप वर्तमान काल विभक्ति प्रत्यय जोड़कर सरलता से बनाये जा सकते हैं।

उदाहरण :- भव् + अति = भवति आदि।

ध्यातव्य :- संस्कृत व्याकरण में अस्ति आदि सहायक क्रियाओं को अस् धातु का रूप माना जाता है तथा अस् तथा भू (भव्) धातुओं को समानार्थी

मानते हैं। अस् तथा भू का अर्थ 'होना' ही है। अस्ति आदि सहायक क्रियाओं के स्थान पर भवति आदि भू (भव्) धातु के रूपों का प्रयोग भी संस्कृत साहित्य में होता रहा है। यह व्याकरण के अनुसार शुद्ध है।

2. स्वभाव वर्तमान काल

परिचय :- स्वभाव वर्तमान काल के वाक्यों में क्रिया के स्वभाव के रूप में नियमित रूप से होते रहने का बोध होता है।

पहचान :- हिन्दी वाक्यों में ता है, ती है, ते हैं, ते हो, ता हूँ आदि का प्रयोग होता है।

वाक्य रचना :- इस प्रकार के वाक्यों में स्वभाव आख्यातिक वर्तमान काल के विभक्ति प्रत्ययों (लट् लकार) का प्रयोग करते हैं।

उदाहरण :- सः विद्यालयम् गच्छति।

वह विद्यालय जाता है।

स्वभाव आख्यातिक वर्तमान प्रत्यय

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
अन्य पुरुष	अति	अतः	अन्ति
मध्यम पुरुष	असि	अथः	अथ
उत्तम पुरुष	आमि	आवः	आमः

3. सतत वर्तमान काल

परिचय :- सतत वर्तमान काल से क्रिया के लगातार होते रहने का बोध होता है।

पहचान :- सतत वर्तमान काल के हिन्दी वाक्यों में रहा है, रही है, रहे हैं, ता हुआ, ती हुई, ते हुए आदि आते हैं।

वाक्य रचना :- इसके लिए संस्कृत वाक्यों में सतत बोधक प्रत्यय के साथ वर्तमान कालिक सहायक क्रियाओं का प्रयोग करते हैं।

उदाहरण :- सः पठन् अस्ति।

वह पढ़ रहा है।

सतत वर्तमान प्रत्यय

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
पुल्लिंग	अन्	अन्तौ	अन्तः
स्त्रीलिंग	अन्ती	अन्त्यौ	अन्त्यः
उभयलिंग	अत्	अती	अन्ति

अथवा

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
पुल्लिंग	आनः	आनौ	आनाः
स्त्रीलिंग	आना	आने	आनाः
उभयलिंग	आनम्	आने	आनि

अथवा

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
पुल्लिंग	मानः	मानौ	मानाः
स्त्रीलिंग	माना	माने	मानाः
उभयलिंग	मानम्	माने	मानि

विशेष

1 :- धातु में सतत बोधक प्रत्यय लगाने के बाद बना रूप वास्तव में विशेषण होता है, अतः इनके रूप नाम शब्दों के समान नामिक विभक्ति लगाकर बनते हैं।

2. सतत बोधक प्रत्यय तीनों लिंगों में पृथक् होते हैं।

3. नाम शब्द होने से इन पर पुरुष का प्रभाव नहीं पड़ता है, अर्थात् तीनों पुरुषों में एक समान रूप होते हैं।

4. परस्मैपदी धातुओं में अन् आदि तथा आत्मनेपदी धातुओं में आनः आदि प्रत्यय जोड़ने की परम्परा है।आनः के स्थान पर मानः आदि रूप भी होते हैं।

5. अन्, आन, मान के अर्थ समान हैं, अतः सरल संस्कृत व्याकरण में विकल्प के रूप में सभी धातुओं के साथ अन्, आन या मान आदि प्रत्यय जोड़कर प्रयोग कर सकते हैं।

4. पूर्ण वर्तमान काल

परिचय :- पूर्ण वर्तमान काल से क्रिया के पूर्ण हो जाने का बोध होता है।

पहचान :- पूर्ण वर्तमान काल के हिन्दी वाक्यों में चुका है, चुकी है, चुके हैं, लिया है आदि आते हैं।

वाक्य रचना :- संस्कृत क्रियाओं में मुख्य क्रिया की धातु में पूर्ण बोधक प्रत्यय तः, तवत्, तवान् आदि जोड़कर वर्तमान कालिक सहायक क्रियाओं का प्रयोग करते हैं।

उदाहरण :- छात्रः विद्यालयं गतः अस्ति, गतवान् अस्ति वा।

छात्र विद्यालय चला गया है या जा चुका है।

पूर्ण लकार प्रत्यय

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
पुल्लिंग	तः	तौ	ताः
स्त्रीलिंग	ता	ते	ताः
उभयलिंग	तम्	ते	तानि

अथवा

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
पुल्लिंग	तवान्	तवन्तौ	तवन्तः
स्त्रीलिंग	तवती	तवत्यौ	तवत्यः
उभय लिंग	तवत्	तवती	तवन्ति

विशेष

1 :- धातु में पूर्ण बोधक तवान् आदि प्रत्ययों का प्रयोग कर्तृ वाच्य में कर सकते हैं।

2 :- इसी तरह तः आदि प्रत्ययों का प्रयोग सामान्यतः कर्म वाच्य तथा भाव वाच्य में करने की परम्परा है।

3 :- परम्परा के अनुसार तः आदि प्रत्ययों का प्रयोग अकर्मक धातुओं और गति अर्थ वाली धातुओं में कर्तृ वाच्य में भी कर सकते हैं।

4 :- परम्परा के अनुसार भी इन पूर्ण बोधक प्रत्ययों तः आदि तथा तवान् आदि का प्रयोग समझना सरल है, अतः पालन कर सकते हैं।

5 :- सरल संस्कृत में विकल्प रूप में तः अथवा तवान् आदि का प्रयोग सुविधा के अनुसार सर्वत्र कर सकते हैं।

5 :- परम्परागत संस्कृत व्याकरण में तः, तवान् आदि को भूतकालिक प्रत्यय माना गया है। कार्य पूर्ण हो जाना उसके भूतकाल में होने का सूचक है, अतः यह मान्यता भी उचित ही है।

5. विधान वाक्य

परिचय :- इन वाक्यों में किसी के लिए आज्ञा, अनुमति, विधि, निर्देश, आशीष, शुभकामना, प्रार्थना आदि व्यक्त होते हैं।

पहचान :- हिन्दी वाक्यों में चाहिए तथा क्रियाओं के अन्त में ओ, ए, एं आदि आते हैं।

वाक्य रचना :- संस्कृत वाक्यों में इसके लिए विधान आख्यातिक विभक्ति प्रत्यय (लोट्‌ लकार) का प्रयोग करते हैं।

उदाहरण :- सः पुस्तकम् पठतु। वह पुस्तक पढ़े।

विधान आख्यातिक प्रत्यय

	एकवचन	**द्विवचन**	**बहुवचन**
अन्य पुरुष	अतु	अताम्	अन्तु
मध्यम पुरुष	अ	अतम्	अत
उत्तम पुरुष	आनि	आव	आम

6. विधि वर्तमान काल

परिचय :- विधि वर्तमान काल से क्रिया के विधित्व अर्थात् औचित्य का बोध होता है।

पहचान :- हिन्दी वाक्यों में चाहिए का प्रयोग होता है।

वाक्य रचना :- संस्कृत वाक्यों में विधि आख्यातिक विभक्ति प्रत्ययों

(विधिलिङ् लकार) का प्रयोग करते हैं।

उदाहरण :– सः विद्यालयम् गच्छेत्। उसे विद्यालय जाना चाहिये।

विधि आख्यातिक विभक्ति प्रत्यय

	एकवचन	**द्विवचन**	**बहुवचन**
अन्य पुरुष	एत्	एताम्	एयुः
मध्यम पुरुष	एः	एतम्	एत
उत्तम पुरुष	एयम्	एव	एम

विशेष :- विधि आख्यातिक विभक्ति प्रत्ययों के स्थान पर विधान वाक्यों के समान विधान आख्यातिक विभक्ति प्रत्ययों का भी प्रयोग कर सकते हैं। परम्परागत व्याकरण में भी यह मान्य है।

7. सामान्य भूत काल

परिचय :- सामान्य भूत काल से भूतकाल अर्थात् बीते हुए समय में अस्तित्व की सूचना मात्र मिलती है। इन वाक्यों में उपस्थिति के अतिरिक्त किसी कार्य के होने का बोध नहीं होता है।

पहचान :- सामान्य भूतकाल के हिन्दी वाक्यों में था, थी, थे आदि सहायक क्रियाओं का प्रयोग होता है।

वाक्य रचना :- संस्कृत वाक्यों में भूतकालिक सहायक क्रिया का प्रयोग किया जाता है।

उदाहरण :- सः सुन्दरः बालकः आसीत्। वह सुन्दर बालक था।

भूतकालिक सहायक क्रियाएँ

	एकवचन	**द्विवचन**	**बहुवचन**
अन्य पुरुष	आसीत्	आस्ताम्	आसन्
मध्यम पुरुष	आसीः	आस्तम्	आस्त
उत्तम पुरुष	आसम्	आस्व	आस्म

विशेष :- भूत काल सहायक क्रिया के रूप में भू धातु के रूप भी प्रयोग करते हैं।

8. विशेष भूत काल

परिचय :- विशेष भूतकाल से क्रिया के भूतकाल अर्थात् बीते हुए समय में होने का बोध होता है।

पहचान :- विशेष भूतकाल के हिन्दी वाक्यों में क्रिया के अन्त में आ, ई, यी, ए, ये आदि रहते हैं।

वाक्य रचना :- संस्कृत वाक्यों में विशेष भूत आख्यातिक विभक्ति प्रत्ययों (लङ् लकार) का प्रयोग करते हैं।

उदाहरण :- वह विद्यालय गया। सः विद्यालयम् अगच्छत्।

विशेष भूत आख्यातिक विभक्ति प्रत्यय

	एकवचन	**द्विवचन**	**बहुवचन**
अन्य पुरुष	अत्	अताम्	अन्
मध्यम पुरुष	अः	अतम्	अत
उत्तम पुरुष	आम्	आव	आम

विशेष :- विशेष भूत काल में धातु से पूर्व 'अ' उपसर्ग जोड़कर विभक्ति प्रत्यय लगाते हैं।

9. स्वभाव भूत काल

परिचय :- स्वभाव भूत काल के वाक्यों में क्रिया के स्वभाव के रूप में नियमित रूप से भूत काल में होते रहने का बोध होता है।

पहचान :- स्वभाव भूत काल के हिन्दी वाक्यों में क्रिया के अन्त में ता था, ती थी, ते थे आदि रहते हैं।

वाक्य रचना :- संस्कृत वाक्यों में स्वभाव वर्तमान काल आख्यातिक विभक्ति प्रत्यय (लट् लकार) के पश्चात् सहायक क्रिया 'स्म' का प्रयोग सभी पुरुषों तथा वचनों में करते हैं।

उदाहरण :- सः पुस्तकम् पठति स्म।

वह पुस्तक पढ़ता था।

10. सतत भूत काल

परिचय :- सतत भूत काल से क्रिया के भूतकाल में लगातार होते रहने का बोध होता है।

पहचान :- सतत भूत काल के हिन्दी वाक्यों में क्रिया के अन्त में रहा था, रही थी, रहे थे, आदि आते हैं।

वाक्य रचना :- संस्कृत वाक्यों में सतत वर्तमान काल के अन् (शतृ), आन, मान आदि प्रत्ययों के साथ भूतकालिक सहायक क्रिया प्रयोग करते हैं।

उदाहरण :- सः विद्यालयम् गच्छन् आसीत्।

वह विद्यालय जा रहा था।

11. पूर्ण भूत काल

परिचय :- पूर्ण भूत काल से क्रिया के भूतकाल में पूर्ण हो चुके होने का बोध होता है।

पहचान :- पूर्ण भूत काल के हिन्दी वाक्यों में चुका था, चुकी थी, चुके थे, लिया था आदि आते हैं।

वाक्य रचना :- संस्कृत क्रियाओं में मुख्य क्रिया की धातु में पूर्ण वर्तमान काल के तः, तवत्, तवान् आदि प्रत्ययों को जोड़कर भूत कालिक सहायक क्रियाओं का प्रयोग करते हैं।

उदाहरण :- सः विद्यालयम् गतः आसीत्।

वह विद्यालय चला गया था अथवा जा चुका था।

विशेष :- पूर्ण भूत काल में स्वभाव भूत काल के स्म सहायक क्रिया का प्रयोग नहीं कर सकते हैं। स्म का प्रयोग आख्यातिक पद के पश्चात् ही किया जा सकता है। तः, तवत्, तवान् आदि प्रत्यय आख्यातिक विभक्ति प्रत्यय नहीं हैं। इनसे बने पद नाम पद होते हैं तथा वाक्य में विशेषण का कार्य करते हैं। वाक्य में आख्यातिक पद होना आवश्यक है, अतः आसीत् आदि का प्रयोग करते हैं।

12. अनुबन्ध (हेतु-हेतुमद्) भूत काल

परिचय :- अनुबन्ध भूतकाल में दो क्रियाएं परस्पर अनुबन्ध की स्थिति में होती हैं, अर्थात् एक क्रिया के होने पर ही दूसरी क्रिया होने का बोध होता है। हम कह सकते हैं कि एक क्रिया दूसरी क्रिया के हेतु या कारण के रूप में होती है तो अनुबन्ध या हेतु-हेतुमद् भूत काल होता है।

पहचान :- अनुबन्ध भूतकाल के वाक्यों में यदि..... तो आदि का प्रयोग होता है।

वाक्य रचना :- संस्कृत वाक्यों में अनुबन्ध भूत विभक्ति प्रत्ययों (लृङ् लकार) का प्रयोग करते हैं।

उदाहरण :- यदि सः अपठिष्यत् तर्हि सफलताम् अगमिष्यत्।

यदि वह पढ़ता तो सफलता पाता या सफल हो जाता।

अनुबन्ध (हेतु-हेतुमद्) भूत विभक्ति प्रत्यय

	एकवचन	**द्विवचन**	**बहुवचन**
अन्य पुरुष	इष्यत्	इष्यताम्	इष्यन्
मध्यम पुरुष	इष्यः	इष्यतम्	इष्यत
उत्तम पुरुष	इष्यम्	इष्याव	इष्याम

विशेष

1. मुख्य धातु के पूर्व 'अ' उपसर्ग जोड़कर तब धातु में अनुबन्ध भूत आख्यातिक प्रत्ययों का प्रयोग करते हैं।

2. कुछ धातुओं के साथ इन प्रत्ययों को जोड़ने पर इ का लोप भी हो सकता है।

3. उपसर्ग का प्रयोग आख्यातिक पद के बाद ही करते हैं, धातु से पूर्व कभी नहीं किया जाता है।

13. निर्देश भूत काल

पहचान :- निर्देश भूत काल के हिन्दी वाक्यों में चाहिए था रहता है।

वाक्य रचना :- संस्कृत वाक्यों में निर्देश आख्यातिक विभक्ति प्रत्ययों

(विधिलिङ् लकार) के साथ भूतकाल की विशेष सहायक क्रिया 'स्म' का प्रयोग करते हैं।

उदाहरण :- सः गच्छेत् स्म। उसे जाना चाहिए था।

14. सामान्य भविष्यत् काल

परिचय :- सामान्य भविष्यत् काल से भविष्यत् काल में अस्तित्व की सूचना मात्र मिलती है। इन वाक्यों में उपस्थिति के अतिरिक्त किसी कार्य के होने का बोध नहीं होता है।

पहचान :- सामान्य भविष्यत् काल के वाक्यों में होगा, होगी, होगे, हूँगा, होंगे सहायक क्रियाओं का प्रयोग होता है।

वाक्य रचना :- संस्कृत वाक्यों में भविष्यत् कालिक सहायक क्रियाओं का प्रयोग करते हैं।

उदाहरण :- सः राजा भविष्यति। वह राजा होगा।

भविष्यत् कालिक सहायक क्रियाएँ

	एकवचन	**द्विवचन**	**बहुवचन**
अन्य पुरुष	भविष्यति	भविष्यतः	भविष्यन्ति
मध्यम पुरुष	भविष्यसि	भविष्यथः	भविष्यथ
उत्तम पुरुष	भविष्यामि	भविष्यावः	भविष्यामः

15. विशेष भविष्यत् काल

परिचय :- विशेष भविष्यत् काल से क्रिया के भविष्यत् काल में होने का बोध होता है।

पहचान :- विशेष भविष्यत् काल के हिन्दी वाक्यों में मुख्य क्रिया में गा, गी, गे आदि होते हैं।

वाक्य रचना :- संस्कृत वाक्यों में धातु में इष्य् जोड़कर स्वभाव वर्तमान आख्यातिक विभक्ति प्रत्ययों (लट् लकार) का प्रयोग करते हैं।

उदाहरण :- सः (पठ् + इष्य् + अति) पठिष्यति। वह पढ़ेगा।

विशेष :- कुछ धातुओं में इष्य् के इ का लोप होकर उसके स्थान पर

स्य्/ष्य् ही जुड़ता है।

16. सतत भविष्यत् काल

परिचय :- सतत भविष्यत् काल से क्रिया के भविष्यत् काल में लगातार होते रहने का बोध होता है।

पहचान :- सतत भविष्यत् काल के हिन्दी वाक्यों में क्रिया के अन्त में रहा होगा, रही होगी, रहे होगे, रहे होंगे, ता हुआ होगा, ती हुई होगी, ते हुए होगे, ते हुए होंगे आदि आते हैं।

वाक्य रचना :- संस्कृत वाक्यों में इसके लिए सतत बोधक अन् (शतृ), आन, मान आदि प्रत्ययों के साथ भविष्यत् काल की सहायक क्रियाओं का प्रयोग करते हैं।

उदाहरण :- सः गच्छन् भविष्यति। वह जा रहा होगा।

17. पूर्ण भविष्यत् काल

परिचय :- पूर्ण भविष्यत् काल से क्रिया के भविष्यत् काल में पूर्ण होने का बोध होता है।

पहचान :- पूर्ण भविष्यत् काल के हिन्दी वाक्यों में चुका होगा, चुकी होगी, चुके होगे, चुके होंगे, लिया होगा, लिये होंगे आदि आते हैं।

वाक्य रचना :- संस्कृत वाक्यों में क्रियाओं में मुख्य क्रिया की धातु में तः, तवत्, तवान् आदि प्रत्ययों को जोड़कर भविष्यत् कालिक सहायक क्रियाओं का प्रयोग करते हैं।

उदाहरण :- सः गतः भविष्यति। वह जा चुका होगा।

18. आशीष वाक्य

परिचय :- आशीष वाक्यों से आशीर्वाद, शुभकामना आदि व्यक्त किया जाता है।

पहचान :- हिन्दी में आशीष वाक्यों में ओ, ए, एँ आदि क्रिया के साथ प्रयोग होते हैं।

वाक्य रचना :- संस्कृत वाक्यों में इसके लिए धातु के साथ आशीष आख्यातिक विभक्ति प्रत्ययों (आशीर्लिङ् लकार) का प्रयोग करते हैं।

उदाहरण :- सः सुखी भूयात्। वह सुखी हो।

विशेष :- आशीष वाक्यों के लिए भी विधान वाक्यों के समान विधान आख्यातिक विभक्ति प्रत्ययों का प्रयोग कर सकते हैं।

आशीष आख्यातिक विभक्ति प्रत्यय

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
अन्य पुरुष	यात्	यास्ताम्	यासुः
मध्यम पुरुष	याः	यास्तम्	यास्त
उत्तम पुरुष	यासम्	यास्व	यास्म

अष्टादश आख्यातरूप

वर्तमान काल

1. सामान्य वर्तमान काल

सः बालकः अस्ति।

वह बालक है।

2. स्वभाव वर्तमान काल

सः पुस्तकम् पठति।

वह पुस्तक पढ़ता है।

3. सतत वर्तमान काल

सः पुस्तकम् पठन् अस्ति।

वह पुस्तक पढ़ रहा है।

4. पूर्ण वर्तमान काल

सः पुस्तकम् पठितवान् अस्ति।

वह पुस्तक पढ़ चुका है अथवा उसने पुस्तक को पढ़ लिया है।

5. विधान वाक्य

सः पुस्तकम् पठतु।

वह पुस्तक पढ़े।

6. निर्देश वर्तमान काल

सः पुस्तकम् पठेत्।

उसे पुस्तक पढ़नी चाहिये।

भूत काल

7. सामान्य भूत काल

सः राजा आसीत्।

वह राजा था।

8. विशेष भूत काल

सः पुस्तकम् अपठत्।

उसने पुस्तक पढ़ी।

9. स्वभाव भूत काल

सः पुस्तकम् पठति स्म।

वह पुस्तक पढ़ता था।

10. सतत भूत काल

सः पुस्तकम् पठन् आसीत्।

वह पुस्तक पढ़ रहा था।

11. पूर्ण भूत काल

सः पुस्तकम् पठितवान् आसीत्।

उसने पुस्तक पढ़ ली थी अथवा वह पुस्तक पढ़ चुका था।

12. अनुबन्ध (हेतुहेतुमद्) भूत

यदि सः अपठिष्यत् तर्हि सफलं अभविष्यत्।

यदि वह पढ़ता तो सफल होता।

13. निर्देश भूत काल

सः पुस्तकम् पठेत् स्म।

उसे पुस्तक पढ़ना चाहिये था।

भविष्यत् काल

14. सामान्य भविष्यत् काल

सः राजा भविष्यति।

वह राजा होगा।

15. स्वभाव भविष्यत् काल

सः पुस्तकम् पठिष्यति।

वह पुस्तक पढ़ेगा।

16. सतत भविष्यत् काल

सः पुस्तकम् पठन् भविष्यति।

वह पुस्तक पढ़ रहा होगा।

17. पूर्ण भविष्यत् काल

सः पुस्तकम् पठितवान् भविष्यति।

वह पुस्तक पढ़ चुका होगा।

18. आशीष वाक्य

सः राजा भूयात्।

वह राजा बन जाये।

ॐ

आख्यातिक विवरण

प्राचीन लकार

1. **लट्** (वर्तमान)
2. **लृट्** (भविष्य)
3. **लुट्** (अनद्यतन भविष्य)
4. **लोट्** (विधान)
5. **लेट्** (चाहिये)
6. **विधिलिङ्** (चाहिये)
7. **आशीर्लिङ्** (आशीर्वाद)
8. **लङ्** (भूत)
9. **लिट्** (परोक्ष भूत)
10. **लुङ्** (सामान्य भूत)
11. **लृङ्** (अनुबन्ध)

वैकल्पिक लकार

लिट् (परोक्ष भूत) – लट् + स्म
लुट्, (अनद्यतन भविष्य) - इष्य् + लट्
लेट्, (चाहिये) - विधिलिङ्, लोट्
लृट्, (भविष्य) - इष्य् + लट्
लङ्, (भूत) - लट् + स्म अथवा इष्य् हटाकर लृङ्
विधिलिङ्, (चाहिये) - लोट्
आशीर्लिङ्, (आशीर्वाद) - लोट्
लुङ् (सामान्य भूत) - लट् + स्म

सरल संस्कृत में वैकल्पिक लकार प्रयोग

लिट् (परोक्ष भूत) – त्याज्य प्राचीन प्रयोग
लुट्, (अनद्यतन भविष्य) - त्याज्य प्राचीन प्रयोग
लेट्, (चाहिए) - त्याज्य प्राचीन प्रयोग (केवल वेद में प्रयोग)
लृट्, (भविष्य) - इष्य् + लट् के रूप में प्रयोग
लङ्, (भूत) - लट् + स्म अथवा इष्य् हटाकर लृङ् के रूप में
विधिलिङ्, (चाहिये) - विकल्प में लोट्
आशीर्लिङ्, (आशीर्वाद) - विकल्प में लोट्
लुङ् (सामान्य भूत) - त्याज्य प्राचीन प्रयोग

विशेष

1 :- सरल संस्कृत व्याकरण में लट्, लृट्, लोट्, लङ्, लृङ्, विधिलिङ्, आशीर्लिङ् का प्रयोग हुआ है।

2 :- सरल संस्कृत व्याकरण में लिट्, लुट्, लेट्, लुङ् प्रयोग नहीं किया गया है।

3 :- लेट् का प्रयोग वेद में है, लौकिक संस्कृत में नहीं।

मूल लकार

लट् (सामान्य या वर्तमान) – सरल संस्कृत व्याकरण में वर्तमान, भूत, भविष्यत् तीनों कालों के क्रियारूप इसी से बन सकते हैं।

लोट् (विधान) - विधि, आज्ञा, प्रार्थना, आमन्त्रण, निमन्त्रण, आशीर्वाद आदि की क्रियायें इससे बन सकती हैं।

लृङ् (अनुबन्ध) - एक क्रिया के होने में दूसरी क्रिया होने का अनुबन्ध या प्रतिबन्ध जैसी स्थिति में क्रियायें इससे बन सकती हैं।

विशेष :- अन्य क्रियारूपों के लिए प्रत्यय विधान हैं, पृथक् आख्यातिक विभक्तियों की आवश्यकता नहीं होती है।

प्राचीन धातुगण

1. भ्वादि (भू—भव्)
2. अदादि (अद्)
3. जुहोत्यादि (हु-जुहू)
4. दिवादि (दिव्)
5. स्वादि (सु)
6. तुदादि (तुद्)
7. रुधादि (रुध्)
8. तनादि (तन्)
9. क्रयादि (क्री)
10. चुरादि (चुर्)
11. कण्ड्वादि (कण्डु)

क्रिया विभक्ति संक्षिप्त रूप

परस्मैपद विभक्ति

लट् (वर्तमान)

प्र.	अति	अतः	अन्ति
म.	असि	अथः	अथ
उ.	आमि	आवः	आमः

लृट् (भविष्य)

प्र.	इष्यति	इष्यतः	इष्यन्ति
म.	इष्यसि	इष्यथः	इष्यथ
उ.	इष्यामि	इष्यावः	इष्यामः

विशेष :- इष्यति आदि के स्थान पर इ का लोप तथा ष् का स् होकर स्यति आदि रूप भी बनते हैं। सरल संस्कृत व्याकरण में इन परिवर्तनों को वैकल्पिक माना गया है।

लोट् (विधान)

प्र.	तु	ताम्	अन्तु
म.	अ, हि	तम्	त
उ.	आनि	आव	आम्

विधिलिङ् (चाहिये)

प्र.	ईत्	ईताम्	ईयुः
म.	ईः	ईतम्	ईत
उ.	ईयम्	ईव	ईम

अथवा

प्र.	यात्	याताम्	युः
म.	याः	यातम्	यात
उ.	याम्	याव	याम

आशीर्लिङ् (आशीर्वाद)

प्र.	यात्	यास्ताम्	यासुः
म.	याः	यास्तम्	यास्त
उ.	यासम्	यास्व	यास्य

लिट् (परोक्ष भूत)

प्र.	अ	अतुः	उः
म.	(इ) थ	अथुः	अ
उ.	अ	(इ) व	(इ) म

लुट् (अनद्यतन भविष्य)

प्र.	ता	तारौ	तारः
म.	तासि	तास्थः	तास्थ
उ.	तास्मि	तास्वः	तास्मः

लुङ् (सामान्य भूत)

प्र.	त्	ताम्	उः (अन्)
म.	:	तम्	त
उ.	अम्	व	म

अथवा

प्र.	सीत्	स्ताम्	सुः
म.	सीः	स्तम्	स्त
उ.	सम	स्व	स्म

अथवा

प्र.	ईत्	इष्टाम्	इषुः
म.	ईः	इष्टम्	इष्ट
उ.	ईषम्	इष्व	इष्म

लृङ् (अनुबन्ध)

प्र.	स्यत्	स्यताम्	स्यन्
म.	स्यः	स्यतम्	स्यत
उ.	स्यम्	स्याव	स्याम

लङ् (भूत)

प्र.	त्	ताम्	अन्
म.	:	तम्	त
उ.	अम्	व	म

आत्मनेपद विभक्ति

लट्

प्र.	अते	एते	अन्ते
म.	असे	एथे	अध्वे
उ.	ए	आवहे	आमहे

लङ्

प्र.	अत	एताम्	अन्त
म.	अथाः	एथाम्	अध्वम्
उ.	ए	आवहि	आमहि

लोट्

प्र.	अताम्	एताम्	अन्ताम्
म.	अस्व	एथाम्	अध्वम्
उ.	ऐ	आवहै	आमहै

विधिलिङ्

प्र.	एत	एताम्	एरन्
म.	एथाः	एयाथाम्	एध्वम्
उ.	एय	एवहि	एमहि

लृट्

प्र.	स्यते	स्येते	स्यन्ते
म.	स्यसे	स्येथे	स्यध्वे
उ.	स्ये	स्यावहे	स्यामहे

आशीर्लिङ्

प्र.	सीष्ट	सीयास्ताम्	सीरन्
म.	सीष्ठाः	सीयास्थाम्	सीध्वम्
उ.	सीय	सीवहि	सीमहि

लिट्

प्र.	ए	आते	इरे
म.	(इ) से	आथे	(इ) ध्वे
उ.	ए	(इ) वहे	(इ) महे

लुट्

प्र.	ता	तारौ	तारः
म.	तासे	तासाथे	ताध्वे
उ.	ताहे	तास्वहे	तास्महे

लुङ्

प्र.	अत	एताम्	अन्त
म.	अथाः	एथाम्	अध्वम्
उ.	ए	आवहि	आमहि

अथवा

प्र.	स्त	साताम्	सत
म.	स्थाः	साथाम्	ध्वम्
उ.	सि	स्वहि	स्महि

अथवा

प्र.	इष्ट	इषाताम्	इषत
म.	इष्ठाः	इषाथाम्	इध्वम्-इढ्वम्
उ.	इषि	इध्वहि	इष्महि

लृङ्

प्र.	स्यत	स्येताम्	स्यन्त
म.	स्यथाः	स्येथाम्	स्यध्वम्
उ.	स्ये	स्यावहि	स्यामहि

विशेष

वैकल्पिक भूत (लुङ्) में आत्मनेपद के विभक्ति प्रत्यय देखें। इस लकार के तीन वैकल्पिक रूप होते हैं। ऐसा केवल इस एक लकार में ही नहीं है, विभिन्न लकारों तथा अनेक धातुओं में इस प्रकार के अनेक वैकल्पिक रूप बनते हैं। इससे स्पष्ट है कि संस्कृत व्याकरण परम्परा में विकल्पों को मान्यता देने में कितना अधिक लचीलापन स्वीकार्य किया गया है। इसी प्रकार व्याकरण के नियमों की मूल भावना का ध्यान रखते हुए सरल विकल्प अपनाना ही सरल संस्कृत व्याकरण पद्धति का मूल सिद्धान्त है।

ॐ

वाच्य प्रकरण

1. कर्तृ वाच्य

परिचय :- जब किसी वाक्य में कर्ता की प्रधानता होती है तो कर्तृ वाच्य होता है।

वाक्य रचना :- 1. कर्ता में प्रथमा विभक्ति तथा कर्म में (यदि हो) द्वितीया विभक्ति होती है।

उदाहरण :- बालकः पुस्तकम् पठति।

बालक पुस्तक पढ़ता है।

2. कर्म वाच्य

परिचय :- जब वाक्य में कर्म की प्रधानता होती है तो कर्मवाच्य होता है।

वाक्य रचना :- 1. कर्म में प्रथमा विभक्ति तथा कर्ता में तृतीया विभक्ति होती है।

2. धातु के बाद य जोड़कर तब आख्यातिक विभक्ति प्रत्यय लगाते हैं।

3. कर्म वाच्य तथा भाव वाच्य में आख्यातिक विभक्ति प्रत्यय सामान्य क्रियापदों से पृथक् होते हैं।

4. इन आख्यातिक विभक्तियों में आत्मनेपद से बहुत कुछ समानता होती है, परन्तु दोनों में अन्तर भी होता हैं।

उदाहरण :- बालकेन पुस्तकम् पठ्यते।

बालक द्वारा पुस्तक पढ़ी जाती है।

3. भाव वाच्य

परिचय :- जब किसी वाक्य में क्रिया की प्रधानता होती है तो भाववाच्य होता है।

विशेष :- भाव वाच्य में कर्म नहीं होता है।

वाक्य रचना :- 1. भाववाच्य की वाक्य रचना पूर्णतः कर्म वाच्य के ही समान होती है। केवल कर्म नहीं रहता है।

2. क्रिया सदा अन्य पुरुष एक वचन में होती है।

3. क्रिया पद अर्थात् आख्यातिक विभक्ति प्रत्यय कर्म वाच्य वाक्यों के समान होते हैं।

उदाहरण :- बालकेन अनुभूयते।

बालक द्वारा अनुभव किया जाता है।

परस्मैपद तथा आत्मनेपद क्रियायें

परिचय :- धातुओं से क्रियारूप बनाने के लिए आख्यातिक प्रत्यय दो प्रकार के होते हैं। दोनो के अर्थ समान होते हैं। क्रियापद के इन भेदों को परस्मैपद तथा आत्मनेपद कहते हैं।

उदाहरण :- पठ् धातु से वर्तमान काल की क्रिया **पठति** परस्मैपद में है। आत्मनेपद में इसका रूप **पठते** बनता है। दोनो के अर्थ समान हैं।

बोध :- पठ् धातु में अति जोड़ने से परस्मैपद रूप पठति तथा अते जोड़ने पर आत्मनेपद रूप पठते बना है।अति परस्मैपद आख्यातिक विभक्ति है तथा अते आत्मनेपद विभक्ति।

विशेष :- आत्मनेपद क्रियायें कर्म वाच्य तथा भाव वाच्य क्रियापदों का आधार मानी जाती हैं, अतः यहां उनका परिचय आवश्यक है।

कर्म वाच्य व भाव वाच्य क्रियायें

1. कर्म वाच्य तथा भाव वाच्य के क्रियारूपों का आधार आत्मनेपद क्रियायें मानी जातीं हैं, परन्तु इसमें आत्मनेपद के सामान्य रूपों के समान धातु में परिवर्तन नहीं होता है।

2. इस तरह कर्म वाच्य तथा भाव वाच्य के क्रियारूप बनाना सामान्य आत्मनेपद रूपों की अपेक्षा सरल है।

3. धातु के बाद य जोड़कर तब कर्म वाच्य तथा भाव वाच्य के आख्यातिक प्रत्यय लगाते हैं।

पठ् धातु के कर्म वाच्य व भाव वाच्य क्रियारूप

हम यहां उदाहरण स्वरूप पठ् धातु के कर्म वाच्य तथा भाव वाच्य के क्रियारूप लिख रहे हैं।

वर्तमान (लट्)

प्र.	पठ्यते	पठ्येते	पठ्यन्ते
म.	पठ्यसे	पठ्येथे	पठ्यध्वे
उ.	पठ्ये	पठ्यावहे	पठ्यामहे

भविष्यत् (ऌट्)

प्र.	पठिष्यते	पठिष्येते	पठिष्यन्ते
म.	पठिस्यसे	पठिष्येथे	पठिष्यध्वे
उ.	पठिष्ये	पठिष्यावहे	पठिष्यामहे

विशेष भूत (लङ्)

प्र.	अपठ्यत	अपठ्येताम्	अपठ्यन्त
म.	अपठ्यथाः	अपठ्येथाम्	अपठ्यध्वम्
उ.	अपठ्ये	अपठ्यावहि	अपठ्यामहि

अनुबन्ध (ऌङ्)

प्र.	अपठिष्यत	अपठिष्येताम्	अपठिष्यन्त
म.	अपठिष्यथाः	अपठिष्येथाम्	अपठिष्यध्वम्
उ.	अपठिष्ये	अपठिष्यावहि	अपठिष्यामहि

विधान (लोट्)

प्र.	पठ्यताम्	पठ्येताम्	पठ्यन्ताम्
म.	पठ्यस्व	पठ्येथाम्	पठ्यध्वम्
उ.	पठ्यै	पठ्यावहै	पठ्यामहै

विधि (चाहिये, विधिलिङ्)

प्र.	पठ्येत	पठ्येयाताम्	पठ्येरन्
म.	पठ्येथाः	पठ्येयाथाम्	पठ्येध्वम्
उ.	पठ्येय	पठ्येवहि	पठ्येमहि

आशीष (आशीर्लिङ्)

प्र.	पठिषीष्ट	पठिषीयास्ताम्	पठिषीरन्
म.	पठिषीष्ठाः	पठिषीयास्थाम्	पठिषीध्वम्
उ.	पठिषीय	पठिषीवहि	पठिषीमहि

कर्म वाच्य तथा भाव वाच्य प्रयोग

नियम 1 :- कर्म वाच्य तथा भाव वाच्य बनाने के लिए आत्मनेपद आख्यातिक विभक्ति का आधार लिया जाता है, परन्तु दोनों में महत्वपूर्ण अन्तर भी है। अतः उसका बोध होना आवश्यक है।

नियम 2 :- कर्म वाच्य तथा भाव वाच्य में वर्तमान काल (लट्), विधान वाक्य (लोट्), विशेष भूत (लङ्) तथा विधि वाक्य (चाहिये अर्थ में, विधिलिङ्) में धातु में य जोड़ने के बाद विभक्ति प्रत्यय लगाते हैं। इस प्रकार कर्मवाच्य तथा भाववाच्य में पठ् धातु से पठते के स्थान पर रूप **पठ्यते** बनता है।

नियम 3 :- कर्म वाच्य तथा भाव वाच्य भविष्यत् काल (ऌट्) में धातु में सामान्यतः य नहीं लगता है तथा आत्मनेपद कर्तृ वाच्य की भांति स्यते या इष्यते आदि ही लगते हैं।

नियम 4 :- कुछ धातुओं के भविष्यत् काल, आशीष वाक्यों तथा अनुबन्ध वाक्यों में दो प्रकार के वैकल्पिक रूप बनते हैं, जैसे दा धातु से दास्यते, दायिष्यते आदि। दोनो में कोई भी रूप प्रयोग कर सकते हैं।

नियम 5 :- कर्तृ वाच्य साधारण वाक्य होता है। उसमें कर्ता मुख्य होता है और उसमें प्रथमा विभक्ति होती है तथा कर्म में द्वितीया विभक्ति होती है। कर्म वाच्य तथा भाव वाच्य में कर्ता को करण के रूप में व्यक्त किया जाता है और उसमें तृतीया विभक्ति लगती है।

नियम 6 :- कर्म वाच्य में कर्म को कर्ता के रूप में व्यक्त करते हैं और उसमें प्रथमा विभक्ति होती है।

नियम 7 :- भाव वाच्य में कर्ता में तृतीया विभक्ति होती है तथा कर्म नहीं होता है।

नियम 8 :- भाव वाच्य क्रिया अन्य पुरुष, एक वचन में होती है।

नियम 9 :- कर्म वाच्य तथा भाव वाच्य में धातु का वहीं रूप प्रयोग होता है जो भविष्यत् काल में रहता है। कर्तृ वाच्य में वर्तमान या विधान आदि में धातु का रूप कभी-कभी बदल जाता है जैसे गम् धातु से गच्छ् होकर गच्छति रूप बनता है। परन्तु कर्म वाच्य तथा भाव वाच्य में गम्यते ही प्रयोग होता है, गच्छ्यते आदि नहीं। सरल संस्कृत में इसे वैकल्पिक माना जाना चाहिए।

नियम 10 :- कुछ धातुओं का अन्तिम स्वर आ, ए, ओ आदि के स्थान पर ई हो जाता है जैसे दीयते, धीयते आदि। यह नियम वैकल्पिक है तथा सभी धातुओं पर नहीं लगता है। भूयते, गायते, स्नायते, ध्यायते आदि रूप बनते हैं।

नियम 11 :- कुछ धातुओं के बीच का पंचम अक्षर या अनुस्वार हटा देने की भी परम्परा है जैसे बन्ध् से बध्यते, शंस् से शस्यते आदि।

ध्यातव्य :- पंचम अक्षर या अनुस्वार हटाने का यह प्रयोग उचित नहीं प्रतीत होता है क्योंकि यह भ्रम उत्पन्न कर सकता है। शंस् धातु का अर्थ स्तुति करना, प्रशंसा करना है जबकि शस् धातु का अर्थ हिंसा करना है। अतः शस्यते का अर्थ तो हिंसा ही माना जायेगा और यह समझना कठिन होगा कि शस्यते क्रिया रूप शंस् धातु से बना है। अतः शंस्यते ही शुद्ध माना जा सकता है। अतः पंचम अक्षर या अनुस्वार के लोप को अपवाद या विकल्प मानना ही उचित है।

नियम 12 :- वैकल्पिक माने गये अनेक आख्यातिक विभक्तियों अथवा लकारों में कर्म वाच्य तथा भाव वाच्य की क्रियायें भी कर्तृवाच्य के समान हैं। सरल संस्कृत व्याकरण में उनका उपयोग आवश्यक नहीं है।

विशेष

1. परम्परागत व्याकरण में छह लकारों में कर्तृ वाच्य के समान ही कर्म वाच्य तथा भाव वाच्य की भी क्रियायें मानी गयीं हैं, केवल चार लकारों में उनमें परिवर्तन होता है। अतः मूल लकारों तथा वैकल्पिक लकारों का भेद स्पष्ट है।

2. यदि छह लकारों में क्रियायें तीनों वाच्यों में समान हैं तो अन्य चार लकारों में भी समान क्रियायें स्वीकार की जा सकती हैं। यदि यह स्वीकार किया जाये कि वाच्य भेद को व्यक्त करने के लिए क्रिया के रूप में अन्तर रखना आवश्यक है तो मानना पड़ेगा कि छह लकारों के प्रयोग में इस दृष्टि से पुनर्विचार किया जाना आवश्यक है।

3. सरल संस्कृत व्याकरण में वैकल्पिक लकारों का प्रयोग अनिवार्य नहीं है तथा विकल्प को सर्वत्र स्वीकार करने का नियम अपनाया गया है, अतः ऐसी कोई समस्या नहीं होती है। नियम का सर्वत्र पालन तथा विकल्प को इच्छा के अनुसार मानना सरल संस्कृत व्याकरण में महत्वपूर्ण नियम है।

ॐ

समास प्रकरण

परिचय :- नामिक विभक्तियां हटाकर दो पदों को मिलाकर जब एक पद बना दिया जाता है तो उसे समास कहते हैं।

उदाहरण :- गृहस्य पतिः = गृहपतिः।

बोध :- गृहस्य पद से सम्बन्ध कारक षष्ठी विभक्ति प्रत्यय स्य हटा दिया गया है तथा पतिः पद के साथ जोड़कर एक पद गृहपतिः बनाया गया है।

विशेष :- इस प्रकार दो या अधिक शब्दों को मिलाकर बने पद को **समस्तपद** कहते हैं। इस प्रक्रिया को समास कहते हैं।

समास-भेद

व्याकरण में समास के छह भेद माने जाते हैं।

1. अव्ययीभाव
2. बहुब्रीह
3. द्वन्द्व
4. तत्पुरुष
5. कर्मधारय
6. द्विगु

विशेष

1. कर्मधारय तथा द्विगु को तत्पुरुष समास का भेद माना जाता है। इस प्रकार समास के चार भेद ही रह जाते हैं।

2. समास के छह भेद माने जायें या चार, इससे व्यावहारिक दृष्टि से कोई अन्तर नहीं पड़ता है। यह व्याकरणाचार्यों के प्रस्तुतीकरण का ही भेद है।

1. अव्ययीभाव समास

परिचय :- इसमें पहला शब्द उपसर्ग आदि अव्यय तथा दूसरा शब्द संज्ञा होता है तथा दोनो मिलकर अव्यय हो जाते हैं।

उदाहरण :- उपगंगम्

बोध :- इसमें पहला पद उप है जो उपसर्ग है तथा दूसरा पद गंगा है जो संज्ञा है। दोनो मिलकर अव्यय बन गये हैं।

विशेष :- इस प्रकार बना हुआ समस्त पद अव्यय होने से इसमें कोई विभक्ति नहीं जुड़ती है। यह स्वयम् में पद भी होता है। अतः वाक्य में प्रयोग करना सरल होता है।

2. द्वन्द्व समास

परिचय :- द्वन्द्व समास में सभी पद प्रधान होते हैं तथा संयोजक अव्यय च (और) से जुड़े रहते हैं।

उदाहरण :- आहार-निद्रा-भयम्।

बोध :- इस समस्त पद में आहार, निद्रा तथा भय तीनों ही पद प्रधान हैं, अतः यह द्वन्द्व समास है।

विशेष :- द्वन्द्व समास में भी जब सभी पद किसी समूह का बोध कराते हैं अथवा उनमें नित्य सम्बन्ध होता है तो उन सभी को मिलाकर समस्त पद के रूप में सदा नपुंसक लिंग एक वचन पद बनता है। इस प्रकार यह भी वाक्य प्रयोग में अव्यय के समान ही होता है। लिंग तथा वचन निश्चित होने से पद बनाना तथा वाक्य में प्रयोग करना सरल होता है। इस द्वन्द्व समास को समाहार द्वन्द्व समास कहते हैं।

ध्यातव्य :- आहार-निद्रा-भयम् समस्त पद में तीनो ही पद मानव व्यवहार के समूह का बोध करा रहे हैं, अतः यह समाहार द्वन्द्व है तथा एक वचन उभयलिंग में है।

3. बहुब्रीहि

परिचय :- इसमें समस्त पद में आया हुआ कोई भी पद प्रधान नहीं होता है तथा उनसे किसी अन्य की विशेषता प्रकट होती है। इस प्रकार इसमें अन्य पद प्रधान होता है।

उदाहरण :- पीताम्बर समस्त पद में पीत और अम्बर शब्द प्रधान न होकर वह अन्य प्रधान है जो पीत अम्बर को धारण करता है।

बोध :- पीताम्बर शब्द से पीत अम्बर या वस्त्र धारण करने वाले अर्थात् कृष्ण की विशेषता बताकर कृष्ण की प्रधानता सूचित की जा रही है, अतः इसमें बहुब्रीहि समास है।

विशेष :- समस्त पद सामान्य नाम शब्द की भांति प्रयोग होता है। उसे पद बनाने के लिए सामान्य रूप से नामिक प्रत्यय लगते हैं।

4. तत्पुरुष समास

परिचय :- तत्पुरुष समास में उत्तर पद अर्थात् बाद का पद प्रधान होता है। इसमें प्रथम पद बाद के पद की विशेषता बताता है।

उदाहरण :- ग्रामवासी समस्त पद में वासी अर्थात् वास करने वाला प्रधान है तथा प्रथम पद ग्राम उसकी विशेषता बता रहा है।

विशेष :- तत्पुरुष समास में प्रथम पद की नामिक विभक्ति का लोप होता है। इसी आधार पर व्याकरणाचार्यों ने इसके भेद द्वितीया तत्पुरुष, तृतीया तत्पुरुष आदि किये हैं।

5. कर्मधारय समास

परिचय :- प्रथम पद की प्रथमा विभक्ति का लोप होने पर कर्म धारय समास कहा जाता है। इसी को समानाधिकरण तत्पुरुष भी कहते हैं।

विशेष :- इसीलिए कर्म धारय समास को तत्पुरुष का भेद मानते हैं।

उदाहरण :- नीलकमलम् अर्थात् नीलम् कमलम्।

बोध :- यहां पर नीलम् तथा कमलम् में प्रथमा विभक्ति या कर्ता कारक है, अतः कर्मधारय समास है।

6. द्विगु समास

परिचय :- समानाधिकरण तत्पुरुष या कर्मधारय समास में पहला पद संख्यावाची होने पर द्विगु समास होता है।

विशेष :- स्पष्ट है कि यह समास समानाधिकरण तत्पुरुष या कर्म धारय का उपभेद ही है। इसीलिए इस समास को भी तत्पुरुष का भेद मानते हैं।

उदाहरण :- त्रिलोकम्, चतुर्युगम्, पंचगवम् आदि।

बोध :- इनमें पहला पद त्रि, चतुः, पंच संख्यावाची हैं तथा प्रथमा विभक्ति या कर्ता कारक में हैं, अतः द्विगु समास हैं।

विशेष 1 :- इसमें भी समाहार अर्थात् समूह का बोध होने पर समस्त पद एक वचन उभय लिंग में रहता है।

विशेष 2 :- समाहार या समूह का बोध न होने पर यथोचित पुल्लिंग या स्त्रीलिंग होगा।

विशेष 3 :- परम्परागत रूप से इसे द्विगु समास या तत्पुरुष के भेद के रूप में माना जाता है,

विशेष 4 :- इसमें कभी-कभी समास में आये पदों से इतर अन्य पद का बोध भी होता है, अतः इसे बहुब्रीह समास का भेद भी माना जा सकता है।

उदाहरण :- पंचमातुरः अर्थात् पांच माताओं वाला पुरुष।

सप्ताश्वधनः अर्थात् सात अश्वों का धन रखने वाला पुरुष।

व्यावहारिक प्रयोग

नियम 1. समास का प्रयोग सरल पद रचना के लिए कर सकते हैं। विभक्तियों के प्रयोग में इससे सरलता हो सकती है।

नियम 2. अव्ययीभाव समास से समस्तपद अव्यय हो जाता है, अर्थात् उसमें किसी नामिक विभक्ति का प्रयोग करने की आवश्यकता नहीं होती है।

नियम 3. द्वन्द्व समास में सभी पद प्रधान होने के कारण सामान्यतः समस्त पद का वचन पदों की संख्या के अनुसार होता है।

नियम 4. यदि द्वन्द्व समास में सभी पदों का लिंग समान हो तो वही लिंग रहेगा, यदि पदों के लिंग भिन्न हों तो समस्त पद का नपुंसक लिंग होता है।

नियम 5. समाहार द्वन्द्व के रूप में प्रयोग करने पर समस्त पद का प्रयोग एक वचन तथा नपुंसक लिंग में होता है।

नियम 6. व्यावहारिक दृष्टि से समस्त पद में आये पदों को सामान्यतः समूह या समाहार माना जा सकता है क्योंकि किसी रूप में साथ होने पर ही एक समस्त पद के रूप में प्रयोग किया गया होता है।

उदाहरण :- हम कोलकाता-कानपुरम् कह सकते हैं क्योंकि भारत के दो प्रमुख नगरों का समूह होने के कारण समाहार द्वन्द्व हो सकता है।

विशेष :- इस प्रकार समाहार द्वन्द्व के रूप में हमें अनेक पदों का एक पद बनाकर सरलता से प्रयोग करने का एक सरल नियम मिल जाता है जो व्याकरण के अनुसार उचित ही है।

नियम 7. समाहार द्विगु समास में भी समाहार द्वन्द्व का ही नियम प्रयोग होता है।

नियम 8. तत्पुरुष समास के कुछ रूपों में मध्यम पद का लोप हो जाता है। उसे मध्यमपद लोपी तत्पुरुष समास कहते हैं।

उदाहरण :- खेलछात्रः समस्त पद में दक्ष पद का लोप है। इसका अर्थ है खेलदक्षछात्रः।

विशेषः- दैनिक जीवन में संस्कृत भाषा प्रयोग में इस समास के नियम का भी लाभ उठा सकते हैं। व्यवहारिक सरल संस्कृत में यह नियम उपयोगी है।

नियम 9. समास के कुछ ऐसे प्रयोग भी साहित्य में प्रचलित हैं जो व्याकरण में बताये गये नियमों के अनुसार नहीं हैं। ऐसे प्रयोगों को भी मान्यता दे दी गयी है। उनको विपर्यय अथवा मयूरव्यंसकादि तत्पुरुष समास तथा अलुक् तत्पुरुष समास कहते हैं। इसका अर्थ है कि व्याकरण में अपवादों तथा

विकल्प को मान्यता देने की परम्परा है और विवेकपूर्वक इस परम्परा का उपयोग किया जा सकता है।

नियम 10. विपर्यय अथवा मयूरव्यंसकादि तत्पुरुष समास में विशेष्य पहले तथा विशेषण बाद में आता है। सामान्यतः विशेषण पहले तथा विशेष्य बाद में आना चाहिए। व्यंसक मयूर को मयूर व्यंसक कहना इसी का उदाहरण है। राजान्तरम्, ग्रामान्तरम्, चिदेव, जीमूतस्येव आदि इस समास के चर्चित उदाहरण हैं जो नित्य समास भी कहे जाते हैं।

नियम 11. सामान्यतः समास में प्रथम तथा मध्य के पदों की विभक्तियों का लोप हो जाता है। इसके विपरीत कुछ पद ऐसे प्रचलित हैं जिनमें विभक्ति का लोप नहीं होता है। इनको अलुक् तत्पुरुष समास कहते हैं। युधिष्ठिर, खेचर, अन्तेवासी, आत्मनेपदी, परस्मैपदी आदि पद इसके उदाहरण माने जाते हैं। इनमें समास न माने तो भी व्याकरण के अनुसार ये प्रयोग पूरी तरह उचित हैं।

नियम 12. समास के कुछ रूपों में प्रथम पद का लोप हो जाता है और एक पद ही दोनों पदों का अर्थ व्यक्त करता है। पितरौ शब्द इसका बहुप्रचलित उदाहरण है। इसमें मातापितरौ के स्थान पर केवल पितरौ का प्रयोग कर मातापितरौ का अर्थ व्यक्त किया गया है।

विशेष :- सामान्यतः दम्पति जैसे नित्य साहचर्य वाले पदों में ही इस तरह के समास का प्रयोग सम्भव है। इस तरह के प्रयोगों को भी साहित्य में प्रचलित उदाहरण के रूप में ही मानना उचित है। व्यवहार में प्रथम पद का लोप किये विना मातापितरौ कहना या लिखना ही उचित है जिससे अर्थ में भ्रम न हो।

ॐ

सन्धि तथा प्रकृतिभाव

परिचय :- शीघ्रता से उच्चारण करने में कभी-कभी किसी अक्षर के स्थान पर अन्य अक्षर का उच्चारण हो जाता है। इसी विकार या परिवर्तन को सन्धि कहते हैं। जब कोई परिवर्तन नहीं होता है तथा अक्षर यथावत् रहते हैं तो प्रकृतिभाव कहा जाता है।

विशेष :- संस्कृत व्याकरण में कुछ स्थानों पर प्रकृतिभाव को अनिवार्य माना गया है अर्थात् वहां अक्षरों में परिवर्तन करना निषेध है जबकि कुछ स्थानों पर परिवर्तन करना या न करना वैकल्पिक है अर्थात् व्यक्ति की इच्छा पर निर्भर है कि परिवर्तन करे या न करे अर्थात् प्रकृतिभाव रखे।

ध्यातव्य :- इससे इतना स्पष्ट समझ लेना चाहिए कि प्रकृतिभाव ही प्रकृति अर्थात् मूल या प्राकृतिक है। सन्धि के कारण होने वाले विकार वास्तव में असावधानी में हो जाने वाला दोष ही है। कोई दोष बहुत प्रचलित हो जाने पर स्वीकार्य हो जाता है और उसे दोष नहीं माना जाता है, यह स्वाभाविक है। अतः सरल संस्कृत व्याकरण के अनुसार दैनिक प्रयोग में प्रकृतिभाव ही सर्वथा उचित है।

प्रकृतिभाव

परिचय :- निकट आने पर भी जब दो अक्षर यथावत् बने रहते हैं अर्थात् उनमें कोई परिवर्तन नहीं होता है तो संस्कृत व्याकरण में इस अवस्था को प्रकृतिभाव कहते हैं।

विशेष :- व्याकरण में अनेक ऐसे नियम बताये गये हैं जब सन्धि करना अर्थात् सन्धि के नियमों के अनुसार अक्षरों में परिवर्तन करना उचित नहीं माना गया है। सन्धि नियमों को जानने से पहले इन नियमों को जानना अधिक उपयोगी होगा।

प्रकृतिभाव विभाग

प्रकृतिभाव के नियम को मुख्य रूप से दो भागों में विभाजित किया जा सकता है।

1. नित्य प्रकृतिभाव
2. वैकल्पिक प्रकृतिभाव

1. नित्य प्रकृतिभाव

परिचय :- संस्कृत व्याकरण में जब दो अक्षरों के निकट आने पर भी उनमें परिवर्तन करना अनुचित या अशुद्ध माना जाता है तो नित्य प्रकृतिभाव कहा जाता है।

नियम 1. प्लुत शब्द के बाद कोई भी शब्द हो तो दोनों के बीच सन्धि नहीं होती है और नित्य प्रकृतिभाव ही रहता है।

उदाहरण :- हे कृष्ण३, अत्र आगच्छ।

हे कृष्ण, यहां आओ।

नियम 2. द्विवचन शब्दों के बीच भी सामान्यतः प्रकृतिभाव रहता है। विशेष रूप से पूर्व शब्द के अन्त में तथा बाद के शब्द के पूर्व में ई, ऊ, ए होने पर सन्धि नहीं होती है।

उदाहरण :- मुनी इमौ, यमुने अमू, साधू एतौ आदि।

विशेष :- अमी ईशा, अमू आसाते, अहो ईशा आदि अनेक पद प्रकृतिभाव के उदाहरण के रूप में प्रचलित हैं। इनमें सन्धि नियमों के अनुसार कोई परिवर्तन नहीं होता है।

2. वैकल्पिक प्रकृतिभाव

परिचय :- व्याकरण नियमों के अनुसार जब दो अक्षरों के निकट आने पर सन्धि नियमों के अनुसार उनमें परिवर्तन करने या न करने का विकल्प होता है तो वैकल्पिक प्रकृतिभाव कहा जाता है।

विशेष :- इसका अर्थ है कि लोक व्यवहार तथा साहित्य में प्रकृतिभाव तथा सन्धि के अनुसार परिवर्तन कर प्रयोग के विकल्प प्रचलित रहे हैं, अतः दोनो रूपों को मान्यता दी गयी है।

नियम 1 :- पद अथवा विभक्ति के बाद दूसरा पद आये तो उनके बीच सन्धि करने या न करने अर्थात् प्रकृतिभाव रखने का विकल्प होता है।

उदाहरण :- छात्रस्य आचरणम् अथवा छात्रस्याचरणम् लिखना विकल्प से मान्य है। यहां पर सन्धि करना या प्रकृतिभाव रखना दोनो प्रयोग शुद्ध माने जाते हैं।

नियम 2 :- गो शब्द के बाद यदि अ आये तो विकल्प से प्रकृतिभाव होता है।

उदाहरण :- गो अग्रम्, गवाग्रम् दोनो प्रयोग मान्य हैं।

ध्यातव्य :- प्रकृतिभाव नियम का लाभ यह है कि व्यावहारिक जीवन में दो पदों के बीच सन्धि किये विना सरलता से संस्कृत का प्रयोग कर सकते हैं। आधुनिक समाज तथा नवीन विषयों में संस्कृत प्रयोग के लिए ऐसा करना आवश्यक भी है।

सन्धि

परिचय :- संस्कृत भाषा में सामान्यतः एक शब्द या पद में दो स्वर निकट नहीं आते हैं। दो स्वर निकट आने पर दोनो मिलकर दीर्घस्वर या संयुक्त स्वर बन जाते हैं। कई स्थानों पर व्यंजनों में भी परिवर्तन हो जाते हैं। इस परिवर्तन को सन्धि कहते हैं।

विशेष :- इस प्रकार नया शब्द उच्चारण में सुगम तथा सुगठित हो जाता है। अतः सन्धि का प्रयोग नये शब्द बनाने में उपयोगी है। एक वाक्य के सभी पदों को सन्धि कर एक पद जैसा बना देने के जटिल प्रयोगों ने ही संस्कृत को जन सामान्य से दूर कर दिया है। अतः सन्धि को बहुत आवश्यक होने पर ही प्रयोग करना चाहिए, अन्यथा प्रकृतिभाव ही रखना चाहिए।

सन्धि विभाग

सन्धि प्रकरण के तीन विभाग हैं

1. स्वर सन्धि
2. विसर्ग सन्धि
3. व्यंजन सन्धि

1. स्वर सन्धि

परिचय :- संस्कृत में सामान्यतः किसी शब्द में दो स्वर स्वतन्त्र रूप से निकट नहीं रहते हैं। जब दो स्वर निकट होते हैं तो मिलकर दीर्घ या संयुक्त स्वर बन जाते हैं। कभी-कभी स्वर के स्थान पर अन्तस्थ व्यंजन भी आ जाता है। इसे स्वर सन्धि कहते हैं।

विशेष :- अधिकांश संस्कृत शब्दों में दो स्वर निकट नहीं आते हैं, परन्तु इसे नियम नहीं कहा जा सकता है। इसके अपवाद भी हैं तथा वेद में आया हुआ तितउना पद इसका प्रचलित उदाहरण है। हिन्दी में ऐसे अनेक शब्द हैं।

1. दीर्घ स्वर सन्धि

परिचय :- जब लघु या दीर्घ दो समान मूल स्वर मिलते हैं तो उनके स्थान पर दीर्घ मूल स्वर हो जाता है।

उदाहरण :- पीत + अम्बर = पीताम्बर (अ +अ = आ)

हरि + ईश = हरीश (इ + ई = ई)

गुरु + उत्सव = गुरूत्सव (उ + उ = ऊ)

2. संयुक्त स्वर सन्धि

परिचय :- ए, ऐ, ओ, औ को संयुक्त स्वर कहते हैं क्योंकि ये स्वर मूल स्वरों से मिलकर बनते हैं। इनसे सम्बन्धित सन्धि नियमों को संयुक्त स्वर सन्धि कहा गया है।

विशेष :- मूल स्वरों से मिलकर जब संयुक्त स्वर बनते हैं अथवा मूल स्वर

से संयुक्त स्वर मिलकर संयुक्त स्वर बनते हैं तो इसे संयुक्त स्वर सन्धि कहते हैं।

नियम 1 :- जब अ, आ के बाद इ, ई या उ, ऊ आते हैं तो उनके स्थान पर संयुक्त स्वर ए या ओ हो जाता है।

उदाहरण :- जन + इन्द्र = जनेन्द्र (अ + इ = ए)

पद + उन्नति = पदोन्नति (अ + उ = ओ)

नियम 2 :- यदि अ या आ के बाद ए या ऐ आये तो उनके स्थान पर ऐ हो जाता है तथा ओ या औ आये उनके स्थान पर औ हो जाता है।

उदाहरण :- सदा + एव = सदैव (आ + ए = ऐ)

धन + ऐश्वर्य = धनैश्वर्य (अ + ऐ = ऐ)

तण्डुल + ओदन = तण्डुलौदन

जरा + औषधि = जरौषधि

3. अन्तस्थ स्वर सन्धि

नियम 1 :- यदि लघु या दीर्घ मूल स्वर इ, ऋ, ऌ, उ के बाद कोई असमान स्वर आये तो इन स्वरों के स्थान पर उनके समस्थानिक (समान स्थान से उच्चारण किये जाने वाले) अन्तस्थ व्यंजन क्रमशः य, र, ल, व हो जाते हैं।

उदाहरण :- कृति + अपि = कृत्यपि

(इ+अ = य् + अ = य, इ के स्थान पर य् होने पर)

अनु + अय = अन्वय (उ के स्थान पर व् होने पर)

नियम 2 :- जब संयुक्त स्वर के बाद कोई असमान स्वर आता है तो ए के स्थान पर अय्, ओ के स्थान पर अव्, ऐ के स्थान पर आय्, औ के स्थान पर आव् हो जाता है।

उदाहरण :- गो + अम्बर = गवाम्बर

नौ + ऋषि = नावृषि

रै + अपि = रायपि

विशेष :- हम जानते हैं कि संयुक्त स्वर मूल स्वरों से मिलकर बनते हैं तथा इ, ऋ, ऌ, उ के बाद असमान स्वर आने पर वे क्रमशः य्, र्, व् में परिवर्तित हो जाते हैं। वास्तव में इसी मूल नियम से अय्, आय्, अव्, आव् भी बनते हैं।

ए = अ + इ होता है।

इ के स्थान पर य् होगा तो ए के स्थान पर इ से पहले का अ जुड़ने पर अय् हो जायेगा।

ऐ = अ + ए होता है।

इससे ए के स्थान पर अय् होने पर पूर्व का अ जुड़ने पर आय् बनता है।

ऐ = अ + ए

= अ + अ + इ

= अ + अ + य्

= आ + य्

= आय्

विसर्ग सन्धि

परिचय :- विसर्ग को विसर्जनीय भी कहते हैं। इसके बाद कोई स्वर या व्यंजन आने पर इसमें जो परिवर्तन होता है, उसे विसर्ग सन्धि कहते हैं।

नियम 1 :- विसर्ग से पूर्व अ होने पर विसर्ग के स्थान पर सामान्यतः उ हो जाता है। पूर्व का अ तथा विसर्ग के स्थान पर आया उ मिलकर ओ हो जाते हैं।

उदाहरण :- रामः + नाम = रामो नाम।

नियम 2 :- सन्धि होने पर विसर्ग के स्थान पर र्, श्, ष्, स् हो जाते हैं।

उदाहरण :- पुनः + आगमन = पुनरागमन

पुनः + जागरण = पुनर्जागरण

कः + चित् = कश्चित (कश्चित्)

अविः + कार = अविष्कार

नमः + ते = नमस्ते

विशेष :- विसर्ग सन्धि को समझने के लिए व्यावहारिक दृष्टि से इतना पर्याप्त है। मूल नियम यह है कि सन्धि होने पर विसर्ग के स्थान पर उ, र्, श्, ष्, स् हो जाते हैं। किस स्थान पर इन पांच में क्या होगा, इसके लिए परम्परागत व्याकरण में विस्तृत विवेचन किया गया है।

ध्यातव्य

सरल संस्कृत व्याकरण में प्रकृतिभाव भी विकल्प रूप में सर्वत्र स्वीकार्य है, अतः पुनरागमन को पुनः आगमन तथा पुनर्जागरण को पुनः जागरण कहना और लिखना व्यावहारिक दृष्टि से उचित प्रयोग है। अविष्कार तथा नमस्ते जैसे शब्दों को एक शब्द के रूप में सीखा और अपनाया जा सकता है। यदि दुःख की तरह अविष्कार को अविःकार लिख दिया जाये तो भी अनुचित नहीं कहा जाना चाहिए। जैसे दुःख में प्रकृतिभाव है, उसी तरह विसर्ग सन्धि में अन्यत्र भी प्रकृतिभाव हो सकता है।

व्यंजन सन्धि

नियम 1 :- व्यंजन के बाद स्वर आने पर व्यंजन पर उस स्वर की मात्रा लगती है।

उदाहरण :- सत् + ईश = सतीश

नियम 2 :- कभी - कभी स्वर की मात्रा लगने पर व्यंजन में परिवर्तन भी हो जाता है।

उदाहरण :- सत् + इच्छा = सदिच्छा

विशेष :- एक ही शब्द सत् में ई की मात्रा लगने पर प्रकृतिभाव तथा इ की मात्रा लगने पर परिवर्तन हो रहा है। इससे स्पष्ट है कि इस प्रकार के परिवर्तन वैकल्पिक ही हैं। अतः सरल संस्कृत व्याकरण में प्रकृतिभाव को ही मूल माना जाता है तथा परिवर्तन को विकल्प के रूप में मान्यता प्रदान की

गयी है।

नियम 3 :- स्पर्श व्यंजन के स्थान पर बाद वाले व्यंजन के अनुसार अपने वर्ग का उसी स्थान का अक्षर अथवा बाद वाले व्यंजन के वर्ग का अक्षर हो जाता है।

उदाहरण :- जगत् + गुरु = जगद्गुरु

जगत् + नाथ = जगन्नाथ

जगत् + कारण = जगत्कारण

विशेष :- यहां हम देखते हैं कि एक ही शब्द जगत् के बाद गुरु, नाथ तथा कारण आने पर तीन प्रकार से परिवर्तन होते हैं। जगत्कारण में तो प्रकृतिभाव है, अर्थात् कोई परिवर्तन नहीं हुआ है।

ध्यातव्य

व्यंजन सन्धि का विवेचन परम्परागत व्याकरण में बहुत व्यापक तथा जटिल है। इसे अभ्यास से ही सीखा जा सकता है। व्याकरण के विद्वानों की यही मान्यता है कि साहित्य के स्वाध्याय तथा शिष्टजनों अर्थात् विद्वानों के प्रयोगों को देखकर ही उचित प्रयोग समझे जा सकते हैं। अतः उचित यही है कि सन्धि सहित व्याकरण के सभी प्रकरणों के सरल नियम समझ लिये जायें तथा स्वाध्याय तथा विवेक के अनुसार उचित प्रयोग का अभ्यास किया जाये। सरल संस्कृत व्याकरण में प्रकृतिभाव का विकल्प सर्वत्र है। अतः व्यवहार में सन्धि करने की आवश्यकता नहीं है। प्राचीन साहित्य के स्वाध्याय में अभ्यास ही सहायक माना गया है।

ॐ

प्रमुख धातुएं

धातु-अर्थ	प्रेरणार्थक	कर्म–भाववाच्य
अंश् (विभाग करना, बांटना)	अंशयति	अंश्यते
अक् (जाना, टेढ़ा जाना)	अकयति	अक्यते
अगि-अङ्ग (चलना, जाना)	अङ्गयति	अङ्ग्यते
अङ्क् (चिह्नित करना)	अङ्कयते	अङ्क्यते
अञ्च् (जाना, सम्मान करना)	अञ्चयति	अञ्च्यते
अट् (घूमना)	आटयति	अट्यते
अत् (सतत गति करना)	आतयति	अत्यते
अद् (खाना)	आदयति	अद्यते
अन् (जीवित रहना)	आनयति	अन्यते
अय् (जाना)	आययते	अय्यते
अरर् (आरा चलाना)	अररयति	अरर्यते
अर्च् (पूजना)	अर्चयति	अर्च्यते
अर्ज् (पाना, कमाना)	अर्जयति	अर्ज्यते
अर्ह (योग्य होना)	अर्हयति	अर्ह्यते
अव् (रक्षा करना)	आवयति	अव्यते
अश् (खाना)	आशयति	अश्यते
अस् (फेंकना)	आसयति	अस्यते
आन्दोल् (झुलाना, हिलाना)	आन्दोलयति	आन्दोल्यते
आप् (व्यापना, जाना, पहुँचाना)	आपयति	आप्यते
आस् (बैठना)	आसयति	आस्यते

इन्ध् (चमकना)	इन्धयति	इन्ध्यते
इष् (जाना, चाहना)	एषयति	इष्यते
ईक्ष् (देखना)	ईक्षयति	ईक्ष्यते
ईड् (स्तुति करना)	ईडयति	ईड्यते
ईर् (प्रेरणा करना)	ईरयति	ईर्यते
ईर्ष्य् (ईर्ष्या करना)	ईर्ष्ययति	ईर्ष्यते
ईश् (ऐश्वर्य होना, स्वामी होना)	ईशयति	ईष्यते
उदि-उन्द् (भिगोना)	उन्दयति	उद्यते
ऊह (तर्क करना)	ऊहयति	ऊह्यते
ऋ (जाना, जानना, पहुँचाना)	आरयति	अर्यते
ऋछ् (जाना, आना)	ऋच्छयति	ऋच्छ्यते
ऋज् -अर्ज् (कमाना)	अर्जयति	अर्ज्यत
ऋत् (सार्वभौम होना)	ऋतयति	ऋत्यते
ऋष् (जाना, जानना)	ऋषयति,अर्षयति	ऋष्यते
एज् (काँपना)	एजयति	एज्यते
वृध् (बढ़ना)	एधयति	एध्यते
ओज् (बल होना)	ओजयति	ओज्यते
ओण् (दूर ले जाना, हटाना)	ओणयति	ओण्यते
कण्डू (खुजलाना)	कण्डूययति	कण्डूय्यते
कथ् (कहना)	कथयति	कथ्यते
कम् (चाहना)	कामयति	काम्यते
कम्प् (काँपना)	कम्पयति	कम्प्यते
कांक्ष (चाहना)	कांक्षयति	कांक्ष्यते
काश् (चमकना)	काशयति	काश्यते
कास् (खाँसना)	कासयति	कास्यते

कील् (बांधना, गाड़ना)	कीलयति	कील्यते
कु-कव् (शब्द करना, गूँजना)	कावयति	कूयते
कुप् (क्रोध करना)	कोपयति	कुप्यते
कुर्द् (खेलना-कूदना)	कूर्दयति	कूर्द्यते
कूज् (कूजना, चूँ-चूँ करना)	कूजयति	कूज्यते
कृ (करना)	कारयति	क्रियते
कृत् (काटना)	कर्तयति	कृत्यते
कृष् (जोतना)	कर्षयति	कृष्यते
कृत्–कीर्त् (नाम लेना)	कीर्तयति	कीर्त्यते
क्रन्द् (बुलाना, पुकारना)	क्रन्दयति	क्रन्द्यते
क्रम् (चलना)	क्रमयति	क्रम्यते
क्री (खरीदना)	क्रापयति	क्रीयते
क्रीड् (खेलना)	क्रीडयति	क्रीड्यते
क्रुध् (क्रुद्ध होना)	क्रोधयति	क्रुध्यते
क्रुश् (रोना)	क्रोशयति	क्रुश्यते
क्लम् (थकना)	क्लमयति	क्लम्यते
क्लिद् (गीला होना, गीला करना)	क्लेदयति	क्लद्यते
क्लिश् (दुःख देना, खिन्न होना)	क्लेशयति	क्लिश्यते
क्वथ् (उबालना, पकाना)	क्वाथयति	क्वथ्यते
क्षम् (क्षम्, क्षमा करना)	क्षमयति	क्षम्यते
क्षर् (क्षर्, झरना, बहना)	क्षारयति	क्षर्यते
क्षल् (क्षल्, धोना)	क्षालयति	क्षाल्यते
क्षि (क्षि, नष्ट होना)	क्षाययति	क्षीयते
क्षिप् (क्षिप्, फेंकना)	क्षेपयति	क्षिप्यते
क्षीब् (क्षीब्, मस्त होना)	क्षीबयति	क्षीब्यते

क्षुद् (क्षुद्, पीसना)	क्षोदयति	क्षुद्यते
क्षुध् (क्षुध, भूख लगना)	क्षोधयति	क्षुध्यते
क्षुभ् (क्षुभ्, क्षुब्ध होना)	क्षोभयति	क्षुभ्यते
क्षै (क्षै, क्षीण होना)	क्षपयति	क्षायते
खण्ड् (तोड़ना)	खण्डयति	खण्ड्यते
खन् (खोदना)	खानयति	खन्यते
खाद् (खाना)	खादयति	खाद्यते
खिद् (खिन्न होना)	खेदयति	खिद्यते
खेल् (खेलना)	खेलयति	खेल्यते
गण् (मानना, गिनना)	गणयति	गण्यते
गद् (बोलना, कहना)	गादयति	गद्यते
गम् (जाना)	गमयति	गम्यते
गर्ज् (गरजना)	गर्जयति	गर्ज्यते
गर्व् (गर्व करना, हठ करना)	गर्वयति	गर्व्यते
गवेष् (खोजना)	गवेषयति	गवेष्यते
गुञ्ज् (गूंजना)	गुञ्जयति	गुञ्जते
गुण्ठ् (रक्षा करना)	गुण्ठयति	गुण्ठ्यते
गुध् (घेरना, लपेटना)	गोधयति	गुध्यते
गुप् (रक्षा करना)	गोपयति	गुप्यते
गुम्फ् (गूंथना)	गुम्फयति	गुम्फ्यते
गुह् (छिपाना)	गुहयति	गुह्यते
गै (गाना)	गापयति	गीयते
गोम् (लीपना)	गोमयति	गोम्यते
ग्रन्थ् (सङ्ग्रह करना)	ग्रन्थयति	ग्रन्थ्यते
ग्रस् (खाना)	ग्रासयति	ग्रस्यते

ग्रह् (लेना)	ग्राहयति	गृह्यते
ग्लै (ग्लानि होना, दुःखी होना)	ग्लापयति	ग्लायते
घट् (घोटना, यत्न करना)	घटयति	घट्यते
घात् (मारना, हिंसा करना)	घातयति	घात्यते
घुष् (घोषणा करना)	घोषयति	घोष्यते
घूर्ण् (घूमना)	घूर्णयति	घूर्ण्यते
घ्रा (सूँघना)	घ्रापयति	घ्रायते
चर् (चलना)	चारयति	चर्यते
चर्व (चबाना)	चर्वयति	चर्व्यते
चल् (चलना, काँपना, हिलना)	चलयति	चल्यते
चि (चुनना)	चाययति	चीयते
चित् (विचार करना, सोचना)	चेतयति	चित्यते
चित्र् (चित्र बनाना)	चित्रयति	चित्र्यते
चिन्त् (सोचना)	चिन्तयति	चिन्त्यते
चिह्न (चिह्न लगाना)	चिह्नयति	चिह्न्यते
चुद् (प्रेरणा देना)	चोदयति	चोद्यते
चुम्ब् (चूमना)	चुम्बयति	चुम्ब्यते
चुर् (चुराना)	चोरयति	चोर्यते
चूर्ण् (चूर करना)	चूर्णयति	चूर्ण्यते
चूष् (चूसना)	चूषयति	चूष्यते
चेष्ट् (चेष्टा करना)	चेष्टयति	चेष्ट्यते
छद् (ढकना)	छादयति	छाद्यते
छा-छो (कतरना, काटना)	छाययति	छायते
छिद् (छेदना, काटना)	छेदयति	छिद्यते
छुर् (कतरना, काटना)	छोरयति	छुर्यते

जन् (उत्पन्न होना, उत्पन्न करना)	जनयति	जन्यते
जप् (जपना)	जापयति	जप्यते
जल्प् (बोलना, बात करना)	जल्पयति	जल्प्यते
जागृ (जागना)	जागरयति	जागर्यते
जि (जीतना)	जापयति	जीयते
जीव् (जीना)	जीवयति	जीव्यते
जुत् (प्रकाशित होना, चमकना)	जोतयते	जोत्यते
जृम्भ् (जंभाई लेना)	जृम्भयति	जम्भ्यते
जृ (वृद्ध होना)	जरयति	जीर्यते
ज्ञा (ज्ञा, जानना)	ज्ञापयति	ज्ञायते
ज्ञा– ज्ञाप् (ज्ञा, आज्ञा देना)	ज्ञापयति	ज्ञाप्यते
ज्वर् (रोगी होना, ज्वर होना)	ज्वरयति	ज्वर्यते
ज्वल् (प्रकाशित होना, जलना)	ज्वालयति	ज्वल्यते
टंक (बांधना, जोड़ना, टाँकना)	टंकयति	टंक्यते
डी (उड़ना)	डाययति	डीयते
तक्ष् (आच्छादित करना, छीलना)	तक्षयति	तक्ष्यते
तड् (पीटना)	ताडयति	ताड्यते
तन् (बढ़ाना, फैलाना)	तानयति	तन्यते
तन्त्र् (कुटुम्ब पोषण करना, फैलाना)	तन्त्रयति	तन्त्र्यते
तप् (तपना, जलना)	तापयति	तप्यते
तर्क् (तर्क करना, बोलना, सोचना)	तर्कयति	तर्क्यते
तर्ज् (दोष लगाना, भर्त्सना करना)	तर्जयति	तर्ज्यते
तिज् (पैना करना, क्षमा करना)	तेजयति	तिज्यते
तुद् (घाव करना, दुःख देना)	तोदयति	तुद्यते
तुल् (तोलना)	तोलयति	तोल्यते

तुष् (तुष्ट होना)	तोषयति	तुष्यते
तृप् (प्रसन्न होना, तृप्त होना)	तर्पयति	तृप्यते
तृष् (चाहना, प्यासा होना)	तर्षयति	तृष्यते
तॄ (पार जाना, तैरना)	तारयति	तीर्यते
त्यज् (छोड़ना, दान करना)	त्याजयति	त्यज्यते
त्रस् (डरना, पकड़ना, मना करना)	त्रासयति	त्रस्यते
त्रुट् (कतरना, तोड़ना, टूटना)	त्रोटयति	त्रुट्यते
त्वक्ष् (छीलना, बारीक करना)	त्वक्षयति	त्वक्ष्यते
त्वर् (जल्दी करना)	त्वरयति	त्वर्यते
दण्ड् (दण्ड देना)	दण्डयति	दण्ड्यते
दम् (सुलह करना, दमन करना)	दमयते	दम्यते
दम्भ् (ठगना, धोखा देना)	दम्भयति	दम्भ्यते
दय् (दया करना)	दाययति	दय्यते
दरिद्रा (दरिद्र होना)	दरिद्रयति	दरिद्रयते
दशि- दंश्- दश् (डसना)	दंशयति	दश्यते
दह् (नष्ट करना, जलाना)	दाहयति	दह्यते
दा (सौंपना, देना)	दापयति	दीयते
दाप् (काटना)	दापयति	दायते
दिव् (तेजस्वी होना, चमकना)	देवयति	दीव्यते
दिश् (देना, कहना)	देशयति	दिश्यते
दीक्ष् (दीक्षा देना)	दीक्षयति	दीक्ष्यते
दीप् (प्रकाशित होना, चमकना)	दीपयति	दीप्यते
दु (दुःखित होना, जलना, जलाना)	दावयति	दूयते
दुष् (दुष्टाचरण करना, बिगड़ना)	दूषयति	दुष्यते
दुह् (दुहना)	दोहयति	दुह्यते

दृ (आ+, आदर करना)	आदारयति	आद्रियते
दृप् (आनन्दित होना, गर्व करना)	दर्पयति	दृप्यते
दृश् (देखना)	दर्शयति	दृश्यते
दॄ (टुकड़े-टुकड़े करना, फाड़ना)	दारयति	दीर्यते
दो (विभाग करना, काटना)	दापयति	दीयते
द्युत् (द्युत्, चमकना, प्रकाशित होना)	द्योतयति	द्युत्यते
द्रा (नि+) (सोना)	निद्रापयति	निद्रायते
द्रु (अनुसरण करना, जाना)	द्रावयति	द्रूयते
द्रुह् (द्वेष करना, द्रोह करना)	द्रोहयति	द्रुह्यते
द्विष् (द्वेष करना, शत्रुता करना)	द्वेषयति	द्विष्यते
धा (धारण करना, पहनना)	धापयति	धीयते
धाव् (दौड़ना, धोना)	धावयति	धाव्यते
धूप् (गरम करना, तपाना)	धूपाययति	धूपाय्यते
धृ (धारण करना, रखना)	धारयति	धार्यते
धृष् (जीतना, दबाना, घबरा जाना)	धर्षयति	धर्ष्यते
ध्मा (फूंकना, आग सुलगाना)	ध्मापयति	ध्मायते
ध्या-ध्यै (ध्यान करना, विचार करना)	ध्यापयति	ध्यायते
ध्वंस् (नीचे गिरना, नष्ट होना)	ध्वंसयति	ध्वंस्यते
ध्वन् (शब्द करना)	ध्वनयति	ध्वन्यते
नद् (ध्वनि करना, नाद करना)	नादयति	नद्यते
नन्द् (वृद्धि होना, प्रसन्न होना)	नन्दयति	नन्द्यते
नम् (नमस्कार करना, झुकना)	नमयति	नम्यते
नश् (खो जाना, नष्ट होना)	नाशयति	नश्यते
नह् (अड़ाना, बाँधना)	नाहयति	नह्यते
निज् (अपनाना, स्वच्छ करना)	नेजयति	निज्यते

निन्द् (निन्दा करना, दोष लगाना)	निन्दयति	निन्द्यते
नी (पहुंचाना, पाना, ले जाना)	नाययति	नीयते
नुद् (प्रेरणा देना)	नोदयति	नुद्यते
नृत् (नाचना)	नर्तयते	नृत्यते
पच् (पकाना)	पाचयति	पच्यते
पठ् (पढ़ना)	पाठयति	पठ्यते
पण् (खरीदना)	पाणयति	पण्यते
पत् (गिरना, वर्चस्वी होना)	पातयति	पत्यते
पद् (जाना)	पादयति	पद्यते
पर्द् (अपान वायु छोड़ना)	पार्दयति	पर्द्यते
पश् (बाँधना, बेड़ी डालना)	पाशयति	पाश्यते
पा (पीना, रक्षा करना)	पाययति	पायते
पाल् (संरक्षण देना, पालना)	पालयति	पाल्यते
पिष् (चूर्ण करना, पीसना)	पेषयति	पिष्यते
पीड् (पीड़ा करना, दुःख देना)	पीडयति	पीड्यते
पुष् (पुष्ट करना)	पोषयति	पुष्यते
पुष् (पालना)	पोषयति	पोष्यते
पुष्प् (खिलना)	पोष्पयति	पुष्प्यते
पू (पवित्र करना)	पावयति	पूयते
पूज् (पूजना, पूजा करना)	पूजयति	पूज्यते
पूर् (भरना, तृप्त करना)	पूरयति	पूर्यते
प्रच्छ् (पूछना, जानने की इच्छा करना)	प्रच्छयति	पृच्छ्यते
प्रथ् (फैलना, प्रसिद्ध होना)	प्रथयति	प्रथ्यते
प्री (प्रसन्न होना)	प्राययति	प्रीयते
प्री-प्रीण् (प्रसन्न करना)	प्रीणयति	प्रीयते

प्री-प्रीण् (प्रसन्न करना)	प्रीणयति	प्रीणयते
प्लु (जाना, उड़ना, तैरना, कूदना)	प्लावयति	प्लूयते
प्लुष् (भूंजना, जलाना)	प्लोषयति	प्लुष्यते
फल् (उत्पन्न करना, फलना)	फालयति	फल्यते
बध् (बांधना, हिंसा करना)	बाधयति	बाध्यते
बन्ध् (बांधना)	बन्धयति	बन्ध्यते
बाध् (पीड़ा देना)	बाधयति	बाध्यते
बुध् (समझना, जानना)	बोधयति	बुध्यते
भक्ष् (खाना)	भक्षयति	भक्ष्यते
भज् (सेवा करना, भजना)	भाजयति	भज्यते
भञ्ज् (तोड़ना, नष्ट करना)	भञ्जयति	भञ्ज्यते
भण् (स्पष्ट बोलना, कहना)	भाणयति	भण्यते
भर्त्स् (धिक्कार करना, डाँटना)	भर्त्सयति	भर्त्स्यते
भा (चमकना, प्रकाशित होना)	भापयति	भायते
भाष् (बोलना, कहना)	भाषयति	भाष्यते
भास् (दिखना, चमकना)	भासयति	भास्यते
भिक्ष् (याचना करना, मांगना)	भिक्षयति	भिक्ष्यते
भिद् (चीरना, तोड़ना)	भेदयति	भिद्यते
भी (डरना, घबराना)	भाययति	भीयते
भुज् (पालन करना, खाना)	भोजयति	भुज्यते
भू (होना, रहना, उत्पन्न होना)	भावयति	भूयते
भूष् (सजाना, अलङ्कृत करना)	भूषयति	भूष्यते
भृ (पालना, पाना)	भारयति	भ्रियते
भृंश् (गिरना, पतित होना)	भ्रंशयति	भ्रश्यते
भ्रम् (घूमना, इधर उधर घूमना)	भ्रमयति	भ्रम्यते

भ्रज्ज्-भ्रस्ज् (भूनना)	भ्रज्जयति	भृज्ज्यते
भ्राज् (चमकना, प्रकाशित होना)	भ्राजयति	भ्राज्यते
मण्ड् (मण्डित करना, सजाना)	मण्डयति	मण्ड्यते
मथ् (मथना, दुःख देना)	माथयति	मथ्यते
मद् (प्रसन्न होना, तृप्त होना)	मादयति	मद्यते
मन् (मानना, जानना, समझना)	मानयति	मन्यते
मन्त्र् (मन्त्रणा करना)	मन्त्रयति	मन्त्र्यते
मन्थ् (मथना)	मन्थयति	मथ्यते
मज्ञ-मस्ज् (डूबना, स्नान करना)	मज्ञयति	मज्ञयते
मह् (पूजा करना)	माहयति	मह्यते
मा (मापना)	मापयति	माप्यते,मीयते
मान् (शोध करना, आदर करना)	मानयति	मान्यते
मार्ग् (ढूँढ़ना, शुद्ध करना)	मार्गयति	मार्ग्यते
मार्ज् (शब्द करना)	मार्जयति	मार्ज्यते
मिल् (मिलना, संयुक्त होना)	मेलयति	मिल्यते
मिश्र् (मिलाना, एकत्र करना)	मिश्रयति	मिश्र्यते
मिह् (गीला करना, सींचना)	मेहयति	मिह्यते
मील् (आंख मीचना, पलक मारना)	मीलयति	मील्यते
मुच् (छोड़ना, प्रसन्न होना)	मोचयति	मुच्यते
मुद् (प्रसन्न होना, आनन्दित होना)	मोदयति	मुद्यते
मुर्च्छ् (मूर्छित होना, मुरझाना)	मूर्च्छयति	मूर्च्छ्यते
मुष् (चुराना, चोरी करना)	मोषयति	मुष्यते
मुह् (मोह होना, पागल होना)	मोहयति	मुह्यते
मृ (मरना, देहत्याग करना)	मारयति	म्रियते
मृग (ढूँढ़ना, शिकार करना)	मृगयति	मृग्यते

मृज् (मार्जन करना, साफ करना, धोना)	मार्जयति	मृज्यते
म्लै (म्लान होना, थकना)	म्लापयति	म्लायते
यज् (देवपूजा, संगति, दान करना)	याजयति	यज्यते
यत् (यत्न करना, उद्योग करना)	यातयति	यत्यते
यन्त्र् (अपने अधीन रखना)	यन्त्रयति	यन्त्र्यते
यभ् (सम्भोग करना)	याभयति	यभ्यते
यम् (रोकना, प्रतिबन्धित करना)	यमयति	यम्यते
यस् (प्र+) (यत्न करना)	यासयते	यस्यते
या (जाना)	यापयति	यायते
याच् (मांगना)	याचयति	याच्यते
युज् (ध्यान लगाना)	योजयति	युज्यते
युज् (जोड़ना, साथ लगाना)	योजयति	योज्यते
युध् (लड़ना, युद्ध करना)	योधयति	युध्यते
रक्ष् (पालन करना)	रक्षयति	रक्ष्यते
रच् (रचना, बनाना)	रचयति	रच्यते
रञ्ज् (लवलीन होना, प्रसन्न होना)	रञ्जयति	रञ्ज्यते
रट् (बोलना, सम्भाषण करना)	राटयति	रट्यते
रम् (रमना, क्रीडा करना)	रमयति	रम्यते
रस् (स्वाद लेना, शब्द करना)	रसयति	रस्यते
राज् (चमकना, शोभित होना)	राजयति	राज्यते
राध् (पूरा करना, सिद्ध होना)	राधयति	राध्यते
रुच् (आनन्द करना, चमकना)	रोचयते	रुच्यते
रुद् (रोना, रोते रोते कहना)	रोदयति	रुद्यते
रुध् (रोकना, दया करना)	रोधयति	रुध्यते
रुष् (हिंसा करना, मार डालना)	रोषयति	रुष्यते

रुह् (उगना, उत्पन्न होना)	रोहयति	रुह्यते
रूप् (आकार बनाना)	रूपयति	रूप्यते
लक्ष् (देखना, चिह्न करना)	लक्षयति	लक्ष्यते
लग् (चखना)	लगयति	लग्यते
लंघ् (उपवास करना, कम होना)	लंघयति	लंघ्यते
लड् (आनन्द करना, चाहना)	लाडयति	लाड्यति
लभ् (प्राप्त होना, मिलना)	लम्भयति	लभ्यते
लम्ब् (लटकना)	लम्बयति	लम्ब्यते
लष् (चतुर होना, कुशल होना)	लाषयति	लष्यते
लस् (कला कौशल जानना)	लासयति	लस्यते
लस्ज्, लज्ज (लज्जित होना)	लज्जयति	लज्ज्यते
लिख् (लिखना)	लेखयति	लिख्यते
लिंग् (आ+) (आलिंगन करना)	आलिंगयति	आलिंग्यते
लिप् (लीपना)	लेपयति	लिप्यते
लिह् (चाटना, चखना)	लेहयति	लिह्यते
ली (लीन होना, युक्त होना)	लाययति	लीयते
लुट् (कांपना, संयोग करना, बोलना)	लोटयति	लुट्यते
लुड् (बिलोना)	लोडयति	लुड्यते
लुप् (लोप होना, मतिभ्रंश होना)	लोपयति	लुप्यते
लुभ् (लोभ करना, लुभाना)	लोभयति	लुभ्यते
लू (काटना, कतरना, चीरना)	लावयति	लूयते
लोक् (देखना, भाषण करना)	लोकयति	लोक्यते
लोच् (देखना, भाषण करना)	लोचयति	लोच्यते
वच् (बोलना, समझाना)	वाचयति	वाच्यते
वञ्च् (ठगना, फंसाना, जाना)	वञ्चयति	वञ्च्यते

वद् (कहना, समझाना, बोलना)	वादयति	(उद्यते) वद्यते
वन्द् (स्तुति करना, प्रशंसा करना)	वन्दयति	वन्द्यते
वप् (बीज बोना, पैदा करना)	वापयति	(उप्यते) वप्यते
वम् (कै होना, उगलना)	वमयति	वम्यते
वस् (रहना, ओढ़ना, दया करना)	वासयति	(उस्यते) वस्यते
वह् (बहना, झरना, ढोना)	वहयति	(उह्यते) वह्यते
वा (चलना, जाना)	वापयति	वायते
वाञ्छ् (चाहना, इच्छा करना)	वाञ्छयति	वाञ्छ्यते
विद् (जानना, विचार करना, रहना, जीना)	वेदयति	विद्यते
विद् (कहना)	वेदयति	वेद्यते
विश् (भीतर जाना, धंसना)	वेशयति	विश्यते
विष् (व्याप्त होना, फैलना)	वेषयति	विष्यते
वीज् (पंखा हिलाना, पंखे से हवा करना)	वीजयति	वीज्यते
वृ (चुनना, छांटना)	वारयति	व्रियते
वृ (हटाना, ढकना)	वारयति	वार्यते
वृज् (छोड़ना, वर्जित करना)	वर्जयति	वर्ज्यते
वृत् (होना, वर्ताव करना)	वर्तयति	वृत्यते
वृध् (बढ़ना, अधिक होना)	वर्धयति	वृध्यते
वृष् (बरसना, गर्भवती होना)	वर्षयति	वृष्यते
वे (बुनना, बटना)	वाययति	(ऊयते) वेयते
वेप् (काँपना)	वेपयति	वेप्यते
वेष्ट् (घेरना, लपेटना)	वेष्टयति	वेष्ट्यते
व्यथ् (दुःखित होना, क्षुब्ध होना)	व्यथयति	व्यथ्यते
व्यध् (बींधना, मारना, पीटना)	व्याधयति	विध्यते
व्रज् (जाना, घूमना)	व्राजयति	व्रज्यते

शंस् (प्रशंसा करना, स्तुति करना)	शंसयति	शंस्यते
शक् (कर सकना, सहन करना)	शाकयति	शक्यते
शङ्क् (शंक्, शंका करना)	शङ्कयति	शङ्क्यते
शप् (शाप देना, शपथ करना)	शपयति	शप्यते
शम् (शान्त होना, जाहिर करना)	शमयति	शम्यते
शास् (शासन करना, आशा करना)	शासयति	शिष्यते
शिक्ष् (सीखना, सिखाना)	शिक्षयति	शिक्ष्यते
शी (सोना)	शाययति	शय्यते
शुच् (शोक करना, दुःख करना)	शोचयति	शुच्यते
शुध् (शुद्ध होना, पवित्र होना)	शोधयति	शुध्यते
शुभ् (सुन्दर होना, देदीप्यमान होना)	शोभयति	शुभ्यते
शुष् (सूखना)	शोषयति	शुष्यते
शूद् (परिमार्जन करना, संवारना)	शूदयति	शूद्यते
शॄ (मार डालना, पीड़ा करना)	शारयति	शीर्यते
शो (तीक्ष्ण करना, शान धरना, छीलना)	शाययति	शायते
श्रम् (श्रम्-थकना, व्रत करना, श्रान्त होना)	श्रमयति	श्रम्यते
श्रि (श्रि-सेवा करना)	श्राययति	श्रीयते
श्रु (श्रु-सुनना, जाना)	श्रावयति	श्रूयते
श्लाघ् (प्रशंसा करना, फुसलाना)	श्लाघयति	श्लाघ्यते
श्लिष् (आलिंगन, दग्ध करना)	श्लेषयति	श्लिष्यते
श्वस् (श्वांस लेना, जीना)	श्वासयति	श्वस्यते
ष्ठीव् (थूकना)	ष्ठेवयति	ष्ठीव्यते
सञ्ज् (मिलना, आलिंगन करना)	सञ्जयति	सञ्ज्यते
सद् (बैठना, चढ़ाई करना, सूखना)	सादयति	सद्यते
सह् (सहना, सन्तुष्ट होना)	साहयति	सह्यते

साध् (पूरा करना, सिद्ध करना, जीतना)	साधयति	साध्यते
सान्त्व् (धैर्य बंधाना, समाधान करना)	सान्त्वयति	सान्त्व्यते
सिच् (सींचना, प्रोक्षण करना)	सेचयति	सिच्यते
सिध् (पूरा करना)	साधयति	सिध्यते
सिव् (सीना, बीजारोपण करना)	सेवयति	सीव्यते
सु (जन्म देना, उत्पन्न होना, स्नान करना)	सावयति	सूयते
सूच् (सूचना देना)	सूचयति	सूच्यते
सूत्र् (संक्षिप्त करना, सूत से लपेटना)	सूत्रयति	सूत्र्यते
सृ (सरकना, जाना)	सारयति	स्रियते
सृज् (बनाना, छोड़ना, त्याग करना)	सर्जयति	सृज्यते
सेव् (सेवा करना)	सेवयति	सेव्यते
स्खल् (गिरना, जाना, ठोकर लगना)	स्खलति	स्खल्यते
स्तु (स्तुति, पूजा, सेवा करना)	स्तावयति	स्तूयते
स्तॄ (ढकना, फैलाना)	स्तारयति	स्तीर्यते
स्था (रुकना, स्थित होना, ठहरना)	स्थापयति	स्थीयते
स्ना (नहाना, शुद्ध होना)	स्नापयति	स्नायते
स्निह् (स्नेह करना, मित्रता करना)	स्नेहयति	स्निह्यते
स्पन्द् (स्पन्दन करना, जाना)	स्पन्दयति	स्पन्द्यते
स्पर्ध् (स्पर्धा करना)	स्पर्धयति	स्पर्ध्यते
स्पृश् (छूना, अवरोध करना, एकत्र करना)	स्पर्शयति	स्पृश्यते
स्पृह् (चाहना, इच्छा करना)	स्पृहयति	स्पृह्यते
स्फुट् (खिलना, प्रफुल्लित होना)	स्फोटयति	स्फुट्यते
स्फुर् (फड़कना, हिलना, फैलना)	स्फारयति	स्फूर्यते
स्म-स्मि (मुस्कराना)	स्माययति	स्मीयते
स्मृ (सोचना, स्मरण करना)	स्मारयति	स्मर्यते

स्यन्द् (बहना, टपकना, जाना)	स्यन्दयति	स्यन्द्यते
स्रंस् (स्रंस्, सरकाना, गिरना, खिसकना)	स्रंसयति	स्रंस्यते
स्रु (स्रु, टपकना, निकलना, जाना)	स्रावयति	स्रूयते
स्वद् (स्वाद लेना, चखना, प्रसन्न होना)	स्वादयति	स्वाद्यते
स्वप् (सोना, निद्रा लेना)	स्वापयति	सुप्यते
हन् (मारना, जाना, प्राप्त करना)	हानयति(घातयति)	हन्यते
हस् (हँसना)	हासयति	हस्यते
हा (छोड़ना, जाना, चलना)	हापयति	हीयते
हिंस् (हिंसा करना, बध करना, सताना)	हिंसयति	हिंस्यते
हु (देना, खाना, लेना)	हावयति	हूयते
हृ (ले जाना, चुराना)	हारयति	ह्रियते
हृष् (खुश होना, सन्तुष्ट होना)	हर्षयति	हृष्यते
ह्नुस (अप्+) (छिपाना, चुराना)	ह्नावयति	ह्नूयते
ह्रस् (ह्रस्, कम होना, आवाज करना)	ह्रासयति	ह्रस्यते
ह्री (ह्री, लजाना)	ह्रेपयति	ह्रीयते
ह्वे (आ+) (बुलाना, पुकारना)	आह्वाययति	आहूयते

ॐ

अव्यय

अकस्मात्	-	अचानक
अग्रतः	-	आगे, सामने
अग्रे	-	पहले
अंग	-	आदर के साथ सम्बोधन
अचिरम्, अचिरात्, अचिरेण	-	शीघ्र
अजस्रम् (अजस्रम्)	-	निरन्तर
अतएव	-	इसलिए
अतः	-	इसलिए
अतीव	-	बहुत
अत्र	-	यहाँ
अथ	-	मंगल सूचक, आरम्भ सूचक, तब, इसके बाद
अथ किम्	-	हाँ, तो क्या, ठीक है
अद्य (अद्य)	-	आज
अधः, अधस्तात्	-	नीचे
अधिकृत्य	-	बारे में
अधुना	-	अब
अनिशम्	-	निरन्तर
अन्तः	-	भीतर
अन्तरा	-	बीच में
अन्तरे	-	बीच में
अन्तरेण	-	विना
अन्येद्युः (अन्येद्युः)	-	अन्य दिन, किसी दूसरे दिन
अन्यच्च (अन्यत् च)	-	अन्य भी, और भी
अन्यत्र	-	अन्य स्थान पर, दूसरी जगह

अन्यथा	-	अन्य प्रकार से
अपरम्	-	और
अपरेद्युः (अपरेद्युः)	-	दूसरे दिन
अपि	-	भी (शंका, सम्भावना में भी)
अपि च	-	और भी
अभितः	-	चारों ओर, आसपास
अभीक्षणम्	-	निरन्तर
अयि	-	स्नेह व आदर के साथ सम्बोधन
अये	-	आदरपूर्वक सम्बोधन, आश्चर्यबोधक
अरे, अरेरे, रे, रेरे	-	तिरस्कारपूर्वक सम्बोधन
अर्वाक्	-	पहले
अलम्	-	बस, पर्याप्त, व्यर्थ, समर्थ
असकृत्	-	कई बार
असम्प्रति, असाम्प्रतम्	-	अनुचित
अस्थाने	-	अनुपयुक्त, अनवसर
अहह	-	खेद या विस्मयसूचक
अहो	-	सम्बोधन, विस्मयसूचक
आ, आम्	-	हाँ
आः	-	पीड़ा या क्रोध सूचक
आहोस्वित	-	अथवा
आरात्	-	दूर, समीप
इतः	-	यहाँ से
इतस्ततः	-	इधर – उधर
इति	-	इस प्रकार, बस, ऐसा, यह
इतिह	-	इतिहास वाचक
इत्थम्	-	इस प्रकार
इदानीम्	-	इस समय
इव	-	तरह, समान, सदृश, सम्भवतः

इह	-	यहाँ
ईषत्	-	कुछ, थोड़ा
उच्चैः	-	ऊँचे
उत	-	अथवा, या तो, या
उत्तरेण	-	उत्तर की ओर से
उपरि	-	ऊपर
उभयतः	-	दोनों ओर
ऋतम्	-	सार्वभौम नियम, सत्य
ऋते	-	विना
एकत्र	-	एक स्थान पर
एकदा	-	एक समय, एक बार
एकधा	-	एक प्रकार से
एकपदे	-	एक साथ
एतर्हि	-	अब
एव	-	ही
एवम्	-	इस प्रकार, इस तरह
ओम्	-	अनुमति के अर्थ में
कंचित्, कंचन	-	क्या
कथम्	-	कैसे
कथंचन, कथंचित्	-	किसी प्रकार
कथमपि	-	कैसे भी, किसी तरह भी
कदा	-	कब
कदाचित्	-	कभी
कदापि	-	कभी
कदापि न	-	कभी नहीं
कश्चित्	-	कोई, प्रश्नवाचक
कामम्	-	स्वेच्छानुसार, माना कि
किंच (किम् च)	-	और क्या

किन्तु	-	लेकिन
किम्	-	क्या? क्यों?
किम् उत (किमुत)	-	और क्या?
किम्, धिक्	-	धिक्कार-सूचक
किमु, किमुत्, किम् पुनः	-	क्या कहना है
किम् वा (किम्वा)	-	अथवा, या
किल	-	निश्चय ही, सचमुच
कृतम्	-	बस, हो गया
कुतः	-	कहाँ से
कुत्र	-	कहाँ
कुत्रचित्	-	कहीं
केवलम्	-	केवल, मात्र, इतना ही
क्व	-	कहाँ
क्वचित्	-	कहीं
खलु	-	निश्चय ही, शिष्टतापूर्ण प्रश्न में
च	-	और, पारस्परिक सम्बन्ध
चिरम्, चिरेण	-	देर तक
जातु	-	जरा भी, सम्भवतः, कदाचित्
झटिति	-	शीघ्र
तत्	-	तो, वह, इसलिए
ततः	-	उसके बाद, तब, फिर
तत्र	-	वहाँ
ततस्ततः	-	इसके आगे, कहते चलिए
तथा	-	उस प्रकार
तथा हि	-	तो फिर, जैसे (सविस्तार वर्णन)
तथैव	-	उसी तरह
तदा	-	तब
तदानीम्	-	तब

तस्मात्	-	इसलिए
तर्हि	-	तब, तो
तावत्	-	तब तक
तिरः, तिर्यक्	-	तिरछे
तु	-	तो, परन्तु, और अब
तूष्णीम्	-	मौन, चुप
दिवा	-	दिन में
दिष्ट्या	-	भाग्य से, हर्ष सूचक
दिष्ट्या वृध्	-	बधाई
दूरम्	-	दूर
दोषा	-	रात में
द्राक्	-	शीघ्र, तुरन्त
ध्रुवम्	-	निश्चय ही
न	-	नहीं
न केवलम्	-	न केवल, अपि या किन्तु के साथ
नक्तम्	-	रात में
न वरम्	-	किन्तु
ननु	-	निश्चय ही, सम्बोधार्थक
नाना	-	विविध, विभिन्न
नाम	-	नाम वाला, निश्चय ही, सम्भवतः
निकषा	-	निकट
नितराम्	-	अत्यन्त
नीचैः	-	नीच, नीचे
नूनम्	-	अवश्य, निश्चय ही
नो	-	नहीं
परम्	-	परन्तु, फिर
परश्वः	-	परसों
परितः	-	चारो ओर

परेद्युः (परेद्युः)	-	आगामी दिवस
पर्याप्तम्	-	पर्याप्त, काफी
पश्चात्	-	पीछे
पुनः	-	फिर
पुरतः, पुरः, पुरस्तात्	-	आगे, सामने
पुरा	-	पहले
पूर्वेद्युः	-	पहले वाला दिन (बीता कल)
पृथक्	-	अलग-अलग
प्रकामम्	-	पर्याप्त, काफी
प्रतिदिनम्	-	प्रतिदिन, नित्य
प्रत्युत	-	इसके विपरीत
प्रसह्य	-	बलात्, जबरदस्ती
प्राक्	-	पहले, आगे, पूर्व दिशा
प्रातः	-	प्रातः, सुबह, सवेरे
प्रायः	-	प्रायः, बहुधा, अक्सर
प्रेत्य	-	प्रकृष्ट गमन कर, मरकर
बत	-	खेद, दुःख, हर्ष एवं आश्चर्य
बलवत्	-	अत्यन्त, खूब
बलात्	-	बलपूर्वक
बहिः (बहिर्, बहिष्)	-	बाहर
बहुधा	-	प्रायः, बहुत प्रकार से
भूयः	-	बार-बार, फिर-फिर, अधिक
भृशम्	-	बार-बार
भोः	-	आदर के साथ बुलाने में
मनाक्	-	थोड़ा
मा	-	मत, नहीं
मिथः	-	परस्पर
मिथ्या	-	झूठ

मुधा	-	व्यर्थ
मुहुः	-	प्रायः
मुहुर्मुहुः	-	बार-बार
मृषा	-	झूठ, व्यर्थ
यत्	-	जो, कि, क्योंकि
यतः	-	क्योंकि, जहां से
यत् सत्यम्	-	सत्य है, निश्चय ही
यत्र	-	जहाँ
यथा	-	जैसे
यथा-तथा	-	जैसे-तैसे
यथा-यथा	-	जैसे-जैसे
यदा	-	जब
याचत्	-	तो, अभी
यावत्	-	जब तक
यावत् तावत्	-	जब तक तब तक, ज्यों ही त्यों ही
यावद्	-	पहले ही
युगपत्	-	साथ
वत्	-	दया सूचक, खेद सूचक
वरम् न	-	(च, तु, पुनः के साथ) अच्छा है, न कि, समान, सम्भवतः
वा ... वा	-	या तो ... या
विना	-	बगैर, बिना
वृथा	-	व्यर्थ
वे	-	निश्चय
शनैः	-	धीरे
शनैः शनैः	-	धीरे-धीरे
शश्वत्	-	सदा
शान्तम्	-	बस, शान्त हो
श्वः	-	कल (आगामी)

सद्यः (सद्यः) - तत्क्षण, ताजा, अभी का
सर्वथा - सब प्रकार से
सर्वदा - सभी समय, सब दिन
सह, समम्, सार्धम् - साथ
सहसा - अचानक, एकबारगी
सहितम् - सहित, साथ
साकम् - साथ
सकृत् - एक बार
सततम् - निरन्तर, लगातार, बराबर
सदा - प्रत्येक समय, हमेशा
सपदि - तुरन्त, शीघ्र
समन्तात् - चारो ओर
समम् - बराबर-बराबर
समया - निकट
समीपे, समीपम् - निकट
समीचीनम् - ठीक है
सम्प्रति - इस समय, अभी
सम्मुखम् - सामने
सम्यक् - भलीभाँति
सर्वतः - चारो तरफ
सर्वत्र - सब जगह
सहसा - अचानक, हठात्, एकदम
साक्षात् - प्रत्यक्ष, आँखों के सामने
साम्प्रतम् - अब, उचित
सायम् - सन्ध्या, शाम
सार्धम् - साथ
सुष्ठु - अच्छा
स्थाने - न्यायतः, यह सर्वथा उचित ही है

स्वस्ति - कल्याण, आशीर्वाद
स्वयम् - अपने आप
हन्त - हर्ष, आश्चर्य, विषाद सूचक
हम् - क्रोधसूचक
हा, हाहा - शोक, विषाद, आश्चर्य, विस्मय
हि - ही, वस्तुतः, सत्यतः
ही - विस्मयसूचक
हुम् - क्रोधसूचक
ह्यः - कल (बीता हुआ दिन)

कुछ अव्ययों के विविध प्रयोग

च (और)

विशेष :- 1. प्रायः हिन्दी में **और** शब्द जुड़ने वाले दोनों शब्दों के बीच में आता है, जैसे - राम और शिव। संस्कृत में 'च' शब्द जुड़ने वाले प्रत्येक शब्द या सभी शब्दों के उपरान्त आता है।

उदाहरण :- रामः शिवः च अथवा रामः च शिवः च।

3. संस्कृत में च को प्रायः अन्य समुच्चयबोधक शब्दों के अनन्तर भी जोड़ देते हैं।

उदाहरण :- अथच, परंच, किंच।

अथ, अथो, अथ च (तब)

विशेष :- ये शब्द वाक्य के प्रारम्भ में आते हैं।

तु (तो)

विशेष :- यह वाक्य के आदि में नहीं आता है।

उदाहरण :- स तु गतः। वह तो गया।

वा (या)

विशेष :- च की तरह प्रत्येक शब्द के बाद में अथवा सभी शब्दों के बाद आता है। **उदाहरण :-** रामः शिवो वा अथवा रामो वा शिवो वा।

अथवा (या)

विशेष :- इसका प्रयोग भी वा की तरह ही होता है।

चेत्, यदि (यदि, अगर)

विशेष :- सामान्यतः चेत् वाक्य के आरम्भ में नहीं आता है।

इति (ऐसा, बस)

विशेष :- 1. वाक्य के अन्त में समाप्तिबोधक आता है।

उदाहरण :- देवः अवदत्, अहम् गच्छामि इति।

2. इससे हिन्दी में 'कि' का बोध भी होता है।

3. 'कि' का बोध 'यत्' से भी होता है, परन्तु यह वाक्य के अन्त में नहीं आता है, आदि में आता है। **उदाहरण :-** देवः अवदत् यत् अहम् गच्छामि।

विशेष

1. तद्धित शब्दों में **तः, त्र, दा, दानीम्** प्रत्यय वाले शब्द अव्यय होते हैं।
2. **था** प्रत्यय वाले शब्द यथा, तथा आदि अव्यय हैं।
3. दिक् व कालवाचक **पुरः, पश्चात्, उत्तरेण** आदि अव्यय हैं।
4. **धा** प्रत्यय वाले एकधा, द्विधा, त्रिधा आदि अव्यय हैं।
5. **शः** प्रत्यय वाले बहुशः, अक्षरशः, अल्पशः आदि अव्यय हैं।
6. **भूय** प्रत्यय वाले भस्मीभूय, शुक्लीभूय आदि अव्यय हैं।
7. **सात्** प्रत्यय वाले भस्मसात्, ब्रह्मसात् आदि अव्यय हैं।
8. **कृत्वः** प्रत्यय वाले द्विकृत्वः, त्रिकृत्वः और इसके अर्थ में प्रयुक्त द्विः, त्रिः आदि अव्यय हैं।
9. कृदन्त शब्दों में मकारान्त स्मारम् स्मारम् आदि तथा तुम्-प्रत्यय वाले भोक्तुम्, गन्तुम् आदि अव्यय हैं।
10. **अव्ययीभाव** समास वाले शब्द यथाशक्ति, उपगंगम् आदि अव्यय हैं।

ॐ

नित्य व्यवहार शब्द

पुष्प

कचनार	=	कांचनार (काञ्चनार)
कनेर	=	कर्णिकार
कमल (श्वेत)	=	कुमुद, पुण्डरीक, कल्हार
कमल (नील)	=	इन्दीवर, कुवलय
कमल (लाल)	=	कोकनद
कुमुद की लता	=	कुमुदिनी
केवड़ा	=	केतकी
गुलाब	=	आरुणि, आरुण, स्थलकमल
गेंदा	=	गन्धपुष्प, कन्दुकी
चमेली	=	मालती
चम्पा	=	चम्पक
जवाकुसुम	=	जपापुष्प
जूही	=	यूथिका
दुपहरिया	=	बन्धूक
नेबारी	=	नवमालिका
पद्मसमूह	=	नलिनी
पराग	=	पराग, मकरन्द
बेला	=	मल्लिका
मौलसरी	=	बकुल
रात की रानी	=	रजनीगन्धा
हर सिंगार	=	शेफालिका

विद्यालय

अच्छा लेख	=	सुलेख
अध्यापक	=	अध्यापक, शिक्षक, पाठक
उत्तर	=	उत्तर
कक्षा का साथी	=	सतीर्थ्य
कलम	=	कलम, लेखनी
कागज	=	कागद
कापी	=	संचिका
छात्र	=	अध्येता, पठक, विद्यार्थिन् (विद्यार्थी)
छात्रा	=	अध्येत्री, छात्रा
छुट्टी	=	अवकाश
जिल्द	=	प्रावरण
डेस्क	=	लेखन-पीठ
ड्रेस	=	गणवेश
डस्टर	=	मार्जक
पढ़ना	=	पठन
पढ़ाना	=	पाठन
पन्ना, कागज	=	पर्ण, पत्र
पट्टी	=	पट्टिका
पेन	=	लेखनी, लिख
फाइल	=	पत्रावली
बस्ता	=	वेष्टन
ब्लैक बोर्ड	=	श्यामफलक
रजिस्टर	=	पंजिका
रजिस्ट्रार	=	पंजीयक

समय-दिशा-ऋतु

अहोरात्र	=	दिन-रात, अहोरात्र
आधीरात	=	निशीथ
उत्तर	=	उदीची
गरमी	=	ग्रीष्म ऋतु, निदाघ
जाड़ा	=	शीत ऋतु, शीत काल
घण्टा	=	होरा
घड़ी	=	घटिका
दक्षिण	=	दक्षिण
दिन	=	दिन, दिवस
दोपहर	=	मध्याह्न
दोपहर के पहले	=	पूर्वाह्न
दोपहर के बाद	=	पराह्न, अपराह्न
पश्चिम	=	पश्चिम, प्रतीची
पूर्व	=	पूर्व, प्राची
प्रातः	=	प्रातः, प्रभात
बजे (समय)	=	वादन
महीना	=	मास
वर्ष, साल	=	वर्ष
मिनट	=	कला
सप्ताह	=	सप्ताह
समय	=	समय, बेला
सायंकाल	=	सायम्, सायंकाल
सूर्यास्त समय	=	प्रदोष
सेकेण्ड	=	विकला

परिवार–सम्बन्धी

चचेरा भाई	=	पितृव्येय, पितृव्यपुत्र
चचेरी बहन	=	पितृव्येया, पितृव्यपुत्री, पितृव्यभगिनी
चाचा	=	पितृव्य
चाची	=	पितृव्यानी, पितृव्यपत्नी
छोटा भाई	=	अनुज
जमाई (दामाद)	=	जामातृ (जामाता)
जीजा (बहनोई)	=	भगिनीपति, आयुत्त
दादा	=	पितामह
दादी	=	पितामही
देवर	=	देवृ (देवर)
देवरानी	=	यातृ (याता)
ननद	=	ननान्दृ (ननान्दा)
नाती	=	नप्तृ (नप्ता)
नाना	=	मातामह
नानी	=	मातामही
पति	=	पति
पत्नी	=	पत्नी, भार्या
परदादा	=	प्रपितामह
परदादी	=	प्रपितामही
परनाना	=	प्रमातामह
परनानी	=	प्रमातामही
पिता	=	जनक, पितृ (पिता)
पुत्र	=	पुत्र, आत्मज
पुत्री	=	पुत्री, आत्मजा

पोता	=	पौत्र
पोती	=	पौत्री
फुआ (बुआ)	=	पितृष्वसृ (पितृष्वसा)
फूफा	=	पितृष्वसृपति
फुफेरा भाई	=	पैतृष्वस्रीय
बड़ा भाई	=	अग्रज
बहिन	=	भगिनी, स्वसृ (स्वसा)
भतीजा	=	भ्रात्रीय, भ्रातृपुत्रः
भतीजी	=	भ्रातृसुता
भानजा	=	भागिनेय, स्वस्रीयः
भाभी	=	भ्रातृजाया
माता	=	मातृ (माता), जननी
मामा	=	मातुल
मामी	=	मातुली
मौसा	=	मातृष्वसृपति
मौसी	=	मातृष्वसृ (मातृष्वसा)
मौसेरा भाई	=	मातृष्वस्रीय
सगाभाई	=	सहोदर
सगी बहन	=	सहोदरा
समधिन	=	सम्बन्धिनी
समधी	=	सम्बन्धिन् (सम्बन्धी)
सम्बन्धी (रिश्तेदार)	=	ज्ञाति, बन्धुः
ससुर	=	श्वशुर
साला	=	श्याल
सास	=	श्वश्रू
सौतेली माँ	=	विमाता

पात्र

अँगीठी	=	हसन्ती
कटोरा	=	कटोर
कटोरी	=	कटोरा
कड़ाही	=	स्वेदनी, कटाह
काँच का गिलास	=	काचकंस
करछुल	=	दर्वी
गिलास	=	कंस
घड़ा	=	घट, कुम्भ
चम्मच	=	चमस
चिमटा	=	सन्दंश
चूल्हा	=	दहनित्र, अग्निध, उद्ध्मान
टब	=	द्रोणि, द्रोणी
ड्रम	=	प्रद्रोण
तवा	=	ऋजीष
तसला	=	धिषणा
दोना	=	द्रोण
थाली	=	स्थालिका, थालिका
पतीली	=	स्थाली
पत्तल	=	पर्णक, पत्रल
प्याला	=	चषक
प्लेट	=	शराव
फ्राई पैन	=	उखा
बाल्टी (पानी की)	=	उदंचन
लोटा	=	करक

संगीत

उतार	=	अवरोह
कोमलस्वर	=	मन्द्र
ग़ाने वाला	=	गायक
चढ़ाव	=	आरोह
ढिंढोरा	=	डिण्डिम
ढोल	=	पटह
तबला	=	मुरज
तानपुरा	=	तानपूर
तीव्रस्वर	=	तार
तुरही (शहनाई)	=	तूर्य
नगाड़ा	=	दुन्दुभि
नगाड़ा बचाने वाला	=	दुन्दुभि वादक
पियानो	=	पियानो, तन्त्रीय, तन्त्रीवाद्य
बिगुल	=	संज्ञाशंख
बीन	=	वीण, वीणावाद्य
बैंड	=	समाहार, वादित्रगण
मँजीरा	=	मंजीर
मध्यम स्वर	=	मध्य, मध्यस्वर
मजराव	=	कोण
मृदंग	=	मुरज, मृदंग
वादक	=	वादक
सातस्वर	=	सप्तस्वरा
सारंगी (वायलिन)	=	सारंगी
हारमोनियम	=	समाहार

व्यापार

आढ़त, एजेंसी	=	अभिकरण
आढ़ती, एजेंट	=	अभिकर्ता
कमीशन (दलाली)	=	कर्मांश, कर्मशुल्क
ख़रीदार	=	क्रेता, ग्राहक
जुर्माना	=	अर्थदण्ड
टकसाल	=	टकशाला
टकशाला प्रमुख	=	नैक्षिक
तोल	=	तोल
तोलना	=	तोलन
दूकान	=	आपण
दूकानदार	=	आपणिक
द्वारपाल (अर्दली)	=	द्वारपाल, प्रतीहार
फीस	=	शुल्क
बाँट	=	तुलामान
बाजार	=	विपणि
बेचने वाला	=	विक्रेता
बोरा	=	शणपुट
भाव (दर)	=	अर्घ
भाव गिरना	=	अर्घापचिति
भाव चढ़ना	=	अर्घोपचिति
भेंट	=	उपहार
मन्दी	=	मन्दायन
मुनीम	=	पंजीकार, पंजीलेखक
रकम	=	राशि

आभूषण

अँगूठी	=	अंगुलीयक, ऊर्मिका
अँगूठी (नामांकित)	=	मुद्रिका
एक लड़ी का हार	=	एकावली
कंगन	=	कंकण
कण्ठा	=	कण्ठाभरण, कण्ठिका
कनफूल	=	कर्णापूर, कर्णिका
करधनी	=	मेखला, काञ्चि
कान की बाली	=	कुण्डल
गहना	=	अलंकार, आभरण
घुँघरू	=	किंकिणी
चूड़ी	=	वलय
टिकुली	=	ललाटाभरण
नथ	=	छोलिका
नाक का फूल	=	नासापुष्प
पहुँची	=	कटक, आवापक
पाजेव (झाँझ)	=	नूपुर
बाजू बंद	=	केयूर, अंगद
मोती की माला	=	मुक्तावली
लच्छे	=	पादाभरण
सोने का कड़ा	=	कटक
हसुली	=	ग्रैवेयक
हाथ का तोड़ा	=	त्रौटक

कार्य-कार्मिक-कार्यस्थल

इंजीनियर	=	यन्त्री
कंघावाला	=	कंकतकृत्
कहार	=	जलवाह
कारीगर	=	कारुक, शिल्पी
कार्टूनिस्ट	=	परिहासचित्रकार
किसान	=	कृषक
कुम्हार	=	कुम्भकार
कुली	=	भारवाह
क्षत्रिय	=	सैनिक, सुरक्षाकर्मी
गड़रिया	=	अजाजीव
गिरहकट	=	ग्रन्थिभेदक
चोर	=	तस्कर, चौर
जादूगर	=	मायाकार
जुआड़ी	=	द्यूतकार
जुलाहा	=	तन्तुवाय
ठग	=	वंचक
डाकू	=	दस्यु, पाटच्चर
ढिंढोरा पीटनेवाला	=	डिण्डिम
ताम्रबर्तनबनाने वाला	=	शौल्विक
तेली	=	तैलकार, तैलिक
दर्जी	=	सौचिक
धारधरनेवाला	=	शस्त्रमार्ज
नाई	=	नापित, क्षौरिक
नौकर	=	सेवक, भृत्य

नौकरानी	=	सेविका, परिचारिका
पुताई वाला, लेप वाला	=	लेपक
बढ़ई	=	त्वष्टा, स्थपति, तक्षक
बहेलिया	=	शाकुनिक
बाजीगर, मदारी	=	ऐन्द्रजालिक, आहितुण्डिक
ब्राह्मण	=	शिक्षक, उपदेशक
मल्लाह	=	नाविक
भड़भूजा	=	भर्जर, भृंजक
मजदूरी	=	भृति
माली	=	मालाकार
मिस्त्री	=	यान्त्रिक
रंगरेज	=	रंजक
राजन्य	=	राज्यकर्मी, सैनिक, शासक
लौहार	=	लौहकार
वैश्य	=	व्यापारी, व्यवसायी
वेतनभोगी	=	वैतनिक
शाणवाला	=	शस्त्रमार्जक
शिकार	=	मृगया
शिकारी	=	मृगयु, व्याध
शिल्पि संघाध्यक्ष	=	कुलिक
शिल्पी	=	कारु
शूद्र	=	शूद्र, शिल्पी, शोधक, शुचिकार
सिलाई	=	स्यूति
सिलाई का काम	=	सूचिकर्म, सूत्रकर्म (नपुं.)
सुरा विक्रेता	=	शौण्डिक
हलवाई	=	कान्दविक

उपयोगी वस्तु

अलमारी	=	मञ्जूषा
आरा	=	क्रकच
आवा	=	आपाक
ईंधन	=	इन्धन
ईंट	=	इष्टका
उस्तरा	=	क्षुर, क्षुरक
कंघा	=	कंकत
कुर्सी	=	आसन, आसन्दी
कैंची	=	कर्तरी, छेदनी
कोंपल	=	किसलय
कोल्हू	=	रसयन्त्र
खाट	=	खट्वा
चक्की	=	घरट्टः
चप्पल	=	पादुका
चप्पू	=	अरित्र
चाक (कुम्हार का)	=	चक्र
चाकू	=	छुरिका, असिपुत्री
चूड़ी	=	कंकण
छेनी	=	वृश्चन
झाड़ू	=	मार्जनी
टोकरा	=	कण्डोल
डण्ठल	=	वृन्त
ढोल	=	पटह, आनक
दरांती	=	दात्र

धागा	=	सूत्र
धौंकनी	=	भस्त्रा
नगाड़ा	=	दुन्दुभि
निवाड़	=	निवार
नील	=	नीली
पलंग	=	पर्यंक
पेटी	=	पेटिका, मञ्जूषा
प्याला	=	चषक
फर्नीचर	=	पर्यासन
फाइल	=	पर्णी, पर्णिका, पञ्जिका, पञ्जी
फावड़ी	=	खनित्र
बर्मा (बढ़ई का)	=	आविध
बसूला	=	तक्षणी
बहँगी	=	जलवाह, जलानयक
बाँसुरी	=	वंशी, बेणु
बाजा	=	वाद्य (वाद्य)
बुक शेल्फ (रैक)	=	पुस्तकाधान
बेंच	=	पीठासन
बौर	=	वल्लरि
ब्रुश	=	कूर्चिका, वर्तिका
ब्लेड	=	क्षुरक
भाड़	=	भ्राष्ट्र, भूर्जनक
मेज	=	मंच, फलक
मोम	=	द्रावक
रेत	=	सिकता

लकड़ी	=	दारु
लोहे की चादर	=	लौहफलक
शराब	=	सुरा, मदिरा, मद्य
सन्दूक	=	मंजूषा
सीमेंट	=	अश्मचूर्ण
सीढ़ी	=	श्रेणि, निश्रेणि, सोपान
सोफा	=	सुपीठ
हथौड़ा	=	घन, अयोघन

शृंगार

इत्र	=	गन्ध
उबटन	=	उद्वर्तन
ओढ़ने का वस्त्र	=	उत्तरीय
कंघी	=	प्रसाधनी, कंकतिका
काजल	=	अंजन, कज्जल
नेल कटर	=	नखनिकृन्तन
नेल पालिश	=	नखरंजन
बिन्दी	=	बिन्दु
मंगल टीका	=	ललाटिका
मंजन	=	मंजन
महावर	=	अलक्तक
मेंहदी	=	मंजिष्ठा
लिप-स्टिक	=	ओष्ठरंजन
साबुन	=	फेनिल
सिंगारदान	=	शृंगारधान, शृंगारपिटक

युद्ध एवं शस्त्रास्त्र

अश्रुगैस	=	अश्रुजन, धूम्रास्त्र
कवच	=	वर्मन्
काठी	=	पर्याव
कृपाण	=	कृपाण, असि, कौक्षेयक
कोड़ा	=	कशा
खड्ग	=	निस्त्रिंश
गँडासा	=	तोमर
गदा	=	गदा
घुड़सवार	=	अश्वारोही, अश्ववार
चिघाड़	=	चीत्कार
छावनी	=	शिविर
जेल	=	कारा
डेरा	=	निवेश, वासस्थान
तोप	=	तोप, शतघ्नी
धड़	=	कबन्ध
धनुष	=	धनुष्, कोदण्ड, चाप
पताका	=	ध्वज, वैजयन्ती
पनडुब्बी	=	जलमग्नपोत
पिस्तौल	=	पिष्टल, लघुभुशुंडि
पैदल सेना	=	पदाति, पत्ति, पदचारिन्
बन्दूक	=	भुशुंडि
बर्छी	=	शल्य
भाला	=	शूल, प्रास

मस्तूल	=	कूषक
मोर्चा	=	परिवेष्टन
यूनिफार्म	=	समवेश, समपरिधान
रकाब	=	पादधानी
लगाम	=	वल्गा, खलीन (खलीनः, खलीनम्)
हाइड्रोजन बम	=	आद्रजन अस्त्रम्
हाथी का झूल	=	कूथम्

खेल

अम्पायर	=	प्रेक्षक
क्रिकेट	=	क्रिकेट, कृकट
खेल	=	खेल, क्रीड़ा
गेंद	=	कन्दुक
गेंदन्दाज, गेंदबाज	=	कन्दुकी
नेट	=	जाल
फुटबाल	=	पादकन्दुक
बनाम	=	अन्तरे, मध्ये
बैट	=	बैट, पाट, पाटल
मैच	=	क्रीडाद्वन्द्व, स्पर्धा
रन	=	धावांक
रेफरी	=	निर्णायक
विकेट	=	विकेट, विकट
स्टेडियम	=	क्रीडस्थल
हॉकी का खेल	=	हाकी, यष्टिक्रीड

शरीर सम्बन्धी

अँगूठा	=	अंगुष्ठ
आँख	=	लोचन, नेत्र, नयन
आँत	=	अन्त्रम्
अंगुली	=	अंगुलि (तर्जनी, मध्यमा, अनामिका, कनिष्ठा)
ओठ	=	ओष्ठ
ओठ (नीचे का)	=	अधर
कन्धा	=	स्कन्ध
कन्धे की हड्डी	=	जत्रु
कमर	=	कटि
कलाई	=	मणिबन्ध
कलाई से अंगुली तक	=	करम
कलेजा	=	वृक्क
कान	=	कर्ण, श्रोत्र
कोहनी	=	कफोणु
खाल	=	चर्म, त्वक्
खून	=	रक्त, रुधिर, लोहित
गला	=	ग्रीवा, कण्ठ
गाल	=	कपोल
घुटना	=	जानु
चोटी	=	शिखा
छाती	=	उर, वक्ष
जाँघ	=	ऊरु

जिगर	=	यकृत्
ठुड्ढी	=	चिवुक, हनु
तिल्ली	=	प्लीहा
तोंद	=	तुन्द
दाँत	=	दन्त, दशन
दाढ़ी	=	कूर्चम्
नस	=	शिरा
नाक	=	नासिका
नाखून	=	नख, कररुह
नाड़ी	=	नाडि, स्नायु
पलक	=	पक्ष्म
पाँव	=	पद, चरण
पीठ	=	पृष्ठ
पेट	=	उदर
पैर के पीछे की हड्डी	=	गुल्फ
पैर की गिट्ठी	=	गुल्फक
फेफड़ा	=	फुप्फुस
बाँह	=	बाहु, भुज
बाल	=	शिरोरुह, केश
भौं	=	भ्रू
मसूढ़ा	=	दन्तमास
माथा	=	मस्तक, ललाट
मुट्ठी	=	मुष्टि, मुष्टिका
मूँछ	=	श्मश्रु

रीढ़	=	मेरुदण्ड, पृष्ठास्थि
लार	=	लाला
सफेद बाल	=	पलित
सिर	=	शीर्ष, शिर
हड्डी	=	अस्थि
हड्डी की चर्बी	=	मज्जा
हथेली	=	करतल
हाथ	=	हस्त, कर, पाणि

चिकित्सा

अनुपान	=	अनुपान
अम्लता	=	अम्लता
आंव	=	आम
इंजेक्शन	=	सूचीभेद
एड्स	=	ओजक्षय
औषधि	=	ओषध, औषध, औषधि
कब्ज	=	कोष्ठबद्धता
कै	=	वमन
कैंसर	=	कर्करोग
खांसी	=	कास
खून की जांच	=	रक्त परीक्षण
गरमी	=	उपदंश
चेचक	=	शीतला
छींक	=	छिक्का, क्षवथु
जुकाम	=	प्रतिश्याय

टाईफाइड	=	सन्निपातज्वर
दस्त	=	अतिसार
निमोनिया	=	प्रलापकज्वर
पचना	=	पाचन
पथ्य	=	पथ्य
पीड़ा	=	शूल
पीलिया	=	पाण्डु
पेचिस	=	प्रवाहिका, संग्रहणी
प्रमेह	=	प्रमेह
फुंसी	=	पिटिका
फोड़ा	=	स्फोटक
बवासीर	=	अर्शस्
बुखार	=	ज्वर
ब्लड प्रेशर	=	रक्तचाप
मधुमेह	=	मधुमेह
मलेरिया	=	शीतज्वर, विषमज्वर
मोतीझरा	=	मन्थरज्वर
लकवा	=	पक्षाघात
सर्जन	=	शल्यक, शल्यचिकित्सक
सर्जरी	=	शल्य क्रिया, शल्य चिकित्सा
सिरदर्द	=	शिरशूल
हड्डी रोग	=	अस्थिरोग
हैजा	=	विसूचिका

वृक्ष—फल

अंगूर	=	द्राक्षा
अखरोट	=	अक्षोट
अनार	=	दाडिम
अमरूद	=	आम्रल, अमृतफल
आँवला	=	आमलकी
आक	=	अर्क
आड़ू	=	आद्रालु
आम	=	आम्र
आवनूस	=	तमाल
आलूबुखारा	=	आलुक
ककड़ी	=	कर्कटी, कर्कटिका
कच्चा फल	=	शलाटु
कटहल	=	पनस
कमरख	=	कर्मरक्ष
कागजी नीबू	=	नीम्बूक, जम्बीरक
काजू	=	काजव
कैथा	=	कपित्थ
खजूर	=	खर्जूर
खिर्नी	=	क्षीरिका
खीरा	=	चर्भटि, त्रपुष
खुबानी, खुमानी	=	क्षुमानी
खैर	=	खदिर

गूगल	=	गुग्गुल
गूलर	=	उदुम्बर
चकोतरा	=	मधुकर्कटी, मधुजम्बीर
चिरचिटा	=	अपामार्ग
चिरौंजी	=	प्रियाल
चीड़	=	भद्रदारु
जामुन	=	जम्बू
छुहारा	=	क्षुधाहर
ढाक	=	पलाश
तरबूज	=	कालिन्द
ताड़	=	ताल
देवदार	=	देवदारु
धतूरा	=	धत्तूर
नारंगी (संतरा)	=	नारंग
नारियल	=	नारिकेल
नीम	=	निम्ब
पाकड़	=	प्लक्ष
पिस्ता	=	अंकोल
पीपल	=	अश्वत्थ
पोस्ता	=	पौष्टिक
फालसा	=	पुनांग
बड़	=	न्यग्रोध
बड़हल	=	लकुच

बबूर, बबूल	=	करीर, करील
बहेडा	=	विभीतक
बाँझ का पेड़	=	सिन्दूर
बादाम	=	वाताद
बेंत	=	बेतस
बेर	=	बदरी, कर्कन्धु
बेल	=	बिल्व, श्रीफल
मकोय	=	स्वर्णक्षीरी
मखाना	=	मखान्त
महुआ	=	मधूक
मुनक्का	=	मधुरिका
मुसम्मी	=	मातुलुंग
मेवा	=	शुष्कफल
रीठा	=	फेनिल
लिसोड़ा	=	श्लेष्मातक
लीची	=	लीचिका
शरीफा	=	शिंश
शहतूत	=	तूत
शीशम	=	शिंशपा
साल का पेड़	=	साल
सेमर	=	शाल्मली
हर्र (हरड़)	=	हरीतकी

भोजन

अदरक	=	आर्द्रक
अरहर	=	आढ़की
आलू	=	आलु
इमली	=	तिन्तडीफलम्
इलायची	=	एला
उड़द	=	माष
कचौरी	=	पिष्टिका
कच्चा अन्न	=	आमान्न
कटहल	=	पनस
कडुवा	=	कटु
कढ़ी	=	तेमन
कद्दू	=	तुम्बी
करेला	=	कारवेल्ल
करौंदा	=	करमर्दक
कुन्दरू	=	कुन्दरु
कुलफा	=	मेघनाद
कोदो	=	कोद्रव
खट्टा	=	अम्ल
खिचड़ी	=	कृशर
खीरा	=	चर्भटि
गरम मसाला	=	सौरभ
गाजर	=	गृञ्जन
गेहूँ	=	गोधूम
गेहूँ का आटा	=	गोधूमचूर्ण

घी	=	घृत
गोभी	=	गोजिह्वा
चटनी	=	अवलेह
चना	=	चणक
चावल	=	तण्डुल, ब्रीहि
छोटी इलायची	=	त्रिपुटा
जीरा	=	जीरक
जौ	=	यव
ज्वार	=	यवनाल
टमाटर	=	रक्तांग
टिण्डा	=	टिण्डिश
तिल	=	तिल
तोरई	=	जालिनी
दाल	=	दाल, द्विदल
दालचीनी	=	दारुत्वचम
दूध	=	दुग्ध
धनिया	=	धान्यक
नमक	=	लवण
नमक (साँभर)	=	रौमक
नमक (सेंधा)	=	सैंधव
धान	=	धान्य, शालि
पक्का अन्न	=	पक्व अन्न, सिद्ध अन्न
परवर	=	पटोल
पालक	=	पालक्या, पालकी
पीपर	=	पिप्पली

पोदीना	=	अजगन्ध
प्याज	=	पलाण्डु
फुलका	=	पूपला, पोलिका
बथुवा	=	वास्तुक
बाजरा	=	प्रियंगु
बासमती (चावल)	=	वासमती
बैंगन	=	वृन्ताक
भाँटा	=	भण्टाकी
भात	=	भक्त, ओदन
भिण्डी	=	भिण्डक
मकई	=	शस्य
मकोय	=	स्वर्णक्षीरी
मटर	=	कलाय, वर्तुल
मट्ठा	=	तक्र
मसाला	=	उपस्कर
मिर्च	=	मरीच
मुरथा	=	रागखाण्डव
मूँग	=	मुद्ग
मूली	=	मूलक, मूलिका
रसोई	=	पाकशाला
राई	=	राजिका
रायता	=	राज्यक्त
रोटी	=	रोटिका
लहसुन	=	लशुन्
लोभिया	=	वनमुद्ग

लौंग	=	लवंग
लौकी	=	अलाबू
शलगम	=	श्वेतकन्द
सत्तू	=	सक्तु
सरसों	=	सर्षप, तन्तुक
सलाद	=	शद
साग	=	शाक
सावाँ	=	श्यामाक
सिंघाड़ा	=	शृंगाटक
सुपारी		पुंगीफल, पूग
सेम	=	सिम्बा
सोंठ	=	शुण्ठी
सौंफ	=	मधुरा
हल्दी	=	हरिद्रा
हींग	=	हिंग

इतर खाद्य - पेय पदार्थ

अचार	=	सन्धानम्, सन्धितम्
अमचूर	=	आम्रचूर्ण
अमावट	=	आम्रातक
आलू की टिकिया	=	पक्वालु
इमरती	=	अमृती
इलायची	=	एला
कत्था	=	खदिर
कसैला	=	कषाय
काफी	=	कफघ्नी

कुलफी	=	कूलपी
खाजा	=	मधुशीर्ष
खीर	=	पायस
गजक	=	गजक
गुलाब जामुन	=	दुग्धपूपिका
गुझिया	=	संयाव
घेवर	=	घृतपूर
चाट	=	अवदेश
चाय	=	चाय
चीनी	=	शर्करा
चूरन	=	चूर्ण
छाछ (मट्ठा)	=	तक्र
जलपान	=	जलपान
जलेबी	=	कुण्डली, कुण्डलिका
टोस्ट	=	भृष्टापूव
तीक्ष्ण, तीखा, तेज	=	तिक्त
दही	=	दधि
दहीबड़ा	=	दधिवटक
दालमोंठ	=	दालमुद्ग
नमकीन	=	लवणान्न
पकवान	=	पक्वान्न
पकौड़ी	=	पक्ववटी
पपड़ी	=	पर्पटी
पराठा	=	पूपिका
पान	=	ताम्बूल

पापड़	=	पर्पटा
पुलाव (तहरी)	=	पुलाक
पुआ	=	पूप, पीठिका
पूड़े	=	अपूप
पूरी	=	पूलिका, शष्कुली
पेड़ा	=	पिण्ड
पेठा (पेठे की मिठाई)	=	कौष्माण्ड
पेस्टी	=	पिष्टान्न
फेनी	=	फेनिका
बताशा	=	वाताश
बरफी	=	हैमी
बालू शाही	=	मिष्टमण्ठ, मधुमण्ठ
बिस्कुट	=	पिष्टक
भाँग	=	विजया, भंग
मक्खन	=	नवनीत
मलाई	=	सन्तानिका
मिठाई	=	मिष्ठान्न
मालपुआ	=	अपूय, मल्लपूय
मुरब्बा	=	मिष्टपाक
मावा (खोया)	=	किलाट, किलाटिक
मिस्त्री (मिस्री)	=	सिता
रबड़ी	=	कूर्चिका
रसगुल्ला	=	रसगोल
रायता	=	दाधेय, राज्यक्त
लड्डू	=	मोदक

लपसी	=	यवागू
लस्सी	=	दाधिक
शक्करपारा	=	शर्करापाल
समोसा	=	समोष
सेवई	=	सूत्रिका
हलुआ	=	लप्सिका

वस्त्र–बिस्तर

अँगरखा	=	अंगरक्ष, अंगरक्षिका
अँगोछा	=	गात्रमार्जनी
ऊनी	=	ऊर्णक, ऊर्णीय
ओढ़नी	=	प्रच्छद
कनात	=	काण्डपट
कपड़ा	=	वस्त्र, वसन, चीर
कमरबन्द	=	कटिबन्ध, परिकर, कटिसूत्र
कुरता	=	कंचुक, निचोल
कोट	=	प्रावार
गद्दा	=	सन्तर
गलेबन्द	=	गलबन्ध
चप्पल	=	पादुका
चादर	=	छादन, प्रच्छ
जाँघिया	=	अर्धोरुक
जूता	=	उपानह् (उपानत्, उपानद्)
तकिया	=	उपधान
दरी	=	आस्तरण
दुपट्टा	=	उत्तरीय

धोती	=	अधोवस्त्र
नायलोन	=	नवलीन
पगड़ी	=	शिरस्त्र, उष्णीय
परदा	=	यवनिका, अवगुण्ठन
पायजामा	=	पादयाम
पेटीकोट	=	अन्तरीय
पैंट	=	पदीन
ब्लाउज	=	कञ्चुलिका
मरेठा (टोपी)	=	शिरस्क, शिरस्त्राण
मोजा	=	पादत्राण
रजाई	=	तूलिका, नीशार
रुई	=	कार्पास, तूल
रूमाल	=	करचीर
रेशम	=	कौशेय, दुकूल
लोई	=	रल्लक
सलवार	=	स्यूतवर
साड़ी	=	शाटिका
सूती	=	कार्पास, कार्पासेय
स्वेटर	=	ऊर्णावरक

गृह, ग्राम, नगर

अटारी	=	अट्ट
आँगन	=	प्रांगण, अजिर
आम रास्ता	=	जनमार्ग
कच्ची सड़क	=	मृण्मार्ग
कमरा	=	कक्ष, प्रकोष्ठ

किवाड़	=	कपाट
कुटिया, झोपड़ी	=	कुटी
कोठरी	=	कोष्ठ
कोतवाली	=	कोटपालिका
खम्भा	=	स्तम्भ
खिड़की	=	गवाक्ष
खूँटी	=	नागदन्त, नागदन्तक
गली (गैलरी)	=	वीथी, वीथिका
गाँव	=	ग्राम
घर के बाहर चबूतरा	=	अलिन्द
चबूतरा	=	चत्वर
चौड़ी सड़क	=	रथ्या
छज्जा	=	वलभी
छत	=	छदि
टीन	=	त्रपु
टीन की चादर	=	त्रपुफलक
थाना	=	रक्षिस्थान
दीवार	=	भित्ति
देहरी	=	देहली
नाली	=	प्रणालिनी
पक्की सड़क	=	दृढ़मार्ग
परकोटा	=	प्रकोट, प्राकार
पहरेदार	=	यामिक
पार्क	=	पार्क, वाटिका, उद्यान
पोर्टिको	=	प्रवलभी

प्याऊ	=	प्रपा
प्लास्टर	=	प्रलेप
फर्श	=	कुट्टिम
मंजिल	=	तल
मण्डी	=	महाहाट
महल	=	प्रासाद
मुख्य द्वार	=	मुख्यद्वार, गोपुर
मुख्य सड़क	=	मुख्यमार्ग, राजमार्ग
रनिवास	=	अन्तःपुर
वेदी	=	वेदिका
शहर	=	नगर
स्टोर रूम	=	भाण्डागार
हाल	=	महाकक्ष
बही	=	वणिक् पंजिका
बिक्री	=	विक्रय
बिक्रीकर	=	विक्रयकर
ब्याज	=	कुसीद
व्यापारी	=	वणिक्, वणिग्
सलाह	=	परामर्श
साहूकार	=	कुसीदिक
साहूकारी	=	कुसीदवृत्ति, कुसीद
सिक्का	=	मुद्रा
सौदा	=	पण्य
होड़	=	प्रतिद्वन्द्विता

प्राणी

ऊँट	=	उष्ट्र
कठफोड़ा	=	ढार्वाघाट
कनखजूरा	=	कर्णजलौका
कबूतर	=	कपोत
कुतिया	=	शुनी, सरमा
कुत्ता	=	कुक्कुर, श्वा
कोयल	=	कोकिल
कौवा	=	काक
खंजन	=	खंजन
खरगोश	=	शशक
गधा	=	गर्दभ, खर
गाय	=	गो, धेनु
गीदड़	=	शृगाल, गोमायु, मृगाल
गीध	=	गृध्र
गैंडा	=	गण्डक
गौरैय्या	=	चटक, चटका
घोड़ा	=	अश्व, घोटक
चकवा	=	चक्रवाक
चकोर	=	चकोर
चील	=	चिल्ल, चिल्ला
चूहा	=	मूषक
चूही	=	मूषिका
छिपकली	=	गोधिका
टिटीहरी	=	टिट्टिभ, टिट्टिभी

टिड्डी	=	शलभ
ततैया, बर्रे	=	वरटा
तीतर	=	तित्तिरि
तोता	=	शुक, कीर
तेन्दुआ	=	तरक्षु
नेवला	=	नकुल
पपीहा	=	चातक
बगुला	=	बक
बटेर	=	लाव
बतख	=	वर्तक, वर्तिका
बन्दर	=	वानर
बकरा	=	अज
बकरी	=	अजा
बाघ	=	व्याघ्र
बाज	=	श्येन
बिच्छू	=	वृश्चिक
बिल्ला	=	मार्जार
बिल्ली	=	मार्जारी
बैल	=	वृषभ, उक्षन्
भालू	=	भल्लूक, ऋक्ष
भेड़	=	मेष, एडका
भेड़िया	=	वृक
भैंस	=	महिषी
भैंसा	=	महिष
भौंरा	=	भ्रमर
मकड़ी	=	लूता
मधुमक्खी	=	सरघा

मुर्गा	=	कुक्कुट
मुर्गी	=	कुक्कुटी
मैना	=	सारिका
मोर	=	मयूर
लोमड़ी	=	लोमशा
शेर	=	सिंह
सांप	=	सर्प
सुअर	=	शूकर, वराह
हंस	=	हंस, मराल
हाथी	=	हस्तिन्, गज
हिरन	=	हरिण, मृग
हिरन का बच्चा	=	हरिणक

धातु, रत्न आदि

अभ्रक	=	अभ्रक
कांसा (फूल)	=	कांस्य
चाँदी	=	रजत
जर्मनसिल्वर	=	मन्द्र लौह
जस्ता	=	यशद
ताँबा	=	ताम्र
तूतिया	=	तूत्थ
नीलम	=	इन्द्रनील
पन्ना	=	मरकत
पारा	=	पारद
पीतल	=	पीतल, रीति
पुखराज	=	पुष्पराग

मूँगा	=	प्रवाल
मोती	=	मुक्ता, मौक्तिक
लहसुनिया	=	वैदूर्य
सोना	=	स्वर्ण, सुवर्ण
स्टेनलेस स्टील	=	निष्कलंक लोह
हीरा	=	हीरक

विविध शब्द

ऑनरेरी	=	मानद्, अवैतनिक
ऑनेस्ट, ईमानदार	=	सन्निष्ठ
ऑनेस्टी	=	सन्निष्ठा
काफी, एनफ	=	यथेष्ट, पर्याप्त, प्रभूत
खबर, न्यूज	=	समाचार
खेत	=	क्षेत्र, केदार
गुलदस्ता	=	स्तबक
घूस	=	उत्कोच
तैयार	=	सज्जित, सन्नद्ध
तैयारी	=	सज्जा
पड़ोसी	=	प्रतिवेशी
फैक्टरी	=	निर्माणशाला, शिल्पशाला
बौना	=	वामन
मित्र	=	मित्र, सुहृद्, वयस्य
मुकदमा	=	वाद
लगभग	=	समीपतः, आसन्न
शराब घर	=	मद्यस्थान
सखी, सहेली	=	आलि, वयस्या

ॐ

पालीवाल प्रकाशन

द्वारा प्रस्तुत स्वामी शरण कृत साहित्य

1. ओम् साधना **रु. 05.00**

2. शिव-संकल्प **रु. 05.00**

3. वेद सूक्तायन :- चारो वेदों के प्रथम व अन्तिम सूक्तों सहित 15 सूक्तों की पदार्थ तथा अनुवाद सहित प्रामाणिक व्याख्या। मन्त्रों के संहिता पाठ के साथ सन्धियों-संयुक्ताक्षरों से मुक्त सरल छन्दपाठ भी दिया गया है जिससे साधारण हिन्दी जानने वाले भी शुद्ध पाठ कर सकते हैं। **रु. 40.00**

4. सरल संस्कृत व्याकरण :- व्याकरण के मूल तत्वों पर आधारित इस पद्धति से शब्द रूप, धातु रूप रटे बिना एक मास में संस्कृत लिखना व बोलना सीख सकते हैं। तीन दशकों के शोध व प्रशिक्षण अनुभव के बाद प्रस्तुत चमत्कारिक व्याकरण प्रणाली। **रु. 95.00**

5. वैदिक इतिहास :- ब्रह्मा व मनु से आरम्भ कर बुद्ध तक का सम्पूर्ण क्रमबद्ध इतिहास। सूर्यवंश की सवा सौ पीढ़ियों का इतिहास प्रथम बार प्रस्तुत किया है। सूर्यवंश, चन्द्रवंश की शाखाओं सहित मनु से भोज तक सम्पूर्ण वंशावली भी दी गयी है। **रु. 90.00**

6. वैदिक विज्ञान :- सम्पूर्ण वैदिक साहित्य तथा संस्कृति का परिचय। वैदिक साहित्य वेद, वेदांग, उपांग, उपवेद तथा अनुवेद के रूप में वर्गीकृत किया गया है। सनातन धर्म व भारतीय संस्कृति सम्बन्धी संक्षिप्त परन्तु सम्पूर्ण जानकारी एक पुस्तक में अन्यत्र दुर्लभ है। **रु. 40.00**

7. युगबोध :- महात्मा गाँधी के जीवन पर प्रबन्ध काव्य। **रु.40.00**

8. चेतना (कविताएँ) **रु. 40.00**

9. अष्टांग योग परिचय **रु. 05.00**

10. सांस्कृतिक मानव विकासवाद **रु. 05.00**

ॐ

आगामी प्रकाशन

1. यजुर्वेद भाष्य :- सरल पाठ, निष्पक्ष सरल प्रामाणिक अनुवाद, पदार्थ (शब्दार्थ) एवम् भावार्थ-व्याख्या सहित सम्पूर्ण यजुर्वेद का जन सामान्य के लिए उपयोगी संस्करण।

1. सामवेद भाष्य :- यजुर्वेद के समान ही सम्पूर्ण सामवेद का भाष्य।

3. संस्कृत धातुकोश :- पाणिनि तथा काशकृत्स्न प्रोक्त धातुपाठों को समाहित कर सम्पूर्ण धातुकोश तैयार किया गया है। इसकी सहायता से वेद सहित सम्पूर्ण संस्कृत साहित्य का अर्थ किया जा सकता है।

4. वैदिक शब्दकोश :- सभी वैदिक पदों (शब्दों) का धातुज अर्थ दिया गया है।

5. वैदिक जीवन : वैदिक संस्कृति तथा जीवन दर्शन के साथ ही वैदिक साहित्य का सम्पूर्ण परिचय।

6. वेद गीतायन : वेद सूक्तों का काव्यानुवाद।

7. कवितायन :- काव्य संग्रह